राजस्थान-भारती प्रकाशन

हरिरस

भक्ति-ज्ञानामृत भावार्थ-दीपिका

सम्पादक

दीपिकाकार

आ० बदरीप्रसाद साकरिया

सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट, बीकानेर

जिणारी दृढ भक्ति, अमोल शिक्षा नै चरण-रज री

कृपा सू आस्तिक भावना अडिग रही

उणा

परम वदनीय परम पूज

मातु श्री चूनीबाई, पिता श्री फौजराजजी

और

अटल भक्ति नै धर्म-परायणा धर्मपत्नी

श्री रामप्यारी देवी

तथा

विद्या नै धर्मानुरागी, अजस्र प्रेरणा-स्रोत, परम मित्र

श्री रामयश गुप्त

री

पुण्य स्मृति मे

बदरीप्रसाद

तालिका

नाम काण्ड

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ मे बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा सस्कृत, हिन्दी एव विशेषत राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानो एव भाषाशास्त्रियो का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारम्भ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षो से बीकानेर मे विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तिया चलाई जा रही हैं, जिनमे से निम्न प्रमुख है—

१ विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस सम्बन्ध मे विभिन्न स्रोतो से सस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दो का सकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढग पर, लबे समय से प्रारम्भ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ और उदाहरण आदि अनेक महत्त्वपूर्ण सूचनाए दी गई हैं। यह एक अत्यन्त विशाल योजना है, जिसकी सन्तोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारम्भ करना सम्भव हो सकेगा।

२ विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भडार के साथ मुहावरो से भी समृद्ध है। अनुमानत पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी मे अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर सम्पादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विपुल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिये भी एक गौरव की बात होगी।

३ आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का प्रकाशन

इसके अंतर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ कळायण, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता।
२. आभै पटकी, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।
३ वरस गांठ, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४ 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन संभव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अंक ३–४ 'डा० लुइजि पिओ टैसिटोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अंक एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोष है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। इसका अंक १–२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और वृहत् विशेषांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के संबंध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्ताओं के लिये 'राजस्थान-भारती' अनिवार्यतः संग्रहणीय शोधपत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचंद नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसधान, सम्पादन एव प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि की प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियो को सुरक्षित रखने एव सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एव शुद्ध रूप मे मुद्रित करवा कर उचित मूल्य मे वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। सस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रथो का अनुसधान और प्रकाशन सस्था के सदस्यो की ओर से निरतर होता रहा है, जिसका सक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई सस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमे से लघुतम सस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अश 'राजस्थान-भारती' मे प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध सस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती मे प्रकाशित हुए हैं।

७ राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखा) की ७५ रचनाओ की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अक मे प्रकाशित हुई है। उनका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक 'काव्य क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८ राजस्थान के जैन सस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबध राजस्थान-भारती मे प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड क्षेत्र के ५०० लोकगीतो का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एव जैसलमेर क्षेत्र के सैंकडो लोकगीत घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियाँ, और लगभग ७०० लोक कथाएँ सग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पाबूजी के पवाडे और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखो का विशाल सग्रह 'बीकानेर जैन लेख सग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११ जसवंत उद्योत, मुहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।
१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचन्द भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसन्धान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के सम्बन्ध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।
१३ जैसलमेर के अप्रकाशित १ शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।
१४ बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसन्धान किया गया और ज्ञानसागर ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।
१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा. लुइजि पिओ टैस्सिटोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्य गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएं और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि के भी समय-समय पर आयोजन किये जाते रहे हैं।

१६ बाहर से ख्याति प्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल, डा. कैलाशनाथ काटजू, राय श्रीकृष्णदास, डा. जी. रामचन्द्रन्, डा. सत्यप्रकाश, डा. डब्लू. एलेन, डा. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा. तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और प० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, हूडलोद थे ।

इस प्रकार सस्था अपने १६ वर्षों के जीवनकाल में, सस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरतर सेवा करती रही है । आर्थिक सकट से ग्रस्त इस सस्था के लिये यह सम्भव नही हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लडखडा कर गिरते पडते इसके कार्यकर्त्ताओ ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एव प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओ के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरतर चलता रहे । यह ठीक है कि सस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा सदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्यालय को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं, परन्तु साधनों के अभाव मे भी सस्था के कार्यकर्त्ताओ ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर सस्था के गौरव को निश्चित ही बढ़ा सकने वाली होगी ।

राजस्थानी-साहित्य-भडार अत्यन्त विशाल है । अब तक इसका अत्यल्प अ श ही प्रकाश में आया है । प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एव अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनो और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एव उन्हे सुगमता से प्राप्त करना सस्था का लक्ष्य रहा है । हम अपनी इस लक्ष्य पूर्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढ़ता के साथ अग्रसर हो रहे हैं ।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना सम्भव नही हो सका । हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक सशोध एव सांस्कृतिक कार्यक्रम मन्त्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये १५०००) रु० इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशना

हु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है, जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ११ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है।

१	राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२	राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३	अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४	हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५	पदमिनी चरित्र चौपई—	
६	दलपत विलास—	श्री रावत सारस्वत
७	डिंगल गीत—	,, ,,
८	पंवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९.	पृथ्वीराज राठौड़ ग्रंथावली—	श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बदरीप्रसाद साकरिया
१	हरिरस—	श्री बदरीप्रसाद साकरिया
११	पीरदान लालस ग्रन्थावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१२	महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३	सीताराम चौपई—	श्री अगरचंद नाहटा
१४	जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचंद नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५	सदयवत्स वीर प्रबंध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६	जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७	जिनहर्ष कृतिकुसुमांजलि—	,, ,,
१८.	कविवर धर्मवर्द्धन ग्रन्थावली—	श्री अगरचंद नाहटा
१९	राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२	वीर रस रा दूहा—	,,
२१	राजस्थान के नीति दोहे—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२	राजस्थानी व्रत कथाएं—	,, ,,
२३	राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,,
२४	चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५. महुली— श्री अगरचंद नहाटा और म विनय सागर

२६. जिनहर्ष ग्रंथावली श्री अगरचद नाहटा

२७. राजस्थानी हस्त लिखित ग्र थों का विवरण ,, ,,

२८ दम्पति विनोद ,, ,,

२९ हीयाली–राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य ,, ,,

३०. समयसुन्दर रासत्रय श्री भंवरलाल नाहटा

३१. दुरसा आढा ग्र थावली श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन सग्रह (सपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रथावली (सपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्ध न शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचद नाहटा), नागदमण (सपा० बदरीप्रसाद साकरिया) मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रथो का सपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नही हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एव गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त सपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रथो का प्रकाशन सभव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षा विकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मजूर की।

राजस्थान के मुख्य मत्री माननीय मोहनलालजी सुखाडिया, जो सौभाग्य से शिक्षा मंत्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एव पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अत. हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्ध न किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। सस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है उसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यन्त आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व. पूर्णचन्द नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ौदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ बृहद् ज्ञान भंडार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बड़ौदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं. हरिदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रंथों का संपादन सम्भव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छतः स्खलनंक्वापि भवत्येव प्रमादतः हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुनः मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुनः उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मंत्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
संवत् २०१७
दिसम्बर ३, १९६०

हरिरस का काव्य-सौन्दर्य

श्री ईसरदासजी राजस्थान के प्रमुख भक्तों मे से एक हैं। इनकी अधिकांश रचनाओ मे प्रभु का गुणगान किया गया है। हरिरस' इनका सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रन्थ है। राजस्थान और गुजरात में हजारो व्यक्ति आज भी इस रचना का दैनिक पाठ करत हैं। इसका मूल कारण 'हरिरस' का आध्यात्मिक महत्त्व है। कवि का अनन्य भक्ति भाव और भगवद्-स्वरूप देखकर ही 'ईसरा-परमेसरा' कथन सदियो से प्रचलित है। भक्ति काल मे जिन कवियो ने मानव-चेतना को उद्‌बुद्ध कर उसकी आस्था और विश्वास को दृढ बनाया तथा सृष्टि के विभिन्न रूपो में अपने प्रभु के ही दर्शन किये, उनमें ईसरदासजी का स्थान महत्व पूर्ण है।

यों तो 'हरिरस' कथा-विहीन एक मुक्तक रचना प्रतीत होती है, पर उसका सूक्ष्म अध्ययन करने स विदित होता है कि कवि ने उसका निर्माण निश्चय ही एक विशेष उद्देश्य को समक्ष रख कर क्रमबद्ध रूप में किया है। चाहे ग्रन्थ के विभिन्न रूपों मे पाठान्तर हो चाहे उसकी हस्तलिखित और प्रकाशित प्रतियो के पद्यो में क्रम न हो, पर इसमें कोई सन्देह नही कि कवि ने इसमे ३६० छन्द लिखे हैं जिसका उल्लेख उसने ग्रन्थ के अन्तिम दोहे में किया है।

हरिरस' का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कवि ने सर्व प्रथम तो ईश्वर के एक मात्र आधार होने का उल्लेख चमत्कारिक ढंग से किया है। अन्तरिक्ष से बिछुडने पर तो प्राणियों को यह धरती धारण करती है पर जब वे इस धरा से जाते हैं तब तो धरणीधर के अतिरिक्त उनका और कोई आश्रय नहीं होता—

आभ बिछूटा मांणसां, है धर झल्लणहार।
धरणीधर! धर छंडतां, असही तू आधार॥

अतः संसार छोड़ने पर तो भगवान से ही काम पड़ेगा यह सोच कर कवि निश्चय कर लेता है कि वह भविष्य में उसी की आराधना करेगा —

नारायण ! हौं तुम शरण इस कारण हरि ! प्रगट ।
जिन की जो जग हारहीं, तिन की तोहू लज्ज ॥

इस निश्चय को लेकर अपने कर्म बन्धनों से मुक्त होने के लिए वह इस हरिरस ग्रन्थ में भगवान के पावन चरित्रों का वर्णन करता है—

माधुरा करम लेखा मामव
जन ही कथित तुम्हारा लेखव
नाम तुम्हारो हौं अन्तर्यामी
लागो लाग संसारित स्वामी ।

ग्रन्थ का प्रारम्भ मंगलाचरण से होता है। कवि ने सरस्वती और गणेश की वन्दना करते हुए उनसे ईश्वराराधन के लिए सद्बुद्धि का वरदान मांगा है। इसके बाद वह अपने गुरु श्री पीताम्बरदासजी के चरणों में वन्दना करता है जिनकी कृपा से कवि को भागवत का परमानन्दकारी रहस्य ज्ञात हुआ—

सदा हौं वहता लड्डे पीताम्बर गुरु पाय ।
भेद महारस भागवत पायो जैसा पसाय ॥

जिस प्रकार तुलसी ने कलियुग के अत्याचारों से पीड़ित होकर राम के दरबार में 'विनय पत्रिका' प्रस्तुत की उसी प्रकार ईसरदासजी ने भी अपने प्रभु से अचल भक्ति मांगते हुए अपने कर्मों के नाश के लिए हरिरस में भगवान के चरित्रों का वर्णन किया है। भगवान के जिन चरित्र का वर्णन करने में वेद-उपनिषद् भी असमर्थ रहे और अन्त में 'नेति नेति' कह कर अपनी असमर्थता प्रकट की उन भगवान के चरित्रों का पार पाना कवि के लिए भी असंभव है। वह मानता है कि सारी धरती को पाटी बनाकर उस पर सहस्रों भगवान के चरित्रों को लिखें तो भी पार नहीं पाया जा

सकता–

पीठ धरण घर पाटलो, हर-उत लेखण हार।
तव तोरा चरितां तणों, परम न लम्भै पार ॥

इसी भाव को कबीर ने अपनी एक साखी में इस प्रकार व्यक्त किया है–

सात समद की मसि करौं, लेखनि सब बनराय।
धरती सब कागद करौं, हरि गुण लिख्या न जाय ॥

ईसरदासजी के कथन में यह विशेषता है कि उन्होंने देवताओं में 'शीघ्र-लिपि-विशारद' गणेशजी को 'लेखणहार' बनाकर उनकी भी असमर्थता दिखायी है।

यों तो कवि प्रधानत सगुणोपासक है पर उसने तुलसी जैसी समन्वयात्मक दृष्टि अपनाकर निर्गुण ब्रह्म का भी वर्णन किया है। भगवान अनन्त पराक्रम वाले हैं। उनका न आदि है न अन्त। उनकी न कोई रूपरेखा है न शरीर और वेश–

अनत पराक्रम तू ज अनत
नहीं तुझ आद नहीं तुझ अत
नहीं तुव रूप नहीं तुझ रेख
नहीं तुव वप्प नहीं तुव वेस।

श्वेताश्वेतरोपनिषद् (३/१९) में कहा गया है कि परब्रह्म परमात्मा सब इन्द्रियों से रहित होते हुये भी सब इन्द्रियों के विषयों को जानते हैं–

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता
पश्यत्यचक्षु स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्य न च तस्यास्ति वेत्ता
तमाहुरग्र्य पुरुष महान्तम् ॥

इसी को ईसरदासजी ने यों कहा है–

ग्रहे विण पाण अपाव गवन्न
अलेखत रूप सोहो अनमन्न

मुनेस मच्छ बित पंतर मंम
प्रचंड महाबल तेज-प्रपुंज ।

भक्त-प्रवर ईसरदासजी ने प्रधान रूप से ईश्वर के सगुण रूप का ही वर्णन किया है पर किसी रूप या अवतार विशेष के प्रति उनका आग्रह नहीं है। उन्होंने भगवान के सभी अवतारों के चरित्रों का गुणगान किया है। मध्ययुग के वातावरण में राम और कृष्ण की भक्ति ही मुख्य रूप से प्रचलित थी। अतः स्वाभाविक है कि ईसरदासजी ने भी राम और कृष्ण के अवतारों की महिमा का वर्णन बार बार किया है—

नमो रघु रांमण मारण रांम
नमो किम सिद्ध बलीबल कांम
नमो जग्ग रूप निरंजन नंत
नमो अवतार नमो अनुवंत ।

कवि ने भगवान के भक्त-वत्सल रूप पर ही अधिक जोर दिया है ।

भक्त के लिए नाम-स्मरण भक्ति-प्राप्ति का एक बहुत बड़ा साधन है। राम का नाम लेने से सर्व प्रकार के भय मिट जाते हैं और सर्वस्व कार्य भी संपूर्ण हो जाता है। इससे बैकुण्ठ प्राप्ति सरल हो जाती है और जन्म-यातना से छुटकारा मिल जाता है—

प्रगट नांम परताप बास बैकुंठ बतावो
प्रगट नांम परताप तूट जम त्रास मिटावो ;
प्रगट नांम परताप जड़ जावे चौरासी
प्रगट नांम परताप करे नर ह्वे अविनासी,
रांम रो नांम भाखी रहे तारू पाथर तरे
पर प्रेम ईसर लंक पर, क्यूं रांम गुण उच्चरे ।

मनुष्य जो मातृ गर्भ में अनेक प्रकार के कष्ट सहकर जब जन्म लेता है तो वह ईश्वर को भूल जाता है। ज्यों ज्यों वह बड़ा होता है

त्यों त्यों उसकी सांसारिक आसक्ति बढ़ती जाती है। गृहस्थी के जजाल मे फंसकर वह परम स्वरूप को विस्मृत कर देता है। यदि अब भी वह भगवान का ध्यान करले और भगवान का नाम ले तो अच्छा है–

मात उदर नव मास रुदत ऊंधै सिर रहियो।
तद पायो नर तन, सकटां पूरण सहियो॥
पसू जेम रहि पेट सोग मळ मूत्र सु खायो।
भज्यो नहीं भगवान गाढ सुख मूळ गमायो॥
जगदीस भजन जाण्यो नहीं धायो घर घर्घो घरै।
घर ध्यान ईसरा सक घर, अजौं राम मुख ऊचरै॥

मानव-देह पाकर उसकी सार्थकता कवि इसी मे मानता है कि सब अग भगवान की सेवा में प्रतिपल निरत रहे। इसीलिए वह भगवान को वन्दन करने मे मस्तक की, गुण श्रवण करने मे कानो की, भगवान के दर्शन करने मे नेत्रो की, गुण-गान मे वाणी की और भगवान के आगे नाचने मे चरणो की पवित्रता मानता है–

मस्तक पवित्र करिस मधुसूदन
वंदे चरण तूझ जगवदन
स्रवण निपाप करिस इम सामी
गुण तुझ कथा सुणे घणनामी।
नयण निपाप करिस नारायण
पेख रूप तुझ भक्त-परायण
रसणा पवित्र करिस इम राघव
भणे तूझ गुण तारण-भव-भव।
चरण पवित्र हों करिस चत्रभुज
त्रिगुणनाथ नाचो आगळ तुझ

जीव को भगवान की ओर उन्मुख करने के लिए उसे ससार

की नश्वरता का ज्ञान होना आवश्यक है। कवि कहता है कि संसार का संहार करने के लिए काल तैयार खड़ा है अतः निरन्तर भगवान का स्मरण करते रहना चाहिए:—

नर ! हर बीसरजे नहीं आतम सूं परमाण।
काळ तणउ जम कारणा कस ऊभो केवाण ॥

'हरिरस' भक्ति प्रधान ग्रन्थ है पर कवि ने उसमें कर्मों के सम्बन्ध में भी अपने विचार प्रकट किये हैं। आदि अन्त की ओर देखते हुए उसे संशय होता है कि भगवान ने प्रथम जीवों की रचना की अथवा कर्मों की —

आद उपो कीतो अरथ आई पुन न पाप।
पहला जीव उपाड़ीया किया कि पहला क्रम ॥

ऐसे यह तो निश्चय है कि आदि में समस्त प्राणी भगवान से ही उत्पन्न हुए पर उसके मन में शंका तो इस बात की है कि ईश्वर ने समस्त प्राणियों के पीछे पाप-पुण्य का बखेड़ा क्यों लगाया? आदि में जब जीवों के कर्म शेष नहीं थे तो उनको उत्तम मध्यम और अधम किस लिए बनाया? इस प्रकार एक गहरी शंका उठाकर अंत में कवि अपनी आस्था का अनुसरण करते हुए मौन हो जाता है और कह देता है कि कर्मों की गति के विषय में मेरा प्रश्न करना गँवारपन है:—

अकमल पूछां तो अला, गोविंद हूँ गिंवार।
आद अनादी देवरी पूछे लखंदी पार ॥

ईसरदासजी की वाणी हरि-गुण-गान करते नहीं थकती। कवि के लिए तो राम ही माता पिता गुरु, सखा बन्धु आदि हैं:—

राम मात पित बहुल गुरु राम सखा सुखरास।
राम संबंधी बांधवा, राम सहोदर भ्रात ॥

अन्य रस का वर्णन करते समय भी कवि अपने [illegible]

सस्कारों को विस्मृत न कर सका और अपने इष्ट की वन्दना इस प्रकार ओजस्वी वाणी में करने लगा —

नमो मुर मद्द मरद्दण मल्ल
सखासुर काळ बकासुर सल्ल
नमो कस केसि विघूसण कन्न
रुक्म्मणि-प्राण पुरख्ख रतन्न ।

इसी प्रकार रामावतार का वर्णन करते हुए कवि ने राम द्वारा शिव धनुष भग और परशुराम के आने का वर्णन ओजस्वी व रौद्र रूप मे किया है.—

किधो रघ धोर महेस कोदड
अवं तिरलोक डरधा बळबड
आयौ रिख कोप चवत अगार
तव्यौ बळ चाप हुम्रो दुज स्यार ।

'हरिरस' भक्त ईसरदासजी के निश्छल हृदय की सहज अभिव्यक्ति है । अपने प्रभु से क्या दुराव और क्या छिपाव ? इसीलिए यह रचना इतनी मार्मिक है । कवि ने एक ओर तो सगुण-निर्गुण में समन्वय करते हुए'सर्वदेव नमस्कार केशव प्रति गच्छति' के अनुसार एकदेववाद का आदर्श उपस्थिति किया है तथा दूसरी ओर कर्म,ज्ञान और भक्ति तीनो में तुलसी की तरह सामञ्जस्य करते हुए अन्त में भक्ति का अनुसरण किया है । इसलिए वह हरि और 'हरिरस' काव्य को एक मानता है और कहता है कि इस काव्य के पढने वाले दुःखों से मुक्त होकर सद्‌गति को प्राप्त होंगे ।

कवि का भावपक्ष जितना प्रौढ है, उसका कलापक्ष भी उतना ही उच्च कोटि का है । अलकारो का उसने स्वाभाविक प्रयोग किया है । अनुप्रास और वयण सगाई तो अनेक स्थलों पर मिलते हैं —

अनुप्रास

सुमो वर ध्यान सुध्यान विशेष
नामै चहुं वेद विशेष नरेस
कुबुद्धि निकंद कुमंत निषेध
सिया वर राम सुमंत निषेध

वयण सगाई

नमत मिनख न ओतरे कालो दीनदयाल ।
करलीकार हिरदे करो कुल आवो गोपाल ।

'हरिरस' में दोहा, भाषा त्रिभंगी, मोतीदाम और छप्पय इन पांच छन्दों का प्रयोग किया गया है। ग्रंथ की भाषा साहित्यिक डिंगल है। कवि का भाषा पर पूर्ण अधिकार है। रचना में कई अरबी-फारसी के भी शब्द आ गये हैं जैसे—
नूर दिदार, साहब, गरीबनिवाज, आलम दरवेश आदि।

यद्यपि ईसरदासजी के और भी कई ग्रन्थ हैं, पर यदि वे केवल 'हरिरस' की ही रचना करते तो भी डिंगल के भक्त कवियों में उनका स्थान बहुत ऊंचा होता। मध्ययुग के भक्तों और सन्तों ने अपनी वाणी के लिए भगवान को आधार बनाया है। इसीलिए उनका काव्य अमर है। काल के सहस्र वज्र-प्रहार भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते। आज हम जिस विश्व-मानवता की चर्चा करते हैं उसका निर्माण तभी संभव होगा जब हम मध्ययुग के इन भक्तों और सन्तों की आस्था और दृढ़ विश्वास को अपनायेंगे और प्राणी मात्र में ईश्वर के दर्शन करते हुए उसके कष्ट-निवारण के लिए सच्चे हृदय से प्रयत्नशील होंगे।

घनश्याम [illegible] एम ए साहित्यरत्न
प्रिंसिपल भारतीय विद्या मन्दिर
बीकानेर

✿ ॐ शिव ✿

भूमिका

भारतवर्ष मे भक्तों और कवियों का आसन बहुत ऊंचा, महत्वपूर्ण और अद्वितीय माना जाता रहा है। उनकी सत्यनिष्ठा, निर्भयता और ज्ञान परायणता के आगे बड़े-बड़े राजा-महाराजा, बुद्धिमान् और शूरवीर नत-मस्तक रहे हैं। उनकी सूझ-बूझ, प्रतिभा, मेधा और कल्पना-शक्ति असाधारण होती है। राजस्थान में तो प्रसिद्ध है कि– 'जठै न पूगै रवि, उठै पूगै कवि' जहा रवि का प्रकाश नहीं पहुच सकता कवि ऐसी सृष्टि को भी अपनी अद्भुत कल्पनाओं से खड़ी कर देता है। यह कोरी अतिशयोक्ति नहीं है। लोक, अलोक और परलोक की कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो उनकी कल्पनाशक्ति के बाहर रह गई हो और जिस पर उन्होंने अपनी लेखनी नहीं उठाई हो। निराकार पर-ब्रह्म के साकार रूप, ज्ञानी और भक्त-कवियों की विशाल और तर्कमयी कल्पनाओं ही की तो देन है। यही नहीं उन्होंने उसे साकार बनने के लिये विवश भी कर दिया। वाणी की अद्भुत शक्ति का प्रभाव बड़ा ही चमत्कारी होता है। इसीलिये तो कवि, कवि ही नहीं है, वह चतुर्मुख ब्रह्मा है, वह उन सृष्टियों का सूर्य है जो इस सूर्य की पहुच के बाहर है और जहा कभी अंधेरा नहीं होता।

कवियों का आभार सभी देशों ने माना है, पर हमारे यहा उनका महत्त्व अद्वितीय है। भक्त-कवियों की तो बात ही निराली

है। देश की संस्कृति का मूलाधार भक्त और कवि ही हैं। ऐसे भक्त-कवि हमारी सभी जातियों और सभी सम्प्रदायों में होते आ रहे हैं। ऊँच और नीच शिक्षित और अशिक्षित एवं स्त्री और पुरुष सभी वर्गों के भक्त-कवियों ने हमारी संस्कृति को आदर्श और परमोज्ज्वल बनाये रखा है। इन सभी प्रकार के वर्गों में हमारी चारण जाति की एक अलग विशेषता है जिसका अतिविस्तृत महत्व साहित्य के सभी क्षेत्रों में प्रायः सर्वत्र देखने को मिलता है। वीर रस के काव्य-निर्माण में तो यह जाति जगत् प्रसिद्ध ही है; पर शान्तरस (भक्ति और ज्ञान) के साहित्य निर्माण में भी इस जाति की देन कम नहीं है। राजस्थान को तो ऐसे अनेकों भक्त-कवि इस जाति ने दिये हैं। अनेक भक्ति-ग्रन्थों के रचयिता भक्त-शिरोमणि ईसरदासजी भी इसी जाति के एक अमूल्य प्रकाशमान् रत्न हैं।

भक्तवर ईसरदास व्यक्तित्व और कृतित्व

हिन्दी-क्षेत्र में जो स्थान राम भक्त गोस्वामी तुलसीदास और कृष्ण-भक्त सूरदास का है, वही स्थान राजस्थान गुजरात सोरठ, कच्छ, सिंध आदि और थरपारकर में भक्तवर ईसरदास का है। जिस प्रकार तुलसी को दास्य-भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान् श्रीराम ने और सूर को कीर्तन-भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान् श्रीकृष्ण ने साक्षात् होकर इनके हृदय-मंदिर और ज्ञान चक्षुओं को पावन और शुद्ध किया था; उसी प्रकार भक्त ईसर को भी उनकी दास्य भक्ति से प्रसन्न होकर द्वारका में श्री रणछोड़राय ने अपनी रुक्मिणीजी के साथ हरिरस सुनाकर दर्शन करने पर, मग्न होकर

दर्शन किये थे[1]। प्रसिद्ध है कि इनकी अतुल भक्ति के प्रभाव से भगवान् रणछोडराय इनके अरस परस (वशीभूत) हो गये थे, जिससे इन्होंने कई अलौकिक काम दीन दुखियों के दुख निवारणार्थ कर दिखाये थे[2]। इसीसे इनका विरुद <u>'ईसरा-परमेसरा'</u> (ईसरदास परमेश्वर स्वरूप है) प्रसिद्ध हुआ। इतना गौरवपूर्ण विरुद

---

(१) हरिरस को द्वारका जाकर श्री रणछोडराय को सुनाने की बात के संबंध में स्व० श्री रामदेवजी चोखानी न द्वारका के अपने पंडे से पत्र-व्यवहार किया था जिसके विषय में श्री चोखानीजी कलकत्ते से दिनांक १५-४-५८ के अपने पत्र मे प्रस्तुत हरिरस के प्रकाशन की चर्चा करते हुए लिखते हैं- "हरिरस" एक बडे गौरव की वस्तु है अत उसका पुन प्रकाशित होना अत्यावश्यक है मैंने हाल मे ही सभा (काशी नागरी प्रचारिणी सभा) को इस धन का उपयोग करने के लिये लिखा था।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मैंने कुछ समय पहले श्री द्वारकापुरी के अपने पण्डाजी से महात्मा ईसरदासजी के द्वारका जाने के विषय में पूछा था जिसका उल्लेख राजस्थान रिसर्च सोसाइटी द्वारा प्रकाशित ग्रंथ में है। आपने मुझे जो पत्र भेजा है उसमे स्पष्ट उल्लेख है कि मन्दिर के दफ्तर मे भी यह बात दर्ज है कि हमारे महात्माजी वहां गये थे और अपना 'हरिरस' ग्रन्थ भगवान को सुनाया था जिसका समय भी उन्होंने लिखा है।"

(२) ईसरदासजी के चमत्कारो की कई दन्त-कथाएं प्रचलित हैं,

आज तक किसी भी भक्त-कवि को प्राप्त नहीं हो सका है।

भक्तवर ईसरदास का जन्म मारवाड़ देश के मालाणी परगने के भाद्रेस गाँव में वि. सं. १५९५[3] चैत्र सुदी ९ को रोहड़िया शाखा के चारण कुल में हुआ था[4]। इनके पिता का नाम

इनमें से कुछ के नाम इस प्रकार हैं—

१. बादशाह का चारणों के घोड़ों के बिक्री-कर के मामले में ईसरदासजी की जमानत नहीं चुकने से उन्हें कैद करना, उनके पुत्र को कैद में रखना, उसे मुसलमान बनाने की तैयारी करना, बाद नहीं चलना और झाला रायसिंह द्वारा कर की रकम जमा करवा देना।

२. सर्प-दंशित करण सरवैये को जीवित करना।

३. भादू नदी में डूबकर मरे हुए सांगा गौड़ को जीवित करना।

४. खारी जमीन में मीठे पानी का कुँआ खुदवाना।

५. कोढ़ों के खोपरे और खोपरों के कोढ़ बना देना इत्यादि।

(३) कई विद्वान ईसरदासजी का जन्म सं. १५१५ मानते हैं, पर ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वमान्य सं. १५९५ ही सिद्ध हुआ है।

(४) खेड़ (खेड़ पाटण । वीरपुर) के राव धूहड़ और उसके पुत्र रायपाल ने जैसलमेर के भाट भाटी को बलात् रोक कर वि. सं. १२९८ माघ सु. ८ को अपना पोलपात बना लिया। बलात् रोक रखने को मारवाड़ी भाषा में रोहड़णो कहा जाता है। रोहड़ कर चारण बना लिया गया इससे वह भाटी और उसकी संतान 'रोहड़िया-चारण' कहलाई।

—किशोरसिंह बार्हस्पत्य हरिरस जीवन चरित्र पृ. ४

सूजोजी[५] ग्रौर माता का नाम ग्रमराबाई था। ईसरदास की बाल्यावस्था मे ही इनके माता-पिता की मृत्यु हो गई थी। तब इनकी शिक्षा-दीक्षा ग्रौर लालन-पालन का भार ईसरदासजी के चाचा ग्रासोजी के हाथों में ग्राया। ग्रासोजी ने इन्हे पुत्रवत् प्यार के साथ लिखा-पढा कर ग्रपने ही समान विद्वान् ग्रौर कवि बना दिया। ग्रासोजी जहां भी राज-दरबारों मे जाते, ईसरदासजी को साथ मे ले जाते ग्रौर वहां ग्रपने साथ उनकी कविताग्रों का रसास्वादन भी राजा-महाराजा ग्रौर सरदारों को कराते रहते थे। वीररस के काव्य मे इस प्रकार ईसरदासजी की ग्रच्छी ख्याति होने लग गई थी।

ग्रासोजी की द्वारका जाते समय गुजरात ग्रौर सौराष्ट्र की यात्रा मे ईसरदासजी भी साथ मे थे। जब वे जामनगर पहुँचे तो रावल जाम ने इन्हे निमन्त्रित करके ग्रपने दरबार मे इनका बडा सम्मान किया। इन्होंने भी ग्रपनी काव्यरस धारा से रावल को मुग्ध कर दिया। ईसरदासजी की कविता सुनकर तो रावल ग्रत्यन्त प्रसन्न हुए। कुछ दिन वहां ठहरने के बाद जब वे द्वारका रवाना होने लगे तो जाम ने इनसे प्रतिज्ञा करवाई कि द्वारकाजी से लौट कर वे पुन. यहां ग्रायेंगे।

---

(५) ईसरदासजी के पिता का नाम सूरोजी भी कहा जाता है—

ईसाणद ऊगाह, चदण घर चारण तणं
प्रिथवी जस पूगाह, सोरम रूपे 'सूरउत'

—भक्त मांडणजी

श्री रणछोड़राम की यात्रा करके जब वे दूसरी बार जामनगर आये तो रावल जाम ने ईसरदासजी को अपना पोलपात बनाकर अपने पास रख लिया और आशाजी को सम्मान के साथ विदा कर दिया।

ईसरदासजी ने रावल जाम को अपनी ओजपूर्ण वाणी और विद्वत्ता से इतना प्रसन्न किया कि उसने इनको कोड़-पसाव[६] भेंट किया और कई गाँव शासन में देकर बहुत बड़ा सम्मान किया[७]।

यहाँ जाम के दरबारी प्रधान राज-पंडित और भक्त पीताम्बरदासजी भट्ट के सम्पर्क में ईसरदासजी को आने का सुअवसर मिला। ईसरदासजी इनको विद्वत्ता भक्ति शिक्षा और ज्ञान-प्रौढ़ता से

(६-७) कोड़पसाव ईसर कियो, दियो सवासो गाम
कवि-शिरोमणि देखियो जग में रावळ जाम

काईदानजी ने अपने सम्पादित इतिहास में ईसरदासजी के जीवन चरित में लिखा है कि राजबाई के साथ ईसरदासजी का विवाह अपने खर्चे से करा देने के उपरान्त रावल जाम ने ईसरदासजी को कोड़पसाव दिया और सवासौ गाँव के साथ रेंगपुर वीरमदरजो गुढो भावसो हाथी मकवाणो चोनवण साचड़ी और बाबा के ९ गाँव जागीरी में दिये थे।

कोड़पसाव लाखपसाव आदि की सब रकम नकद नहीं दी जाती थी। कुछ नकद, कुछ गहने और कुछ घोड़े ऊँट आदि पशु और कुछ अमुक वार्षिक आय के गाँव दे दिये जाते थे।

अत्यधिक प्रभावित हुए। उनसे गुरु-दीक्षा लेकर भागवतादि धर्म-शास्त्रों का अध्ययन किया; भक्ति रसामृत और ज्ञानामृत का पान किया। गुरुवर पीतांबरदासजी की शिक्षा, उपदेश और सत्संग ने ईसरदासजी की काया पलट कर दी। कविराज ईसरदासजी भक्त ईसर बन गये। व्यक्ति-प्रशंसा के काव्य निर्माण की प्रवृत्ति बंद हो गई और भक्ति-परक काव्य-निर्माण की प्रवृत्ति तथा अटूट ईश्वर-भक्ति जागृत होगई। यहीं से कविराज के जीवन का एक दूसरा प्रकाशमान् मोड प्रारंभ होता है, जिसमे आकर वह 'ईसरा-परमेसरा' बन जाता है।

अथाह भवसागर को पार करने के लिये भक्ति-रूपी दृढ नाव के ऐसे समर्थ केवट का भक्त ईसरदास ने अपने प्रत्येक ग्रन्थ के प्रारम्भ मे बडी श्रद्धा और भक्ति से स्मरण व चरण-वंदन किया है[८]।

काव्य-भाषा के क्षेत्र में तत्कालीन सभी भाषाओं से अधिक ओजस्विनी और राज-दरबारों मे सम्मानित बहु प्रख्यात डिंगल-भाषा[९] में जो काव्य-गुम्फन ईसरदासजी ने किया है, वह राजस्थानी के उच्च साहित्य की दृष्टि से ही नहीं वरन् धार्मिक और क्षात्र जगत् में भी अधिक सम्मानित और लोक-प्रिय है। ईसरदासजी की रचनाएँ दोनों प्रकार की हैं। क्षात्र जगत की वीरोचित भावना को प्रदर्शित करने वाले अनेक गीत-छंद और 'हालां-झालां रा कुंडळिया' आदि

---

(८) लागां हों पहला लळै, पीतांबर गुरु पाय
भेद महारस भागवत, पायो जेण पसाय

(९) डिंगल शब्द की व्युत्पत्ति के संबंध में विद्वानों ने भिन्न-भिन्न

है। 'हालां-झालां रा कुंडलिया' में वीरों की चेतना को उत्तेजित करने वाला ऐसा मार्मिक और सैद्धान्तिक वर्णन है जो अन्य कवियों में बहुत कम पाया जाता है। इधर इसके विपरीत इनके शान्तरस के ग्रन्थ तो साहित्य की अमूल्य निधि हैं, जो लगभग वेद दर्शन के हैं।

कल्पनाएं की हैं पर उनमें से किसी की भी कल्पना अभी तक सर्वमान्य नहीं हो सकी है। इस समय डिंगल साहित्य के महत्व को देखकर इस शब्द की जितनी व्याख्याएं और कल्पनाएं आज तक की गई हैं उतनी उसके साम्य पिंगल शब्द पर कदाचित् ही की गई होंगी। यह आकर्षण और चमत्कार 'डिंगल' शब्द का है अथवा इस नामधारी वीरत्वपूर्ण और प्राणदायी साहित्य का? विचारणीय तथ्य यही है।

डिंगल भाषा का साहित्य सभी विषयों और रसों में लिखा हुआ विपुल प्रमाण में प्राप्त है। वीररस और शान्त रस के तो भंडार भरे पड़े हैं; परन्तु डिंगल नाम के अनुरूप इस साहित्य का प्रधान रस नव-जीवन संचार कराने वाला वीररस ही माना गया है। डिंगल साहित्य की रचना का समय और कारण जिससे कि उसका नाम डिंगल रखा गया वह युद्ध काल है जिसमें वीररस के काव्य की नितान्त आवश्यकता समझी गई थी। रण-वाद्य और वीरों की हुंकार के बीच कायरों में प्राण फूंक कर उन्हें वीर योद्धा बनाना वीरगति को प्राप्त कर मुक्ति और स्वर्ग प्राप्ति का लाभ प्राप्त कराना वीरों का उत्साह मंद नहीं हो— इन सभी बातों के लिये रणांगण में रणवाद्यों के

इनमे हरिरस' तो विषय और भाषा की दृष्टि से एक जन-काव्य की भांति अत्यधिक ख्याति प्राप्त किया हुआ भक्तजनों का अति प्रिय और पूजनीय ग्रन्थ है ।

ईसरदासजी द्वारा रचे हुए ग्रन्थों की सूची, जिनका अद्यावधि पता लग सका है, इस प्रकार है—

१- हरिरस २- छोटो हरिरस

चलते समय वीरो को प्रोत्साहन देने,शूरवीरो का जोश और रक्त ठंडा न होने देने और शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिये अपने-अपने पक्ष के कविगणो को अधिकाधिक उच्च स्वर से वीरो की प्रशस्ति के काव्य सुनाते रहने के लिये युद्धरत वीरो की ओर से मांग की जाती थी कि "कविराजजी ! थांरा कायब-गीतां रो सुर धीमो पडणं सू वीरा रो जोस धीमो पड रयो है, डींघै माळे माथै चढनै डींगी राग सू थारो जोसीली कविता सुणावो जिणसू वीरां रो लोहो ऊफणनै उण घर री बातां करै । ... हां, इणीज भांत होवा वो ।"

डींगा वीरा डींगा मारग डींगा लोग लुगाई
डींगी धारा डींगी वातां, डींगी साख सगाई ।
डींगा देहा डींगा वेहां, लकै भीणी कांमणी
डींग घघबर डींगी गल्लां, सिहरे पळकी दांमणी ।

(एक राजस्थानी मौखिक बात से)

डोगो (डीघो, डीघो) शब्द के महत्त्व और व्यापक अर्थ पर विचार करने के लिये राजस्थानी की एक वात का यह अश डींगो (=१ दीर्घ, २ लबी, ३. ऊची) शब्द से गल (=१ गला, २ स्वर, ३ वात) का योग पाकर- डींगो+ गल > डींग+गल > डींग्+गल > डींगल > डींगळ >

१ डेढियाळ[10]	४ मूल रतन कीता[11]
२ मूल आगम	५ मूल करम

विकृत अथवा मौलिक रूप में हमारे सामने आया। डींगी मल का बार बार उच्चारण करते रहने से निश्चय ही डींगल या डिंगल शब्द ही श्रुतिगोचर होगा। और तब अपने आप डींगी और मल के योग से ही व्युत्पन्न होने की धारणा का भी निश्चय हो जायगा। व्युत्पत्ति के संबंध में विचार करते समय व्युत्पत्ति काल के वातावरण और उसके कारणों पर प्रथम विचार करने की आवश्यकता है। अत डींगी और मल– इन दोनों शब्दों के देश कालानुसार लोक प्रसिद्ध अर्थों वातावरण और कारणों इत्यादि बातो पर विचार करने से यह स्पष्ट निश्चय हो जाता है कि इन्ही दोनो शब्दो के योग से इस महत्वपूर्ण एवं सुचरित लोक-शब्द का आविर्भाव हुआ है।

१०–डेढियाळ शब्द के डेढियाल डेढ्याल डेढ्याल, और डींगोळ पुरान नाम भी लिखे मिलते हैं। मूल नाम डेढयाल है पर अधिक प्रसिद्ध नाम डेढियाळ ही है। हमारे पास एक पुस्तक सूची में 'डोडाळ रूपक बारठ ईसरदास रो कहियो' लिखा हुआ है पर यह पुस्तक संग्रह में प्राप्त नहीं हो सकी। इससे अनुमान है कि यह 'डेढियाल रूपक' या 'डेढोल रूपक' होगा। पर उसी सूची में 'डेढियाळ' भी लिखा हुआ है और यह संग्रह मे प्राप्त है। 'गीगोला रूपक' से तात्पर्य मेवाड के महाराणाओं संबंधी काव्य से समझा जाता है, जिसकी संभावना कम मालूम होती है।

११– 'मूल रत्न कौतव' नाम भी लिखा मिलता है।

७- गुण निंदा-स्तुति   ८- गुण भगवत हंस

९- गुण बाळ लीला   १०- गुण सभापर्व

११- गुरड़ पुराण   १२- श्रापण

१३- दाण लीला   १४- सांमळा रा दूहा

१५- वीस-वुश्राळो सृष्टि-उत्पत्ति रो गीत

१६- साखियां   १७- भजन (पद श्रौर वाणियां)

१८- हाला-झाला रा कुंडळिया

१९- गीत-छंद (भक्ति श्रौर वीररस दोनों के अनेको गीत)[१२]

१२– डा० हीरालाल माहेश्वरी ने 'राजस्थानी भाषा श्रौर साहित्य' नामक अपने शोध ग्रन्थ मे गुण छमा प्रब, कृस्नध्यान तथा रासलीला नाम के तीन ग्रन्थ श्रौर ईसरदासजी के होना बतलाया है श्रौर इनकी सूचना इन्हे 'सेठ सूरजमल जालान पुस्तकालय, कलकत्ता के गुटके न० २० श्रौर अप्रकाशित काव्य सग्रह जिल्द ५ से प्राप्त हुई है। जालान पुस्तकालय के एक गुटके मे, जिसमें भक्त पीरदान लालस के हाथ से लिखी हुई अपनी रचनाश्रो के साथ ईसरदासजी की भी लगभग सभी रचनायें अपने हाथ से लिखकर उसमे इन्होंने सकलित की हैं। इसी गुटके मे पीरदान लालस के पुत्र हरिदास का रचित 'छमा प्रब' भी लिखा हुआ है। डा० माहेश्वरी दृष्ट गुटका यदि इस गुटके से भिन्न है तब तो अलग बात है श्रौर नहीं तो 'छमा प्रब' ईसरदासजी का नही है, हरिदास लालस का है। ईसरदासजी का 'गुण सभापर्व है ही।

हालां भालां रा कुण्डलिया और गीतों में से अनेक गीत वीर-रसात्मक भक्ति परक हैं जिनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। शेष सभी रचनाएं भक्ति और ज्ञान-परक शान्त रसात्मक हैं। विविध अवतारों को एक ही रूप में मान कर उनके विविध चरित्रों और लीलाओं का वर्णन महिमा और स्तुति आदि अनेक विषयों से समलंकृत ये ग्रन्थ हैं। सरसता की दृष्टि से एक हरिरस को छोड़ कर ये सभी रचनाएं संत वाणियों के उतनी समीप तो नहीं हैं परन्तु वीर रसात्मक काव्य ग्रंथों से बहुत सरल हैं।

उपरोक्त काव्यों में हरिरस, हालां भालां रा कुण्डलिया और देवियाण अधिक प्रसिद्धि प्राप्त हैं और प्रकाशित हैं। हरिरस के तो हिन्दी और गुजराती में मूल और सटीक रूपों में छोटे मोटे अनेकों संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं [११]। छोटी रचनाओं में छोटो हरिरस

११- हरिरस के प्रकाशित संस्करण इस प्रकार हैं—

(१) श्री विमलजी भलाभाई भावनगर (सौराष्ट्र) प्रथमावृत्ति सन् १९११ में। द्वितीयावृत्ति सन् १९२४ में सं० १९८०, तीसरी आवृत्ति भी प्रकाशित हो गई सुना है।

(२) श्री मनसाराम पैठीभाई देसा मोरबी (सौराष्ट्र)। इन्होंने ६ आवृत्तियें प्रकाशित की हैं। पहली आवृत्ति सन् १९३८ में।
इन्होंने देवियाण के भी दो संस्करण प्रकाशित कर दिये हैं।

(३) श्री सीतारामजी मधुवजी बारहठ सिंहुड़ी (पर बारकर) देवनागरी लिपि का प्रथम संस्करण। सं० १९९१, सन्

दांणलीला, सामळा रा दूहा और वीस-दुमाळो गीत आदि भी प्रकाशित हैं[१४]।

१९३२ मे मुद्रित। लींबडी के गुजराती हरिरस का हिन्दी रूपान्तर।
प्रकाशक- सेठ मथुरादास पुरुषोत्तमदास कचरानी, मुम्बासा (एफ्रीका)

(४) श्री मोनदान बारठ, नगरी (राजस्थान)
छंद ३६१, स० १९९४ मे प्रकाशित। अंत में छोटा हरिरस भी प्रकाशित है।

(५) स्व० श्री किशोरसिंह बार्हस्पत्य, पटियाला
छंद ३६१ राजस्थान रिसर्च सोसाइटी, कलकत्ता द्वारा स० १९९५ मे प्रकाशित।

(६) आई श्री सोनलबाई, मढडा (सौराष्ट्र)
चारण हित वर्धक सभा, भावनगर से प्रकाशित और श्री पीगळ परवतजी द्वारा सम्पादित द्वैमासिक पत्रिका 'चारण' मे 'श्री सोनल संजीवनी' नामक वृहद् टीका और व्याख्या सहित क्रमश प्रकाशित हो रहा है।

१४- हरिरस के प्रस्तुत वृहत् सस्करण के अतिरिक्त ईसरदासजी की अन्य सभी रचनाओं का 'ईसरदास ग्रंथावली' के रूप में लेखक द्वारा सम्पादित होकर, सा०रा० रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की ओर से शीघ्र ही प्रकाशन हो रहा है।

प्रस्तुत हरिरस

अद्यावि प्रकाशित हरिरस के सस्करणों मे प्रस्तुत सस्करण अपने मे वृहत् और अद्वितीय है। इसको तैयार करने मे २५ से भी अधिक प्रतियों का सहारा लिया गया और लगभग २५ वर्ष यथावसर शुद्धतम प्रति की खोज करने मे समय लगाना पडा। उल्लिखित प्रतियों के अतिरिक्त भी अनेकों प्रतियों का अवलोकन किया गया, परन्तु कोई प्रति भी किसी से मेल खाती हुई नहीं मिली। प्रकाशित अ र अप्रकाशित किसी भी प्रति का पाठ-साम्य, छद-क्रम और छद सख्या

तू हुओ दास ईसर तणो, मनछा वाचा दोख दहि
किसन रा पाव भेटण करे, गुरु ईसर रो ग्यान ग्रहि ॥१७६॥

—उक्त कवि के अप्रकाशित गुण ग्यान चरित' से

ओथिअं साहिव ऊपना, भोमि नमो भाद्रेस
पीरदास लागे पगे, ईसाणद आदेस

—अप्रकाशित 'पातिग पहार' से

भाद्रेम भोम दरसण किया, मिटै जनम रा पाप
ईसर गुरु सुमिरण किया, आवा-गवण उथाप

—अप्रकाशित अज्ञात कवि

भेटयो जिण भाद्रेस नै, पाप अळै हुइ जाय

—सग्रह गुटके से

जग प्राजळतो जाण, अघ दावानळ ऊवरण
रचियो रोहड राण, समद हरीरस सूरचत

—गाढण केशवदास

एक समान देखने में नहीं आई। पाठ भेद का तो इनमें कोई हिसाब ही नहीं। समझदार लिपिकार अपनी प्रतिभा का अनधिकार प्रकाश फैलाये बिना नहीं रहे और अशुद्धियों का अंधकार अपढ़ लेखकों की कलम ने फैला दिया। हमें प्राप्त प्रतियों में केवल दो प्रतियों का निकटतम शुद्ध-क्रम और इन्हीं में से एक का एक अन्य प्रति से निकटतम पाठसाम्य मिला है। इन्हीं तीन प्रतियों में से एक प्रति को सबसे पुरानी अपेक्षाकृत शुद्ध विषय-विभाजित और सम्पूर्ण होने के कारण उसे अपना सम्पादनाधार बनाया और शेष सभी प्रतियों से आधार प्रति के अनुकूल अनुवर्तन करते हुए एवं देश काल भाषा और भावों का विचार करते हुए पाठ चयन करने का मार्ग अपनाया। पर ऐसे स्थल बहुत न्यून हैं।

हरिरस जैसे अति प्रख्यात और कवियों और भक्तजनों के घरों में सुलभता से प्राप्त होने वाले काव्य की खोज का भी एक अनूठा इतिहास है और उसका मूल कारण राजस्थान रिसर्च सोसायटी कलकत्ता द्वारा प्रकाशित सटीक हरिरस है। प्रस्तुत हरिरस की पृष्ठ-भूमि में मुझे इस हरिरस का आभार मानने में अब संतोष हो रहा है। कलकत्ते वाले उक्त हरिरस के सम्पादन में मूल और प्रथम प्रयास श्री सीतारामजी लालस का है और इस प्रयास के फलस्वरूप श्री सीतारामजी ही उसके प्रकाशन की बुनियाद हैं। यद्यपि ठेठ तक उनका साथ नहीं रह सका था अपेक्षित नहीं समझा गया, तथापि आदि और मध्य चरण में इनका संपूर्ण परिश्रम बना रहा है। पीछे के संस्करण में उनका साथ नहीं रहा।

गारासणी ठाकुर भीमसिहजी ने श्री लालसजी की प्रेरणा से मेरे से हरिरस की टीका करवाई थी। बहुत निकट सम्पर्क में रहने पर भी इसकी चर्चा न तो सीतारामजी ने ही कभी की और न गारासणी ठाकुर साहब ने ही। परन्तु जब उक्त हरिरस प्रकाशित होगया तो उसको देखते ही लालसजी को बडा आघात पहुँचा। वे मेरे पास आये और कहा कि– "आपका हरिरस प्रकाशित होगया, पर आपके साथ धोखा हुआ और आपका परिश्रम निष्फल गया।"

मैंने लालसजी को कहा कि 'गारासणी ठाकुर तो धोखा दें ऐसे व्यक्ति नहीं है वे तो भक्त हैं और मेरे भी स्नेही हैं उनके द्वारा कोई गडबड हो गई है तो चिंतनीय है। पर मुझे तो विश्वास है कि वे ऐसा नहीं कर सकते। आगे भगवान् जाने। कुछ भी हो, हरिरस प्रकाशित होगया, इसी मे सतोष मान लेना पडेगा। होना सो होगया। आप चिन्ता नहीं करें।" लालसजी ने कहा– "गारासणी ठाकुर निर्दोष हैं। मैं इसके सबध मे एक लेख प्रकाशित करके इस रहस्य को प्रगट करूगा।"

श्री लालसजी लेख तो नहीं लिख सके, परन्तु इस रहस्य का उद्घाटन श्री नाहटाजी के (पूर्व प्रसग की जानकारी के लिये) कलकत्ते से किये गये पत्र-व्यवहार के सबध मे सीतारामजी से किये गये पत्र-व्यवहार ने कर दिया।

श्री नाहटाजी और श्री लालसजी का पत्र-व्यवहार, कलकत्ते वाले हरिरस की पृष्ठिका मे स्व० बार्हस्पत्यजी की हरिरस के सपादन सबधी वर्षों की खोज और परिश्रम का और इसके साथ अपनी

खोज परिश्रम और बार्हस्पत्यजी को किये जाने वाले सहयोग का पूर्व कथित हरिरस के सम्पादन संबंधी घटनाओं पर मन से इति तक प्रकाश डालने वाला है। श्री मनहरजी का खोज करने के प्रयास के लिये और श्री शाणतजी का वास्तविक प्रकाश डालने के लिये मैं इन दोनों महानुभावों का अत्यन्त आभारी हूँ।

अस्तु। कुछ भी हो मेरे जीवन में ऐसी घटनाएं कोई नई बात नहीं है। मुझे तो इस हरिरस से कुछ प्रेरणा ही मिली है और उसी के परिणाम-स्वरूप प्रस्तुत संस्करण पाठकों की सेवा में भेंट कर सका हूँ।

आधार प्रति की उपलब्धि

हरिरस की अनेक हस्त लिखित प्रतियों में छंद-व्यतिक्रम और पाठ और भाषा की असमानता आदि अनेक-विध विभिन्नताओं से यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि ईसरदासजी की जन्म-भूमि मारवाड़ी प्रान्त और प्रवास-भूमि सौराष्ट्र-गुजरात में खोज करके ऐसी पुरातन प्रति प्राप्त की जाय जो अधिक से अधिक पुरानी हो और जिसका प्रतिलेखन कम से कम हुआ हो। इस प्रयत्न के फल-स्वरूप कई स्थानों में बहुत-सी प्रतियां देखने में आई; किन्तु बहुत समय तक ११ पदों की पूर्ण प्रति कहीं देखने में नहीं आई। किसी में कम और किसी में अधिक। न्यूनाधिक पदों की शृंखला भी एक-सी नहीं और सभी के अंत में इति श्री हरिरस संपूर्ण है अथवा 'इति श्री पुण हरिरस बारठ ईसर रो कहियो संपूर्ण समाप्त' इत्यादि इत्यात्मक वाक्य लिखे हुए पाये गये।

मारवाड़ी ठाकुर साहब के द्वारा प्राप्त तत्काल करवाई

हुई ३६० छदों की प्रतिलिपि (जिसका पाठ अधिकतर, पी अ. बारडे द्वारा सपादित और ब्रह्म प्रेस, इटावा मे मुद्रित पुस्तक से मिलता-जुलता) और पीतांबरजी अर्जुनजी बारडे की ३६० छदों की मुद्रित पुस्तक और उसमे का यह अतिम दूहा—

कवि ईसर हरिरस कियो, छद तीन सो साठ
महा दुष्ट पावै मुगति जो नित कीजै पाठ

और इधर इसके समक्ष पचासों हस्त लिखित प्रतियों मे न्यूनाधिक छद, अधिकाधिक पाठ-भेद, ईसरदासजी के अन्य ग्रन्थों के कई छंद हरिरस मे ज्यों के त्यों समाविष्ट और कई प्रतियों के अत मे—

कवि ईसर हरिरस कियो, विहां तीन सो साठ
महा दुष्ट पामै मुगत, जो कीजै नित पाठ

आदि इन असबद्ध बातों ने एक बार तो यह भ्रम उत्पन्न कर दिया कि हरिरस के छदों की सख्या वास्तव मे ३६० है कि नहीं ?

इसी बीच जन्म-भूमि बालोतरा मे ही एक अति सुन्दर प्रति का १०७ पत्रों का एक गुटका जिसमे केवल पूरे ३६० छदों का सुन्दर लिपि में लिखा हुआ हरिरस ही था,प्राप्त हो गया।

गुटका, सत-कला के नमूने की एक अनूठी वस्तु था। रेशमी मिसरू की जिल्द बँधाई, बेष्टन और सिटकिनी वाली डिबिया आदि उसके बाह्याकर्षण की वस्तुओं के अतिरिक्त उसकी लेखन-कला और चित्र-कला तो अनुपम ही थी। सभी पृष्ठों पर विभिन्न बेल-बूटों के रग बिरगे और स्वर्ण खचित बोर्डर और बीच के दो पृष्ठों पर, एक में— शख, चक्र, गदा और पद्मधारी चतुर्भुज विष्णु

१. पूज्य पितामह श्री रामसुखदासजी के सग्रह की (हमारी निज की) पांच प्रतियां। छ्वद स० १८३, २३६, १८७, १११ और १४१। लिपिकाल स० १८८० और १६०० के बीच। दो प्रतियें स्वे रामशरण द्वारा बालोतरा मे, एक पितामह द्वारा और एक भीखोडाई मे साधु रामकृष्णदास निरजणी लिखित है।

२ श्रीपूजजी फतेन्द्रसूरिजी भावरख गच्छ उपाश्रय बालोतरा, यति मदनचन्द्र द्वारा। छ्वद स० २६१. सं० १८६१, जती निहालचद्र द्वारा जोधपुर मे लिखित।

३ वनू माता का श्री रघुनाथजी का मदिर, बालोतरा। छ्वद ३६०, स० १८७६, साधु विहारीदास निरजणी द्वारा बालोतरा मे लिखित। लिपि, लेखन और गुटका अति सुन्दर। सर्व प्रथम प्राप्त पूर्ण प्रति।

४ महात्मा श्री भगतीरामजी निरजणी की बगीची, बालोतरा। छ्वद ३१३, स० १८३७, निरजणी साधु निश्चलदास द्वारा पांचपदरा मे लिखित।

५ मानपुरा (मारवाड) के श्री प्रभुदयाल ब्रह्मभट्ट द्वारा। छ्वद ११८, स० १६०१

६. ठाकुर भीमसिहजी गारासणी, छ्वद, ३६०

७ बारहठ शुभकर्ण खारी (मारवाड), छ्वद ३०४, पारड़ाऊ मे बारठ [धीरदान (?)] लिखित

८ सिद्ध बाबा रामनाथजी, जोधपुर। छ्वद ३६०, जीर्ण प्रति लेखन शुद्ध। अधिकतम छ्वद विषयवार।

९. सर सुखदेव प्रसाद काक जिमल लिबलेरी बरवई जोधपुर।
दो प्रतियाँ पत्र ४१ और २१ खंडित।

१० ठाकुर मोतीसिंहजी सीमाळिया (मारवाड़) पत्र ११० सं १७ ७ जेठ सुदि ११ लिखतं बांमण [बेणराम बीठूवा (?)] प्रथम पत्र पर सावोरा ब्राह्मण जोशी रूपो बायड़मेर और उसके नीचे अलग-अलग हाथों से गुरवबा री मासी पूंछड़ी और ठामो देवकर्ण और अन्तिम पत्र पर 'श्री पोथी हरिरस री लबेरा की। मोती सं'— इत्यादि नाम लिखे हैं। लिपि शुद्ध मारवाड़ी। सम्पादन की मुख्य प्रति।

११ लोहाणा पुनमचंद, सिद्धपुर (गुजरात) पत्र ३१ लिपि मारवाड़ी। पक्की हुई और बीच का अंश खंडित।[१७]

१२ श्री मायरमल मुरावो वाव (गुजरात) पत्र १७४ सं० १८८३ की प्रति से बालोतरा में ब्यास भाभाराम ने सं १९४६ आषाढ़ सुदी १२ को प्रतिलिपि की। लिपि मारवाड़ी, सुन्दर।

१७- यह प्रति भाषा की दृष्टि से सीमाळिया की प्रति से बहुत स्थानों में मेल खाती है। गुजराती का प्रभाव भी है। इसका प्रथम और अंतिम दोहे इस प्रकार हैं—

(प्रथम) सरसुति समेहा हौं सदा गणपति लागांई पाय
ईसर दैव प्रयापणो श्री गुरु करी सहाय।

(अंतिम) हरिरस मो गुण सरस है जे कोई पीवै चाव
पीवत सु अमर हवै, कहै ईसरदास।

१३ ओदीच खेता पराग सूराणा (गुजरात) छद ५३ से १६६ अपूर्ण, लिपि गुजराती।

१४ अभय जंन ग्रन्थालय बीकानेर की पांच प्रतियां–

(इन प्रतियों के विवरण खो गये।)

१५ श्री मुकनसिहजी बीदा सैनाळी (बीकानेर), छद १७५, स० १८४६ जेठ सुदी २, वगडी (मारवाड) मे भानीदास लिखित।

१६ विद्या मदिर शोध-सस्थान, बीकानेर, छद सख्य नहीं। अपूर्ण। कुछ छदों की मारवाडी टीका सहित [१८]।

हरिरस की भाषा

हरिरस की भाषा मध्य काल की शुद्ध साहित्यिक मारवाडी भाषा है। पश्चिमी राजस्थानी भाषा के क्षेत्र मे प्रधानतया मारवाड

१८- इसके प्रथम १४ दोहो के बाद 'रिध सिध दियण कोइला रांणो' त्रिभग्वरो छद शुरु होता है और 'भमतो राख हिवं जग भावन' तक मारवाडी भाषा मे टीका लिखी हुई है। आगें टीका नही है। तत्कालीन मारवाडी भाषा के गद्य के उदाहरण के रूप में एक छद और उसकी टीका यहां दी जा रही है–

भगत-वछळ मो दं भगति, भांज परा सह भ्रम्म।
मूझ तणा क्रम मेटवा, कर्णा तुहाळा क्रम्म॥

ईसर बारहट कहै छैं–हे परमेश्वर, हे कृष्ण, हे भगत वछळ, मोनु थारी सेवा भगति दे। म्हारै मन में भ्रम छै, म्हारै मन रो भ्रम भांजि। म्हारा क्रम मेटि। म्हारा जिके चीकणा क्रम छै

का यह पश्चिमी भाग जिसमें भालाणी सांचोर (उत्तर गुजरात और कच्छ के रण तक) पोकरण-फलोदी के आस-पास का भाग जैसलमेर की सीमा तक थाट (सोढाण पर और पारकर)[18] और माड (जैसलमेर प्रदेश) तथा मारवाड़ जैसलमेर से लगता हुआ बीकानेर प्रदेश राजस्थान की साहित्यिक भाषा डिंगल (मारवाड़ी पद्य और गद्य) के केन्द्र और उद्गम स्थान रहे आते हैं। अपभ्रंश काल के इसी विशाल क्षेत्र की भाषा के परिवर्तित होते हुए काल की साहित्य रचना से 'प्राचीन-पश्चिमी राजस्थानी और गुजराती साहित्यका ?

ठिके क्रम मेटवा रै कारणे बारा गुण बर्णव गु गु गुण बर्णवीयां क्रम मिटै।

इसमें 'कोइला रासो' का अर्थ– 'कोइले पर्वत री राड़' लिखा है।

इसी गुटके में लिखे हुए भागवत की प्रशस्ति में इसका लेखन-काल संवत् १७२९ तृतीय आषाढ़ सुदी १२ लिखा है। 'भागवत' २९ पन्नों का है।

१८ थर (थल) और थाट का बहुत बड़ा भाग पहले मारवाड़ राज्य का ही एक भाग था। अंग्रेजी राज्य के समय इसके किराए के बदले एक संधि के द्वारा अमुक अवधि तक सिंध सरकार को ठीके पर दे दिया गया था। भारत स्वतंत्र होने के कुछ ही समय पूर्व ठीके की अवधि समाप्त होने पर मारवाड़ के अंग्रेज प्राइम मिनिस्टर द्वारा मारवाड़ का यह विस्तृत भाग सिंध में ही रख दिया गया। आज यह पश्चिमी पाकिस्तान का एक भाग बना हुआ है।

ने 'जूनो गुजराती' को सज्ञा दी है।[२०] १७ वीं शताब्दी (पूर्वार्द्ध) तक इसमे अपभ्र श के रूप पाये जाते हैं। ईसरदासजी की राजस्थानी रचनाओं का रूप अपभ्र श से छूटता हुआ उत्तर-कालीन मधि-काल था। हरिरस मे अपभ्र श-काल के द्वित्व वर्ण और सज्ञाओ, सर्वनामों और क्रियाओं आदि मे अे, अै, ओ, औ के स्वरान्त शब्दों का अइ, अई, अउ, अऊ का अनेक स्थानों पर इस भांति प्रयोग हुआ दिखाई देता है—

१ द्वित्व वर्णों के कुछ शब्द

अग्गि (आगे > अग्र)	मुगत्त (मुक्ति)
धम्म (धम)	करम्म
ध्रम्म (धर्म)	क्रम (कर्म)
चक्ख (चक्षु)	कम्म

२०- राजस्थानी भाषा के आदि और विकास-काल के सबध मे विद्वान् एक मत नही है। डा० तैस्सितोरी तेरहवी शती को प्रारम्भ काल मानते हैं। डा० मोतीलाल मेनारिया प्रारभ-काल स० १०४५, डा० हीरालाल माहेश्वरी स० ११०० से १५०० तक विकास काल मानते हैं। डा० ओमआनद सारस्वत राजस्थानी दोहो के काल विभाग मे सधि-काल स० ६०० से १३०० और आदि-काल स० १३०० से १५०० तक मानते हैं। श्री अगरचद नाहटा ने ११ वी शती से आदि-काल माना है।

एक वचन	वहु वचन
हू राड को करां नीं	म्हे राड को करां नीं
(मैं लडाई नही करता हूँ)	(हम लडाई नही करते हैं)

इन दोनों वाक्यों मे दोनों वचनों की वर्तमान कालिक क्रियाओं का एक समान प्रवर्त्तन हुआ है। हरिरस की इस रूप की कुछ क्रियाएँ सोदाहरण यहा दे रहे हैं—

अखा=कहता हू। अखा उपमा नख कोट अरयक (२५५)

भुणां=कहू, वताऊ। भुणा किथ जाग असी जग-मूर (२६५)

लहां=प्राप्त करू। इको रसणाह लहा किम अत (१२२)

सकां=सकता हू। सकां केम समराथ (६)

अहळे, असहां, किथ, किथे, खत्री, खीर, गोठ, घाट, ठयो, थियै, पन्न, भजे, माहरो, रहमांण, हिक, हेक, इत्यादि अनेकों शब्द उक्त क्रिया-रूपों के साथ इन प्रान्तों के प्रयुक्त हुए हैं। इसी प्रकार अढार, अनै, आप्यो, कालावाला, केम, गळीगयो, गिनांन, चउद, जड्यो, जनेता, जे, दी, अणे, पमाड पांमै, मूक परी, रुदो, वइराट, वहेलो, समरै, सोळ आदि कितने ही शब्द गुजराती के प्रयुक्त हैं।

गुजरात, घाट और सिंध से मिले हुए राजस्थान के प्रान्तों में इन शब्दों का व्यवहार उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार कि उक्त प्रान्तों में। और साहित्य मे तो सर्वत्र अबाध गति से व्यवहार होता है। इसलिये इस प्रकार के शब्दों का व्यवहार डिंगल साहित्य में अपने निजी शब्दों के समान ही किया जाता है। वैसे पुरानी पश्चिमी

राजस्थानी अपनाम जूनी गुजराती की परंपरा सन्निहित है ही और ईसरदासजी का मारवाड़ के पड़ोसी प्रान्त में जन्म और सौराष्ट्र-गुजरात में उनका दीर्घ-कालीन प्रवास तो मुख्य बात है।

डिंगल साहित्य में उसके निजी शब्दों की बड़ी विशेषता है। प्राकृत और अपभ्रंश की कड़ी में संस्कृत मूलक शब्दों की भी उसमें कमी नहीं है। भाषा के रूप और स्थायित्व में इन दोनों बातों का और उसके साथ विविध रूपों में भावों को स्पष्ट करने वाली क्रियाओं का बड़ा महत्व है। क्रियाओं के भी उक्त प्रकार के ही दो वर्ग हैं। हरिरस में भी दोनों ही वर्गों के क्रिया पद अपने भावों को यथातथ्य और यथास्थान प्रकट करने में सक्षम रूप से प्रयुक्त हुए हैं। यहाँ हम उक्त दोनों वर्गों के और क्रियाओं के संयुक्त प्रयोगों एवं काल वचन आदि भेदों के कुछ प्रयोग उदाहरणार्थ दे रहे हैं—

१ भविष्यत् काल आवसे करसी देखिस हुसी, पूजेसा।
(सभी पुरुष वचन)

२ भूतकाल आइयो आयो,ठयो रखियो,थयो गयो किलेव गळीमयो।

३ वर्तमान अस्तूधन तपिये आवे चिये मझार्य मेलहा करावड।

४ संयुक्त- नीच परो न संताप न देख मुख परी न पार पड़ोल
नव मुझसे रमाड़ न रोळ र, मीतरवै नहीं इत्यादि २

सानुनासिक वर्ण के पहले आये हुए आकार वाले शब्दों पर राजस्थानी में अपनी विशेष ध्वनि के अनुसार अनुस्वार लगाने की विशेष और पुरानी प्रथा है। हरिरस में इस नियम के अनुसार— कोमला रांणी कांच वांदण नामैं नामैं नामीजै रांमल

सामुंहा, हांणी आदि पचासों शब्द हैं।[२२]

राजस्थानी के भविष्यत्काल अन्य पुरुष क्रियाओं के सी और ऐला प्रत्ययों मे ऐला प्रत्यय की केवल एक ही क्रिया का प्रयोग हरिरस मे हुआ है।

एक वचन प्रथम पुरुष सर्वनाम पद हूं (हौं) का कर्म कारक मालाणी प्रान्तीय रूप हरिरस मे मना और असहा है। म्हनै और मनै भी इसके अन्य रूप हैं। असहा (असां) दोनों वचनों में प्रयुक्त होता है—

२२- सानुनासिक वर्ण और उसके पूर्व आकार पर अनुस्वार लगने का नियम उन क्रियाओ पर लागू नही होता जिनके (आकार और सानुनासिक के) बीच मे वकार का आगम हो सकता है और उनके अर्थ में कोई अन्तर नही आता। जाणो > जावणो (=जाना), आणो > आवणो (=आना), खाणो > खावणो (=खाना) इत्यादि, ऐसे व आगमवाले जाणो, आणो, खाणो आदि क्रिया शब्दों पर अनुस्वार नही लगता। इनमे व का लोप समझा जाना चाहिये। परतु जिन शब्दो मे व का आगम या लोप नही है, उनमें अनुस्वार लगता है, जैसे—आंणो (=वधू का ससुराल जाना), जांणो (=मानो, गोया) इत्यादि।

इसी प्रकार सानुनासिक और उसके पूर्व ऊकार वाले शब्दो में भी प्राय यही नियम लागू होता है।

—लेखक की अप्रकाशित बाल-व्याकरण से उद्धृत

से प्रयुक्त है। कहीं साधारण बोलचाल के अनुसार है और कहीं काव्यगत सुविधा को लेकर विशेष्य के बाद मे प्रयोग हुआ है, जैसे— कोड तेतीस, तांणां वांणां सव्व, तीरथ सबै, पुहप भार श्रट्ठार, सरण असरण, इत्यादि।

एकवचन पुल्लिग सज्ञा के ओकारान्त विशेषण बहुवचन मे बोलचाल की भाषा की भाँति आकारान्त ही हैं पर कहीं कहीं विशेषण मे ज्यादा जोर देने के लिये अकारान्त रूप भी हैं, जैसे घण घणा घाट इत्यादि।

साधारण विशेषण शब्दो के अतिरिक्त अधिकतर सर्वनाम शब्द जैसा कि ऊपर कहा गया है विशेषण के रूप मे प्रगट हुए हैं।

हरिरस में सख्या वाचक विशेषणों की प्रचुरता है और उनके भिन्न-भिन्न रूप कतिपय उदाहरणों के साथ द्रष्टव्य हैं—

इक, इको, एक, एको, एकोज, हिक, हेक, हेकण। एकलो।
दोय बे, दुइ, दुई, दु उभै। दूजो, विहां विहु, वियो, दूण।
तीन, तिर, त्रि, त्री, त्रय, त्रै, त्रुर। त्रणं।

(नमो नर तीन पगा त्रिभुवन्न।
मिटइ त्रुर लोक पंठो जळ मांह)

चत्र, चतुर, चार, उभैकर-दूण। चारिय, चियारै।

(उभैकर-दूण आवद्ध असख)

पच (नमो वध पच अखे चत्र वीर)

छ खट। (वदं पग रा खट साख वखांण)

सत, सात, सप्त (सपत्त पियाळ न सात समद)

आठू। (आठू पहोर मणद सू)

नव, नवे. नवो (सुमरण सम सोवा नहीं, नर देखो नव खड)

दस दसै दह (नमो दस काळ दसा दह कंध)

दुवारस (दुवादस मांमह मास दिपन्न)

चवद चवद्र, चवदै (दिसावर रोहर चवद रतन्न ।

(भुवन्न चवद्द वेदे बस बोल)

सोळ (सोळ मात पूजा संभारिस । सत सोळै कळा प्रकास करें)

अढार, अठार (नमो वह बीच भार पुराण । पुहप भार अढार)

इकीस (नमो दिन वार मसाधी इकीस)

तेतीस (अमर कोड़ तेतीस प्रभु तो पार न पामै)

बावन्न (नमो बळि बांमण रूप बावन्न)

चउसठ (चवादस तीरथ चउसठ वाग)

चौरासी (चंद जाये चौरासी)

सत (१) (पुना सत अस्तुति करत पचेस)

तीन सो साठ (कवि ईसर हरिरस किधी छंद तीन सौ साठ)

अठासी हजार (अठासी हजार मर्षे मन हेक)

इको न सहस्स (पुरै नरिवाण इको न सहस्स)

सहस सहस्स सहस, सहस्सर । (सहस्सर बाहुव सेस संभार)

कोड़ कोट कोटि, कोड़ी करोड़ । (नमो दस कोड़ मर्द ब्रहमंड)

त्रितीस करोड़ (कवी सुर नाम त्रितीस करोड़)

कोड़ छपन्न (जपे जस कोड़ छपन्न जादुव)

लख चुरासिय लख्ख (जिया अवतार चुरासिय लख्ख)

पदम्म अढार (पदम्म अढार धतारिय भार)

अनेक, असख, असख्य आदि शब्द भी सख्यावाची विशेषण हैं।

अवधी ब्रज आदि कई भारतीय बोलियों[२४] की भांति डिगल भाषा के साहित्य मे सज्ञाओं और विशेषणों आदि के नामों मे काव्यगत सुविधा के लिये रूप-परिवर्त्तन की अपनी एक अलग शैली

२४- राम चरित मानस मे, जो हरिरस की समकालीन रचना कही जाती है, शब्दो के रूप-परिवर्त्तन की एक बडी शृ खला उसमे दिखाई देती है। शब्दो की यह रूप-परिवर्तन-परपरा उस समय की सभी प्रान्तीय भाषाओ मे देखी जाती है। मानस की बैंसवाडी (अवधी) भी इमसे मुक्त नही रह सकी। ऐसे शब्दो मे अवधी और राजस्थानी के शब्दो मे कितना अतर वा मेल है इसे देखने के लिये मानस के कुछ शब्द राजस्थानी शब्दो के साथ यहा दिये जा रहे हैं।

मानस की अवधी	राजस्थानी	हिन्दी
भुअग	भुयग	भुजग
जागवलिकु	जागवलिक	याज्ञवल्क्य
छमा	खमा, छमा	क्षमा
छत	छत	क्षत
अछत	अछत	अक्षत
पसाउ	पसाय पसाव	प्रसाद
लुबुध	लुवध लुद्ध	लुब्ध
लोई	लोय, लोग	लोक
सवदरसी	समदरसी	समदर्शी

कीट=कंटभ
कुंभेण=कुंभकर्ण
कोयलाराणी=कोकिलारोहिणी
खर दूख=खर और दूषण
खोण=क्षोणि
गरम्भ-जगत्त=जगत् गर्भ
गळकासिला=गडकी शिला
गिनान-विसभ=ज्ञान-विश्रभ
जदूव=यादव
जमन्न=जैमिनी
जांमदगन्न=यमदग्नि
जीवण-जद्द=यादव-जीवन
जुजट्ठळ=युधिष्ठिर
जुआळ=जगड्वाल
द्रजीत=इन्द्रजीत
द्रजोण=दुर्योधन
पोहकरनम=पुष्करनभ
प्रकर्त्तराजान=प्रकृतिराजन्
मुताहळ=मुक्ताफल
म्रगकासव=मृगकश्यपु
रज्जियो=राजन्
लोकालोक महा ब्रहमड=लोकालोक और महा ब्रह्माण्ड
वालखिला=वालखिल्य
वासिठ=वशिष्ठ
विनाण=विज्ञान, ज्ञानमय बात, रहस्य
वुछाव=उत्सव
सत्त-अणद-सचेत=सच्चिदानद
सावेव=सावयव (सारूप्य)
सिदज्ज=स्वेदज

इत्यादि २

हरिरस काव्य में प्राय. सभी कारक विभक्तियों का प्रयोग हुआ है। कुछ मालाणी प्रान्तीय रूप भी हैं। प्रयुक्त विभक्तियों के रूप दिये जा रहे हैं—

कर्म कारक— नै, नां
करण कारक— सूं, हूं, थी, थिय
अधिकरण कारक— में, मां, मझ, मांझ, मांझल, महीं

इस प्रकार ध्वनि समूहों के आधार पर मोटे रूप से हरिरस के लिये ही नहीं; वरन डिंगल भाषा और साहित्य के लिये निम्न प्रकार केवल १० स्वरों और ३२ व्यंजनों की वर्णमाला पर्याप्त समझी जा सकती है—

अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ

ङ ञ म ण

क ख ग घ

च छ ज झ

ट ठ ड ढ

त थ द ध

प फ ब भ

य र ळ व

ह स ल ड़

—लेखक की अप्रकाशित बाल-व्याकरण से

विषय-विभाजित हरिरस और उसके छंद

प्रस्तुत संस्करण अद्यापि प्रकाशित संस्करणों मे अपना विशेष महत्व रखता है और वह है उसका विषय विभाजन। वैसे सभी (३६० छंदों के) पूर्ण संस्करणों मे सभी विषयों के छंद बिखरी हुई स्थिति मे, लेखकों की अपनी अनधिकार प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते हुए अनेक प्रकार के पाठान्तरों के रूप मे प्राप्त हैं। अनेक प्रतियों के अवलोकन से यह पता चलता है कि पाठ और विषय-भेदन की यह प्रक्रिया बाधा रहित चलती रही है। यही कारण है कि

किसी भी प्रति का किसी अन्य प्रति से न तो पाठ-साम्य है और न विषयानुक्रम-साम्य ही। प्रस्तुत संस्करण में भी विषय की दृष्टि से कोई-कोई छन्द इधर-उधर प्रतीत होते हैं परन्तु जिस रूप में यह ग्रन्थ है, उसका अध्ययन और मनन करने से यह यथातथ्य ही ज्ञात होता है। ज्ञान-कोष का अंतिम कुछ अंश ऐसा है जो इस कोष से मेल खाता हुआ नहीं दिखाई देता। यह अंश हरिरस का एक प्रक्षिप्त पाठ है, जिसमें हरिरस की महिमा के साथ कथित विषयों की सम्मिलित रूप से पुनरावृत्ति कर उनमें दृढ़ आस्था व्यक्त की गई है। वर्णित विषय पर बल देने के लिए अच्छे कवियों की यह परम्परा रही है। अतः जो द्विवीकरण ईसरदासजी ने किया है वह सर्व सामान्य धर्म के लिये एक उचित प्रकार है।

पुरानी परिपाटी के अनुसार विषयों के शीर्षक प्रायः मौलिक में और राजस्थानी भाषा में लिखे हुए थे जिनका भावार्थ लेकर हमने हिन्दी शीर्षक दिये हैं। अथ अवतारां रा नाम, अथ श्री चरणां री महमा अथ हरी सिंवरणरी सीख आदि शीर्षक वाले नामों को क्रमवार नामावलि श्री चरण महिमा और श्री हरि-सुमिरण उपदेश शीर्षक देकर हिन्दी रूप दिया है। श्री सत्य महिमा (१२१) और श्री मद्भागवत महिमा (१२२) ये दो शीर्षक-नाम हमने अपनी ओर से जोड़े हैं।

हरिरस में कुल पांच प्रकार के छंद व्यवहृत हैं। जिनमें दोहों की संख्या १ २ गाथा २ (चौ-पदी १ और १ दुपदी) त्रिभंगी १ मोतीदाम २ १ और छप्पय २१ है। कोशानुगत छंदों

की सख्या ११४, १४७ और १०० हैं।

हरिरस की 'भक्ति-ज्ञानामृत भावार्थ दीपिका' नाम्नी भावार्थ-टीका के अतिरिक्त डिंगल साहित्य के शब्दों के अर्थ जानने के लिये शब्दों के यथातथ्य और व्यवहृत रूपों के साथ सयुक्त क्रियाओं और अन्य सयुक्त शब्दों का हमने ४७ पृष्ठों का एक शब्द-कोश भी परिशिष्ट में दे दिया है, जिससे भावार्थ समझने में सुविधा रह सके।

अन्य परिशिष्टों में हरिरस के छन्दो की अनुक्रमिक प्रथम पंक्ति सूची, जिन २५। ३० हरिरस की प्रतियों से मिलान कर यह सस्करण तैयार किया गया है, उनके अतिरिक्त अनेकों प्रकाशित और अप्रकाशित प्रतियों से शताधिक बहु-प्रचलित पाठान्तर और प्रक्षिप्त पाठ-परिशिष्ट, छोटे हरिरस के दो पाठों का परिशिष्ट और अंतिम पाँचवां परिशिष्ट ९६ पृष्ठों का महत्त्वपूर्ण कथा-कोश है, जिसमे हरिरस के अंतर्गत आये हुए भक्त गणों महात्माओं, तीर्थों, परिक्रियाओं और पारिभाषिक आदि लगभग १९५ नामों का प्रकरण से सबध रखने वाला सक्षिप्त परिचय दिया गया है। इन परिशिष्टों के पूर्व विषयानु-रूप परिशिष्ट परिचय दिया गया है, जो इस भूमिका की कडी रूप मे पठनीय सामग्री है।

हरिरस के कोश तक के २१५ पृष्ठ अग्रवाल प्रेस, मथुरा मे छपे हैं और उसके आगे की समस्त सामग्री श्री साधना प्रेस, रतनगढ (राजस्थान) मे छपी है। मथुरा से बंद कर रतनगढ में छपवाने की हमारी विवशताओं के सबध मे हम कुछ नहीं कहना चाहते। विलब की बात को छोड कर अन्य बातें यह पुस्तक ही कह सकेगी।

आभार

हरिरस के पाठों की जाँच और उसका भावार्थ लिखने में मेरे परम मित्र मरुधर स्व० पंडित श्री रामकरण गुप्त ने जो सहायता की थी वह ऋण मेरे पर सदा ही रहेगा। उनकी उत्कट इच्छा थी कि इसका भावार्थ मारवाड़ी और हिंदी दोनों भाषाओं में और इसके सभी शास्त्रीय और दार्शनिक अभिधानों का बृहत् कथा कोश केवल मालूम या मारवाड़ी में लिखा जाय जिससे सर्व-साधारण ग्रामीण जनता समझ कर इस रसामृत का पान सुगमता से कर सके। उनकी इस इच्छानुसार तो यह नहीं बन सका; पर उसकी आंशिक पूर्ति द्वारा उनकी स्मृति में उनका यह प्रिय ग्रन्थ उनको समर्पण करता हूँ।

स्व० श्री रामदेवजी चोखानी का भी मैं आभारी हूँ जिनकी प्रेरणा इसको शीघ्र प्रकाशित करने की सतत मिलती रही और विराम नहीं होने दिया।

मेरा सम्पादित हरिरस अशुद्ध ढंग से प्रकाशित हुआ। इसका संताप और पश्चात्ताप मित्रवर श्री सीतारामजी लालस को मेरे से अधिक हुआ। उनकी इस सहृदयता और सद्भावना से प्रेरित होकर मैं इस नवीन संस्करण के प्रकाशन की ओर प्रवृत्त हो सका एवं इस तथ्य की जाँच और गहराई में उतर कर तथ्यों को प्रकाश में लाने का जो सत्प्रयत्न श्री अगरचंदजी नाहटा ने किया, इसके लिये मैं इन दोनों महानुभावों का अत्यन्त आभारी हूँ।

जिन जिन महानुभावों ने मुझे अपनी प्रतियाँ देखने को दी उनकी सूची बड़ी है, उनमें से कुछ का नामोल्लेख ऊपर किया है।

उन सभी का मैं वहुत ही आभारी हूँ और सबसे अधिक आभारी हूँ, हरिरस और उसके रचयिता ईसरदासजी के परमोपासक ठाकुर मोतीसिंहजी का। जिन्होंने अपने नित्य-नियम की पाठ-पुस्तक और पूजा-पुस्तक होते हुए भी दो दिन तक अध्ययन करने को अपनी पुस्तक मुझे दी। यही पुस्तक इस सस्करण के सम्पादन की मुख्य हस्तलिखित प्रति है।

श्री नेमीचदजी पुगलिया ने कोश के शब्द छाँटने और उनकी चिटें वनाने मे योग दिया अत इनका भी आभारी हूँ।

परम सुहृदवर और मेरे सहयोगी श्री मुरलीधरजी व्यास का किन शब्दों मे आभार प्रदर्शित करू कुछ समझ मे नहीं आता। बीकानेर मे मेरी लवी बीमारी मे घटों ही नहीं, रात के नौ-दस वजे तक पास मे रह कर कथा-कोश लिखने मे सहयोग देकर जो श्रम उठाया वह उनकी आत्मीयता का एक आदर्श है।

अपने कालेज काम मे और सदन-निर्माण काम मे अत्यन्त व्यस्त रहते हुए भी प्रूफ देखने और भूमिका आदि लिखने का चि० भूपतिराम ने जो सहयोग दिया उसके लिये अपनी शुभाशिष के साथ भगवान् से सर्वदा उसकी मगलमय शतायु की प्रार्थना करता हूँ।

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट के विद्वान् अधिकारी श्री अगरचन्दजी नाहटा और श्री लालचन्दजी कोठारी का विशेष आभारी हू जिन्होंने इन्स्टीट्यूट की ओर से इसे ऐसे सुन्दर रूप में प्रकाशित करने के लिये अपना अमूल्य योग दिया।

कार्य भार और अन्य कई विवशताएँ होते हुए भी श्री साधना प्रेस रतनगढ़ के अधिकारियों ने मथुरा के अधूरे मुद्रण काम को अपने हाथ में लेकर पूरा करने का जो सहयोग दिया उसके लिये वे धन्यवाद के पात्र हैं।

साकरिया-सदन
वल्लभ विद्यानगर
(गुजरात)

निवेदक
प्रो बदरीप्रसाद साकरिया

कर्म कांड

श्री हरिरस

मगलाचरण

१. श्री सरस्वती-गणपति वन्दना

दूहो

सरसति स्नेहे हो जपा, गणपति लागा पाय ।
ईसर ईस अराधवा, सदबुध करो सहाय ।१।

श्री सरस्वती का स्नेह पूर्वक स्मरण और श्री गणपति के चरणो का वन्दन करके मैं (ईश्वरदास) प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे सद्बुद्धि देकर ईश्वर आराधना मे मेरी सहायता करिये ॥१॥

गाथा

रिध-सिध दियण कोयलाराणी
बाळा बीजमत्र ब्रह्माणी
वयण-जुगति द्यौ अवचळ वाणी
पुणा क्रीत जिम सारगपाणी ।२।

ऋद्धि-सिद्धि की देने वाली हे कोकिलारोहिणी देवी भगवती ! आप ही बालस्वरूप, बीजमत्र और ब्रह्माणी (प्रणव स्वरूप, गायत्री और सरस्वती) हैं । आप मुझे युक्ति युक्त और अविचल वाणी प्रदान कीजिये, जिससे मै सारगपाणि भगवान् विष्णु की कीर्त्ति का वर्णन कर सकू ॥२॥

२ श्रीगुरु वन्दना

दूहो

लागां हूँ पहला लळ पीतांबर गुरु पाय ।
भेण महारस भागवत पायो जेण पसाय ।२।

मैं (ईश्वरदास) सर्व प्रथम अपने गुरुदेव श्री पीताम्बरदासजी के चरण-कमलों में झुक कर प्रणाम करता हूँ जिनकी कृपा से श्रीमद्भागवत में वर्णित (हरि चरित्र के परमानन्दकारी) महान् रस के रहस्य को प्राप्त कर सका हूँ ।।२।।

३ कथारम्भ स्तुति

दूहो

भगतवछळ ! मो दे भगति, भांज परा सहु भ्रम्म ।
मूझ तणा क्रम मेटवा कथां तुहाळा क्रम्म ।४।

(ईश्वरदास कहते हैं कि) हे भक्तवत्सल ! मेरे समस्त सशय मिटाकर मुझे आपकी भक्ति का दान दीजिये जिससे मैं अपने (शुभ और अशुभ) कर्मो का नाश करने के लिये आपके चरित्रों का वर्णन करूं ।।४।।

पीठ-धरण धर पाटली हर-सुत लेखणहार ।
तउ तोरा चरितां तणों, परम न लब्भ पार ।५।

समस्त पृथ्वी तल की यदि पाटी बना ली जाय और उस पर श्री गणेशजी स्वयं लिखने वाले हों तो भी हे परम प्रभो आपके चरित्रों का पार नहीं पाया जा सकता ।।५।।

तो अै हो पूरा तवण, सका केम समराथ ।
चत्रभुज ! सह थारा चरित, निगम न जाणै नाथ ।६।

तो फिर हे चतुर्भुज प्रभो ! मैं उन्हे वर्णन करने मे सपूर्णतया समर्थ ही कैसे हो सकता हूँ ? हे नाथ ! जिन आपके समस्त चरित्रो को वेद भी तो नही जानते ।।६।।

कथा केम ईसर कहै, खाण सकळ प्रत खेत ।
वयण स्रवण ना मन वसै, निगम अगोचर नेत ।७।

ईश्वरदास कहते है कि मे उस परब्रह्म का कथन कैसे करूँ जो कि स्थूल, सूक्ष्म और कार्य-कारण समस्त सृष्टि रूप सकल खानि के प्रति आधार हैं । और जो न तो वाणी द्वारा वर्णन किया जा सकता है, न कानो से सुना जा सकता है और न मन से मनन किया जा सकता है (जो न तो वाणी का, न श्रवण का और न मन हो का विषय है) । जिसकी साक्षी शाश्वत वेद अगोचर और नेति-नेति कहकर देते हैं ।।७।।

देव ! कसी उपमा दिया, तैं सरज्या सह कोय ।
तो सारीखो तु हिज है, अवर न दूजोहोय ।८।

इसलिये हे प्रभो ! आपकी महिमा का वर्णन करने के लिए ससार मे कोई वस्तु ऐसो नही जिसकी उपमा आपको दी जाय, क्योकि उपमा देने योग्य ससार के जड-चेतन आदि समस्त पदार्थ आपही ने रचे हैं जो कि नाशवान् होने के कारण अपूर्ण हैं । इसलिए यही कहना ठीक होगा कि आपके समान तो आप ही हैं, दूसरा हो ही नही सकता ।।८।।

आभ विछूटा मांणसा, हैं घर झल्लणहार।
धरणीधर ! घर छडता असहां तू आधार।६।

मर्त्यलोक से बिछड़े हुए प्राणियों को आपका नाम ह संसार (पृथ्वी) धारण करने वाला है परन्तु हे पृथ्वी को धारण करने वाले धरणीधर ! संसार (पृथ्वी) को छोड़ते समय हम समस्त जीवों का आश्रय तो केवल आप ही हैं ॥६॥

नारायण ! हों तुझ नमां, इअ कारण हरि ! अझ।
जिअ दी ओ जग छडणो, तिअ दी सोसू कज्ज।१०।

इसलिये हे नारायण ! जिस दिन यह संसार छोड़ना है उस दिन आप ही से काम है। अतएव हे हरि ! आज ही से मैं आपकी आराधना प्रारम्भ कर देता हूँ ॥१०॥

छंद त्रिभङ्गी

माहरा करम मेटवा माधव
क्रम हों कथित तुहारा केसव
नांम सुहाळो हों घणनांमी
सासोसास समारिस सांमी ।११।

हे असंख्य नामों वाले माधव ! मेरे कर्म बंधनों का नाश करने के लिए श्वास प्रति श्वास तेरा सुमिरण करता हुआ तेरे पावन चरित्रों का इस हरिरस ग्रन्थ में वर्णन करूंगा ॥११॥

---

४. अवतार नामावलि

छद चिमखरी

ऋखभ कपिल हयग्रीव विसभर
दत्तात्रय हरि हस दमोदर
राय-त्रिकुठ धनतर रिक्खभ
गरुडारुढ प्रथू प्रसनीग्रभ ।१२।

मच्छ कच्छ वाराह महम्मण
नारसिघ वामन नारायण
दुज्जराम रघुराम दिवाकर
किसन बुद्ध कलकी करुणाकर ।१३।

नारद व्यास वद्रीनारायण
परम निरजण मुक्त सुपायण
वळि अवतार तुही वळि वधण
भक्त तणा धरिया दुखभजण ।१४।

हे विश्वम्भर । आपने दीनो और भक्तो के कष्ट मिटाने के लिये वृषभ, कपिल, हयग्रीव, दत्तात्रय, हरि, हस, दामोदर, वैकुण्ठपति विष्णु, धन्वन्तरि, ऋषभ, गरुडारूढ, पृथु, पृश्निगर्भ, (ध्रुव नारायण, श्रीकृष्ण), मच्छ, कच्छ, वाराह, नृसिह, वामन, नर-नारायण, परशुराम, सूर्यवशी श्री रामचद्र, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि, नारद, व्यास, परम निरजन और मुक्तिदाता श्रीबदरीनारायण और वलि का अवतार धारण कर स्वय वलि

को वामन रूप द्वारा बाँधना—ऐसे अनेक अवतार धारण किये। (अथवा नारद व्यास और बदरीनारायण इत्यादि सब से परे निरञ्जन (निर्गुण) भाव से अपने भक्तों को मोक्ष देने के निमित्त ये सब अवतार आपने धारण किये। और हे भक्तों को वस बँधाने वाले ! आपने अनेक अवतार धारण कर भक्तों के दुखों को अनेकविध नष्ट किया है ।।१४।।) ।।१२-१३ १४।।

> जग अवतार नमो जगदीसर
> अनत रूप धारण तन ईसर
> सविज हरि अवतार तुहारा
> सदगत लाहु छूटें ससारा ।१५।

यज्ञ का अवतार धारण करने वाले हे जगदीश्वर ! आपको नमस्कार है। आप अनंत रूप और शरीरों में अनन्त अवतार धारण करने वाले हैं। जिनका वर्णन करने से ससार के बन्धनों से छुटकारा होकर सद्‌गति की प्राप्ति होती है ।।१५।।

५ अवतार चरित्र

छंद मोतीदाम

> विसव्व वणाविय केतिक बार
> ब्रहम्माय हाथ दियो वहवार
> आपोपिय इच्छाय आप अलक्ख
> सिया अवतार पुरासिय लक्ख ।१६।

प्रभो ! आपने अनेकों बार विश्व की रचना की और प्रत्येक बार उसके उत्पत्ति-क्रम का व्यवहार (व्यापार) ब्रह्माजी

को सौप दिया। और फिर आपने ही उसमे अपनी इच्छा से अलक्षित रूप द्वारा चौरासी लाख योनियो मे अवतार धारण किये ॥१६॥

हुओ दिगमूढ ब्रहम्माय देख
अजपाय दाखव रूप अलेख
सनक्क सनातन गात सुरीत
चिताविय ब्रह्माय हस चरीत ।१७।

अजपा जाप द्वारा जपने योग्य आपके इस अलख रूप को अपनी सृष्टि मे इस प्रकार देखकर ब्रह्मा दिङ्मूढ हो गये। उस समय आपने सनक सनातन आदि मानस पुत्रो के (रूप मे) और हसावतार धारण किये और उनके सशय को मिटाकर उन्हे सचेत किया ॥१७॥

सुतो वड-पान समाध समद
माया सव सावट बाळमुकंद
उपन्नाय दाणव दोय अजीत
भजे सव देव हुआ भयभीत ।१८।

विराट विश्व की सब माया को समेट कर प्रलय-समुद्र के बीच वट पत्र पर समाधि लगाकर आप बालक रूप मे सो गये। उस समय मधु और कैटभ नामक दो अजय दैत्य उत्पन्न हुये जिनसे भयभीत होकर देवता लोग इधर-उधर भागने लगे ॥१८॥

पुकारत आय तु पास परम्म
उवार विसन्न ! कहे सुर अम्म

प्रमेसर साभळ देव पुकार
विधूंसण सत्र हुओ तिहि वार ।१६।

देवतार्यों ने मापकी शरण में माकर पुकार की कि हे परमेश्वर विष्णो ! माप हमें बचाइये । उनकी पुकार सुनते ही माप उनका नाश करने के लिए तैयार होगये ॥१६॥

विहांसू हि हेकण सोधिय नाथ
निरोहर मांहि कियो जुध नाथ
यिह्नू मधु कीट यसा बळ-जुध
जिसा तैं दांणव माहुव जुद्ध ।२०।

महाबली मधु और कैटभ दानों को समुद्र के अन्दर एक ही बाँह में पकड़कर उनसे बाहु-युद्ध करके आपने उनको जीत लिया ॥२ ॥

यईसां आगळि देव वतार
उवारिय देव किताइक वार
करेवाय देव तणा वड काम
रह्यी विच देत महाबळ राम ।२१।

इस प्रकार कई बार दैत्यों द्वारा सताये जाने वाले देवतार्यों को आपने छुड़ाया और उनके बड़े-बड़े कार्य सिद्ध करने के निमित्त अथाह समुद्र के अन्दर प्रवेश कर दैत्यों के मध्य हे राम ! आप इस प्रकार लीला करते रहे ॥२१॥

महागिड़ पेठ महाजळ मज्झ
किया जुध कोध प्रियवित्रय कज्ज

प्रिथविय जातिय रेस पयाळ
दढा ग्रहि राखिय दीनदयाळ ।२२।

दीनो पर दया करने वाले हे वाराह भगवान् ! जब दैत्य लोग पृथ्वी को पाताल मे ले जारहे थे तब आपने वाराह अवतार धारण कर उसको अपने दांतो के ऊपर धारण करके उसकी रक्षा की। इस प्रकार कई वार महा-सागर मे घुस कर इस पृथ्वी की रक्षा के लिए दैत्यो से कितने ही वडे वडे युद्ध किये ।।२२।।

रखी धर वार किता तै राम
सजै हिरणाख विसै सगराम
अकासय वार किता तै आव
वसाविय त्रीपुर अम्रित वाव ।२३।

कितनी वार हिरण्याक्ष के साथ सग्राम करके आपने पृथ्वी की रक्षा की और कितनी ही बार अन्तरिक्ष से आपने अमृत वर्षा द्वारा त्रिलोकी को वसाया ।।२३।।

वेदा रीय व्हार करी कई वार
सुधी लड कीध दईत सँघार
विमोहिय रूप अगाध वणाय
जटाधर काज दईत जळाय ।२४।

कितनी ही वार दैत्यो का सहार करके उनसे वेदो की रक्षा की और भगवान् शकर के लिए अत्यन्त सुन्दर मोहिनी रूप धारण कर भस्मासुर दैत्य को जला डाला ।।२४।।

किताइक वार विसे कलपंत
बाँधी तं सींग प्रिथी वळवंत
हुलाविय केतिक वार हमल्ल
मथ्यौ महाराण स हेकण मल्ल ।२५।

कितनी ही बार मत्स्यावतार धारण करके कल्पों के अन्त में पृथ्वी को अपने (मत्स्य) शृङ्ग द्वारा बाँध कर उसकी रक्षा की। कितनी ही बार सेनायें चढ़ाकर और कितनी ही बार अकेले ही आपने समुद्र का मन्थन किया ।।२५।।

किता तैं वार सिधा किसन्न
रिणायर रोळ'र चउद रतन्न
मथ्यौ तैं वार किता महराण
सुरां लई अम्रित दीध सुजांण ।२६।

हे कृष्ण ! आपने कितनी ही बार समुद्र का मन्थन करके उसमें से चौदह रत्नों को निकाला और कितनी ही बार देवताओं को अमर बनाने के लिए समुद्र मन्थन द्वारा प्राप्त (चौदह रत्नों में से) अमृत को उन्हें पान करा दिया ।।२६।।

दळ्या कई वार वडाळ दईत
इन्द्रापुर दीधउ सक अजीत
हण्या नख वार किता हिरणख्ख
भवानि र भैरव दीधौ भख्ख ।२७।

पाळ्या प्रस वार किता प्रहळाद
सुणतां सेवक[1] आरत साद

दिया तैं वार किता वरदान
थप्पो ध्रुव राज अवीचळ थान ।२८।

कितनी ही वार आपने बडे-बडे दैत्यो का नाश करके उनसे इन्द्रपुरी को छीना और उसे पुन इन्द्र को दे दिया। कितनी ही वार हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष को नखो द्वारा विदीर्ण करके भवानी और भैरव को उनका भक्ष दिया और कितनी ही वार भक्त प्रह्लाद की आर्त्त पुकार को सुन करके उसकी रक्षा की और कितनी ही वार ध्रुव को वरदान देकर आपने उसे अचल स्थान दिया ।।२७-२८।।

पुकारां सत मुणी प्रतपाळ
दोडै उठ आरत दीनदयाळ
राख्यो तै वार किता गजराज
महावळि ग्राह हण्यो महाराज ।२६।

हे दीनदयाल ! दीनो और सतो की पुकारें सुन करके आप कितनी ही वार आतुर हो उठे। गजराज की रक्षा के निमित्त पैदल दौडकर आपने महावली ग्राह को मार दिया।।२६।।

दाव्यो बळ दाणव लीधो दांण
उपाविय पिंड जमी असमाण
बांध्यो तै वार किता बळराव
वगोविय दांणव कीध वणाव ।३०।

बलि दानव से कितनी ही वार दान के रूप मे पृथ्वी को प्राप्त कर, पृथ्वी से आकाश पर्यन्त विराट रूप धारण करके

उसे अपने ही वचनों द्वारा बाँध कर पाताल में भेजे जाने के लिए विवश किया। इस प्रकार ऐसे कई बनाव बनाकर आपने दानवों का नाश किया ॥३०॥

भगीरथ भेख भयौ तु, भुगोळ
करतिय आंणिय गंग किलोळ
कितायक बार नरा सुख कीध
दया करि देव त्रिविस्टप दीध ।३१।

कितनी ही बार भगीरथ के रूप में हे देव! पृथ्वी पर कल्लोल करती हुई गंगा को आप दया करके ले आये जिससे सहज ही प्राणीमात्र को स्वर्ग सुख का अधिकारी बना दिया ॥३१॥

हुआ असुरांण तणा हुलकार
पुणे जमदग्न मुखत पुकार
आयौ तिहि वार फरस्सत धार
सहस्सरबाहुव सेन सँघार ।३२।
खत्री वस वार कितायक खेस
प्रिथव्विय विप्रन कू दिय पेस
जिपे तें धार किता बलि जंग
रखावण सात जनेताय रंग ।३३।

असुरों के आक्रमण करने पर जब जमदग्नि ने आपको पुकारा, आपने तब परशु धारण कर सेना सहित सहस्रबाहु का संहार कर डाला। कितनी ही बार अपने माता-पिता को आज्ञा

का पालन करने के लिए वडे-वडे पराक्रमी राजाओ को जीत कर एव कितने ही क्षत्री-वशोका नाश करके उनके राज्य और उनकी पृथ्वी ब्राह्मणो को दान करदी ॥३२–३३॥

धरै नर देह अजोधिया धाँम
राजा दसरत्थ तणै घर राम
अनत विसामित राम अणाय
सजै रिख जाग सकाज सहाय ।३४।

सुवाहु मरीच ताडीका सँघार
महारिख कीध निसक मुरार
जनक्क तणै वळि आविय जाग
भुतेस धनूस भँग्यो वड भाग ।३५।

किधौ रव घोर महेस कोदड
ब्रवै तिरलोक डर्या बळवड
आयौ रिख कोप चवत अँगार
तज्यौ वळ चाप हुओ दुज त्यार ।३६।

अयोध्या मे महाराज दशरथ के घर आपने मनुष्य देह धारण किया। वहाँ आपके उस राम और लक्ष्मण रूप को महाराज दशरथ से महर्षि विश्वामित्र अपने यज्ञ की रक्षा के लिए माँगकर अपने साथ ले आये। आपने सुवाहु राक्षस और ताडिका राक्षसी को मार और मारीच को भगाकर हे राम ! विश्वामित्र ऋषि को आपने निर्भय कर दिया। वहाँ से राजा जनक के यज्ञ मे आकर हे महाभाग ! आपने शिवजी के धनुष को तोडा।

भगवान् शंकर के महा कठोर धनुष के टूटने से घोर शब्द हुआ जिससे तीनों लोक चकित हो गये और बड़े-बड़े शक्तिशाली भय-भीत होगये। महर्षि भगवान् परशुराम क्रोधाग्नि बरसाते हुए वहाँ आये किन्तु आपके पूर्ण कलामय ब्रह्मस्वरूप का परिचय पाकर उसमें शान्त होगये। और अपनी अहस्य माया शक्ति को आपकी अनिर्वचनीय ब्रह्म-शक्ति में प्रविष्ट कर मात्र अपने ब्राह्मण रूप में शेष होगये एवं अपना धनुष आपको अर्पण कर दिया ।।३४-३५-३६।।

कुओ वर ब्याव वुछाव विसेस
आये जहँ देव दिनेस धनेस
कुबुद्धि किकेइ कुमत्त किधेव
सिया वन रांम अनत सिधेव ।३७।

हे राम ! धनुष के टूटने पर आप चारों भाइयों का श्रेष्ठ विवाहोत्सव सम्पन्न हुआ। आपके सूर्यवंश में अवतीर्ण होने के गौरव से गर्वित और लालायित होकर इस अनुपम विवाह को देखने के लिए आपके वडेरे भगवान सूर्यदेव स्वयं और अपने विभ्य और अतुल वैभव को नगण्य समझते हुए देवताओं के कोषाध्यक्ष कुबेर एवं अन्य समस्त देवता लोग मनुष्य रूप धारण कर वहाँ आये। आपके राज्यतिलक के समय मन्थरा दासी की खोटी मति से प्रेरित होकर कैकेयी ने कुबुद्धि की जिसके कारण आपको लक्ष्मण और सीता सहित चौदह वर्ष का वनवास हुआ ।।३७।।

मिळ चर रांम किधौ गुह मीत
पचास कुटब किधौ सु प्रवीत

विरूप किधो सुपणेखाय वन्न
तदो खरदूख वछोडिय तन्न ।३८।

वहां आपने जो कार्य किये वे बडे विचित्र हैं—गगा पार करते समय गुह निषाद को अपना मित्र बनाकर उसे अपने हृदय मे लगाया। निषादराज गुह ने आपके चरणोदक को पान कर अपने कुटुम्ब को पवित्र किया। आपको वरण करने को आई हुई सुपनखा राक्षसी के नाक-कान काट कर उसे कुरूप कर दिया इस कारण खर और दूषण आप पर चढ आये जिनको भी आपने मार दिया ।।३८।।

हरी महम्माय धर्‌यौ छळ हाव
मिळै हनूमान महाबळ माव
विंधै सत ताड पमै कपि बोध
जदी बिहुँ भ्रात भिडै महा जोध ।३९।

रहसिय वाळि स किसकंध-राय
किधौ अद मीत सुग्रीव सकाय
उपाड बंधाड समदर ओड
कपी सम नील जके दु करोड ।४०।

धरी दध पाज महा नग धार
पदम्म अढार उतारिय पार
पडयौ वळि आय बभीखण पाय
लिधौ तिहि राघव कठ लगाय ।४१।

उगार वभीषण कीध अभीत
विधी तैं लंक अलीध वईन
दसानन कुभ अजीत द्रगीत
सधारिय लक वहोडिय सीत ।४२।
दळ लुमि धार किता दसकंध
बँध्यौ दध देव छुड़ावण बंध
लिधा दैं वार किता गढ लक
सँपारिय दैत मनाविय संक ।४३।

तब महामाया श्री सीताजी को रावण कपट भेष बनाकर हर ले गया। महाशक्ति-सम्पन्न हनुमानजी से मिलाप हुआ। वालि द्वारा त्रसित और निर्वासित कपि सुग्रीव से मित्रता की। सातों ताल वृक्षों का एक ही बाण द्वारा छेदन कर सुग्रीव को यह बोध करा दिया कि वरदान द्वारा अभय प्राप्त बालि को आप मार देंगे। जब महाबली बालि और सुग्रीव दोनों भाई आपस में भिड़े तो आपने बालि को मार दिया और किष्किन्धा का राजा सुग्रीव को बना दिया। इधर सुग्रीव ने नल नील जैसे कला विशारदों की देख रेख में दो करोड़ शिल्पी वानरों को समुद्र की तटों को ऊँचा उठाकर बाँधने के लिए प्रवर्त कर दिया। उन्होंने बड़े बड़े पर्वतों को रखकर ठेठ लंका तक पुल बना कर अठारह पद्म सेना को पार उतार दिया। रावण द्वारा अपमानित होकर विभीषण आपकी शरण में आया उसे आपने हृदय से लगाया। रावण से जीतने के पहिले ही आपने उसे लंका दे दी और उसे अभय कर दिया। किसी से भी नहीं जीते जाने

वाले रावण, कुम्भकरण और इन्द्रजीत इत्यादि महावली लका के दैत्यो का नाश करके आप जानकोजो को वापस ले आये। इस प्रकार कल्प-कल्प मे कितनो ही वार देवताओ को बधन मुक्त करने के लिये आपने समुद्र को वांधा और कितनो ही वार लका पर विजय प्राप्त कर रावण आदि दैत्यो पर धाक जमा कर उनका नाश किया ॥३९ से ४३॥

विखो व्रज माझ पड्यो बोह वार
धरै नख वार किता गिर धार
वजाडि तु वार किताइकं वंस
किता तैं फेरा जीत्योहि कस ।४४।

कितनी ही वार आपने श्रीकृष्ण के रूप मे अवतार धारण किया। व्रजभूमि मे इन्द्र ने कुपित होकर जब मूसल धार वरसाना शुरू किया जिससे घोर सकट छा गया, तब इन्द्र को लज्जित करने के लिये आपने गोवर्धन पर्वत को अ गुली पर उठाया और उसके नीचे आश्रय देकर समस्त व्रजवासियो की रक्षा की। परस्पर शत्रु बने हुए दुखी मानव समाज मे भेदभाव और अलगाव को दूर करके एक दूसरे के प्रति प्रेम और स्वकुटुम्बियो का सा व्यवहार करने के लिए मुरली की मनोहर तान मे मधुर सगीत द्वारा प्रेमाभक्ति का सचार करके समस्त ससार के उद्धार का उपदेश किया। कितनी ही वार आपने कस को जीता ॥४४॥

राजा उग्रसेन नु आप्यो तु राज
किधी जदुवस तणो सिध काज

कितावर पांडव ऊपर कीध
लाखाग्रह हूत उगारिय लीध ।४५।

और उसका राज्य उग्रसेन को देकर यदुवश का कार्य सिद्ध किया। पांडवों पर आपने कितने ही उपकार किये। उनको लाक्षागृह से बचाया ।।४५।।

दुसासण द्रोण गंगेव द्रुजोण
खपे कुरखेत अढार अखोण
किता तैं सेवग सारण काज
रच्यौ हथणापुर पांडव राज ।४६।

कितने ही भक्तों के कार्य सिद्ध करने के लिये दुशासन द्रोणाचार्य भीष्म और दुर्योधन आदि और उनकी अठारह अक्षौहिणी सेना का नाश करवा कर हस्तिनापुर में पांडवों का राज्य स्थापित करवाया ।।४६।।

जळा पख काळिय काळजवन्न
किधौ मुचकंद निमित्त किसन्न
बाणासुर छेद भुजा बळवत
किधौ जगजीत लखम्मिय-कंत ।४७।

हे श्रीकृष्ण ! कालयवन के नेत्रों की ज्वाला से जलाने के लिये मुचुकुन्द को आपने निमित्त बनाया बलवान बाणासुर की भुजाओं का छेदन कर हे लक्ष्मीपति ! आपने विश्व विजय की ।।४७।।

धरै सुम वार किता हर ध्यांन
महावण लोक अनोअन ग्यांन

भिदै कई वार असूर अभग
जुगोजुग कीध किताइक जग ।४८।

और हे श्रीकृष्ण ! कितनी ही वार स्वर्ग-पाताल आदि लोको मे ज्ञान प्रदान करने और उनके परस्पर के ज्ञान की प्राप्ति के निमित्त आपने अनादि और अयोनि रूप सच्चिदानद भगवान् श्रीशकर का ध्यान किया और अपनी नियमित पूजा के समय नियत कमल पुष्पो की सख्या मे एक कमल की कमी होजाने के कारण अपने कमल रूप नेत्र को निकाल कर अर्पण कर दिया। भगवान् शकर ने प्रसन्न होकर अपना सर्वोपरि और प्रिय अस्त्र सुदर्शनचक्र और त्रिभुवन मोहिनी सिद्धियो का आपको वरदान दिया जिससे युग २ मे कितने ही युद्ध करके नाश नही हो सकने वाले असुरो का नाश किया ॥४८॥

गुआळा सहेत रखो तै गाय
महादुख हूत छुडाविय माय
जळताय उत्तरा ग्रभ्भ मँझार
अनत परीखत संत उगार ।४९।

ग्वालों सहित आपने गायो की रक्षा की। माता देवकी को कस के महादुखो से छुडाया। हे अनन्त ! उत्तरा के गर्भ में सतप्त परीक्षित् जैसे सत का उद्धार करके ॥५०॥

निरभ्भय कीन अभैमन नार
मिळाविय गोप न्रकासुर मार
जिवाडिय नार तणी जयदेव
ग्रही चक्र राखिय पत्त गगेव ।५०।

आपने अभिमन्यु की स्त्री को निर्भय कर दिया। नरकासुर को मारकर गोपियों को गोपों से मिला दिया। भक्त जयदेव की मृत स्त्री को आपने जीवित कर दिया। चक्र को धारण करके भीष्म की प्रतिज्ञा को रखा ॥५०॥

पञ्चाळिय सांभळ दीन-पुकार
उबारिय लाज विस्तम्भिय वार
पुरं परिधान इको न सहस्स
रमापति ! तोर अभूत रहस्स ।५१।

द्रौपदी की दीन पुकार को सुनकर के उसके एक वस्त्र के स्थान पर सहस्रों वस्त्रों की पूर्ति कर आपने उसकी विषम स्थिति में लाज रखली। हे रमापति ! आपका रहस्य बड़ा अद्भुत है ॥२१॥

वछोडिय रुद्र कपाळ ब्रहम्म
किधौ सुकदेव अतीत करम्म
उगारिय स्राप थकी अमरीख
सदा किय सेवक आप सरीख ।५२।

ब्रह्मा का सिर काटने पर रुद्र को ब्रह्महत्या से मुक्त किया। शुकदेव को कर्म बन्धन से मुक्त किया। भक्तराज अम्बरीष को महाक्रोधी दुर्वासा ऋषि के शाप से बचाया और अपने भक्तों पर दया करके आपने उनको अपने समान बना दिया ५२॥

---

६. अवतार स्तुति

छद मोनीदाम

असखय तूझ तणा अवतार
ब्रहम्म स रुद्र लहै न विचार
नमो सनकादिक स्याम सरीर
नमो वय पच अखे चत्र वीर ।५३।

प्रभो ! आपके अगणित अवतार है जिनकी गिनती ब्रह्मा और रुद्र भी नही कर सकते । निन्य पाँच वर्ष की आयु वाले श्याम शरीर (भगवत् स्वरूप) को धारण किये हुये सनकादिक चारो भ्राताओ को नमस्कार है ।। ५३ ।।

नमो मही-साह वराह समत्थ
नमो हिरणाख हत्यौ निज हत्थ
नमो मछ स्रग मँडाण मुकद
नमो कळि रा सह दैत निकद ।५४।

पृथ्वी को अपनी दाढो मे रखकर हिरण्याक्ष को अपने हाथो से मारने मे समर्थ वाराह भगवान आपको नमस्कार है । कल्प के छठे चाक्षुर्ष मन्वन्तर के प्रलय काल मे समुद्र मे डूबी हुई पृथ्वी को अपने सीग से बाँधकर हे मत्स्य भगवान् ! आपने उसकी रक्षा की। ऐसे पाप रूप दैत्यो का नाश करने वाले हे मुकुन्द ! आपको नमस्कार है ।। ५४ ।।

नमो हयग्रीव निगम्म सहेत
नमो खळ मार हयानन वेत
नमो यिघ्र ! वेद समापण विघ्य
नमो सुर काज करे हरि सिद्ध ।५५।

भगवान् हयग्रीव आपको और आपके द्वारा निर्गत श्वास मय वेदों को नमस्कार है। रणक्षेत्र में दुष्ट हयग्रीव दैत्य को मारने वाले हे प्रभु ! आपको नमस्कार है। मधु दैत्य को मारकर आपने वेदों को ब्रह्मा के अधीन किया और देवताओं के कार्य सिद्ध किये। ऐसे हे महान् (विधि) विधाम आपको नमस्कार है ॥५५॥

नमो सम हंस त्रिलोकिय तात
नमो विघ ग्यान सुणावण वात
नमो प्रह्ळाद उधारण प्रम्म
नमो अगकासब मारण अम्म ।५६।

हे त्रिलोकी के पिता ! ब्रह्मा को वेदों का ज्ञान सुनाने वाले आपके हंसावतार को नमस्कार है। हिरण्यकशिपु को मम स्थान से मारने वाले और प्रह्लाद का उद्धार करने वाले भगवान् नृसिंह आपको नमस्कार है ॥५६॥

नमो कमठा धर रूप सकाय
नमो मंदराचळ पीठ भ्रमाय
नमो हरि आप अनत्तर होय
नमो सब रोग निवारण सोय ।५७।

मदराचल पर्वत को अपनी पीठ पर भ्रमण कराने वाले दीर्घकाय भगवान् कूर्म आपको नमस्कार है। समस्त रोगो का निवारण करने वाले भगवान् धन्वन्तरि आपको नमस्कार है ॥ ५७ ॥

नमो ध्रम देह विसभर धार
नमो मध्व व्यापक सोय मुरार
नमो बळि-बाँधण रूप बावन्न
नमो भर तीन पगा त्रिभुवन्न ।५८।

समस्त सृष्टि मे धर्म रूपी शरीर द्वारा व्यापक होकर समस्त विश्व का भरण पोषण करने वाले हे विश्वम्भर! आपको नमस्कार है। धर्म मय ब्राह्मण रूपी वामन शरीर धारण करके त्रिभुवन को त्रिपाद द्वारा नाप कर बलि को बाधने वाले हे मुरारि! आपको नमस्कार है ॥५८॥

नमो त्रय रूप दतात्रय देव
नमो जप तप्प स ध्यान अजेव
नमो जग आद-पुरक्ख जगीस
नमो अवतार असख अधीस ।५९।

जप, तप और ध्यान मे अजेय तथा ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन तीनो के एक रूप दत्तात्रय भगवान् आपको नमस्कार है। जगत् के आदि पुरुष (आदि कारण), जगत के ईश्वर, जड चेतनात्मक अथवा अनन्त विभूति मय अवतारों के अधीश्वर हे यज्ञ भगवान्! आपको नमस्कार है ॥५९॥

नमो नर-नारण भोग निवास
नमो दुख द्रूत उगारण दास
नमो गज तारण मारण ग्राह
नमो व्रज काज सुधारण वाह ।६०।

अपने दासों का दुःख से उद्धार करने वाले निरंतर ध्यानावस्थित रूप भगवान् नर-नारायण ! आपको नमस्कार है। ग्राह को मार कर गज को तारने वाले ! आपको नमस्कार है। व्रजवासियों के काज सुधारने वाले ! आपको नमस्कार है। आपको धन्य है ।।६०।।

नमो ध्रुव ध्यान हरी निरधार
नमो मनसा ध्रुव पूर मुरार
नमो पृत भूपत प्रिस्थू पुनीत
नमो अवनी अघ मेट अनीत ।६१।

अचल ध्यान धरने वाले भक्त ध्रुव की इच्छा को पूर्ण करने वाले हे हरि ! आपको नमस्कार है। पृथ्वी का पाप और अनीति का नाश करने वाले आपके पुनीत 'पृथु' नामक नृप रूप को नमस्कार है ।।६१।।

नमो रिख तापस रूप रिखभ
नमो अवतार उदार असभ
नमो कपिलेसर विस्ट करूर
नमो सुख-सम्र अलावण सूर ।६२।

असम्भव उदारवृत्ति वाले आपके तपस्वी और ऋषि रूप भगवान् ऋषभदेव को नमस्कार है। अपनी क्रूर दृष्टि द्वारा महाराज सगर के साठ सहस्र पुत्रो को भस्म कर देने वाले कपिल भगवान्! आपको नमस्कार है ॥६२॥

नमो रिख जामदगन्न मुरीस
नमो किय वार नछत्री इकीस
नमो रण रामण मारण राम
नमो किय सिद्ध वभीखण काम ।६३।

इक्कीस वार पृथ्वी को क्षत्रियो से रहित कर देने वाले देवताओ के ईश भगवान् परशुराम! आपको नमस्कार है। रावण को रण मे मारकर विभीषण का कार्य सिद्ध करने वाले भगवान् राम! आपको नमस्कार है ॥६३॥

नमो कन्ह रूप निकदन कस
नमो व्रजराज नमो जदुवस
नमो प्रम सत गऊ प्रतपाळ
नमो दुसटा-दळ दीनदयाळ ।६४।

कस का सहार करने वाले व्रजराज-यादव श्रीकृष्ण रूप! आपको नमस्कार है। अपने परम भक्त सतो और गौओ का प्रतिपालन करने वाले, दीनो पर दया करने वाले और दुष्टो का दलन करने वाले! आपको नमस्कार है ॥६४॥

नमो भव वोध भये भगवान
नमो ग्रहि जीव-दया उर ग्यान

नमो वेदव्यास निगम्म वखांण
नमो पढ़ कीध अठार पुरांण ।६५।

जीवदया और ज्ञान को धारणकर उसका संसार को प्रतिबोध देने वाले भगवान् बुद्ध ! आपको नमस्कार है। वेदों की व्याख्या रूप अठारह पुराणों को रचने वाले भगवान् वेद व्यास ! आपको नमस्कार है ।।६५।।

नमो इळ मेटण पाप अपार
नमो वरताविय सतजुग वार
नमो निकळंकिय नाथ नरेह
नमो कळि काळख नास करेह ।६६।

कलिकाल में पृथ्वी पर फैले हुये अपार कलुषित आचार विचार और पापों का नाश कर पुनः सतयुग को प्रवर्त करने वाले कल्कि भगवान् ! आपको नमस्कार है ।।६६।।

नमो अवतार अनंत अपार
नमो पढ सेस सहै नहि पार
नमो अतुळीबल तात-अनंग
नमो निरवांण नमो निरळंग ।६७।

हे अनन्त ! हे मोक्षरूप ! हे कारण से रहित ! हे अतुलित शक्ति सम्पन्न ! और हे कामदेव के पिता श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है। आपके अपार अवतार हैं जिनका भगवान् शेष भी पार नहीं पा सकते ।।६७।।

नमो प्रति सूरज कोट प्रकास
नमो वन माळिय लील विलास
नमो लख कद्रप लावण-तन्न
नमो मनमोहन रूप मदन्न ।६८।

करोडो सूर्य के समान प्रकाशमान् ! आपको नमस्कार है। लीला विलास करने वाले वनमाली ! आपको नमस्कार है। कामदेव को भी मोहित करने वाले लाखो कामदेवो के समान जिसका रूप और लावण्य है वह कामरूप भगवान् ! आपको नमस्कार है ।।६८।।

वदन्न हुलासत नेत्र विसाळ
मुगट्ट किरीट अखै गळमाळ
वसत्र सुपीत वपू घनवान
मकराकृत कुडळ सोभत कान ।६९।

उभै-कर-दूण आवद्ध असख
सारग पदम्म गदा चक्र सख
नमो पच व्रन्न[1] परम्म पुनीत
सितासित पीत सुरत्त हरीत ।७०।

---

१ भगवान् के शरीर में पचवर्ण विद्यमान हैं—
१. श्वेतवर्ण—नेत्र, दात, नख और शख।
२ श्यामवर्ण—शरीर और केश ।
३ पीतवर्ण—पीताम्वर।
४ रक्तवर्ण—ओष्ट और हाथों पावो के तल।
५ हरितवर्ण—मयूर पख, दुपट्टा औरचित्त।

(कवि उस त्रिभुवन-मोहिनी रूप का वर्णन करता है-) आपका मुखारविंद नित्य प्रफुल्लित है, नेत्र विशाल हैं सिर पर मुकुट किरीट और गले में वैजयंती पुष्पमाला। मेघवर्ण शरीर पर सुन्दर पीत वस्त्र और कानों में मकराकृत कुण्डल धारण किये हुये हैं आपकी चारों भुजाओं में धनुष पद्म गदा चक्र शंख इत्यादि आयुध धारण किये हुये हैं। श्वेत श्याम पीत रक्त और हरित—इन परम पवित्र पाँचों वर्णों वाले प्रभो! आपको नमस्कार है ॥६९॥७०॥

निरखण नाथ नमो निकळंक
कळंकिय टाळण साध कळंक
नमो बहुनामिय माधव बुद्ध
सेवकक सधार सदा सिव सुद्ध ।७१।

कल्कि अवतार धारण करने वाले हे निरंजननाथ! आप निष्कलंक हैं और साधुओं के कलंक को मिटाने वाले हैं। सेवकों के आधार स्वरूप हे बहुनामी माधव! आपके बुद्ध अवतार को नमस्कार है। आप सदा शुद्ध शिव रूप हैं ॥७१॥

नमो सब-कारण तारण सांम
उबारण गोकळ इन्द्र उमांम
नमो जग वदण जीवण-जद
महा विख नाग उतारण मद ।७२।

आप सब (सृष्टि) के मूल कारण और सब का उद्धार करने वाले हैं। इन्द्र के उत्पात से आप गोकुल का उद्धार करने वाले हैं। भयंकर विष वाले कालो नाग के मद को दूर करने

वाले ! जगत् के वदनीय ! यादवो के जोवन ! आपको नमस्कार है ॥७२॥

नमो मुर मद्द मरद्दण मल्ल ।
सँखासुर काळ बकासुर सल्ल
नमो कँस केसि विधूँसण कन्न !
रुकम्मणि-प्रांण पुरक्ख रतन्न ।७३।

मुर नामक दैत्य के मद को मर्दन करने वाले हे मल्ल ! आपको नमस्कार है। शखासुर के साल और बकासुर के काल ! आपको नमस्कार है। हे रुक्मिणी के प्राण ! पुरुषरत्न ! कस और केशि नामक दैत्यों का नाश करने वाले हे श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है ॥७३॥

नमो प्रम हस सरोवर प्रेम
निरम्मळ गोकळनाथ निगेम
नमो भगता वस गो-भरथार
विसन्न ब्रिंदावन लील विहार ।७४।

हे निगम स्वरूप गोकुलेश ! मन रूपी मानसरोवर के आप हस हैं और आप ही उसके विशुद्ध प्रेम और ज्ञान के निर्मल स्रोत हैं। आपको नमस्कार है। हे पृथ्वीपति ! आप भक्तो के वश मे रहने वाले हैं। आपको नमस्कार है। वृन्दावन की पवित्र भूमि पर लीला और विहार करने वाले हे श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है ॥७४॥

नमो अचुतानद गोविंद, अज़्ज
नमो वरखा हुंत राखण ब्रज्ज।

नमो सिध जोगिय संकर सेस
नमो ब्रज ईश नमो नट वेस ।७५।

हे ब्रज ! अच्युतानंद गोविंद ! आपको नमस्कार है। मूसलधार वर्षा से ब्रज की रक्षा करने वाले आपको नमस्कार है। आप ही सिद्धयोगी शंकर और शेष रूप हैं। आपको नमस्कार है। नट का वेष धारण करने वाले हे ब्रज के ईश ! आपको नमस्कार है।।७५।।

नमो तु गोविंद नमो तु गोपाळ
नमो गिरधारिय नंद गुवाळ
नमो बळदेव नमो ब्रज बाळ
नमो दुख भंजण दीनदयाळ ।७६।

गौओं का पालन करने वाले हे गोविंद ! आपको नमस्कार है। गिरिवर को धारण करने वाले हे नदग्वाल ! आपको नमस्कार है। हे बलदेव ! हे ब्रजबाल ! आपको नमस्कार है। दीनों पर दयाकर उनके दुःखों का नाश करने वाले ! आपको नमस्कार है।।७६।।

नमो नँदनंद नमो नदनेस
नमो ब्रजचंद नमो ब्रजवेस
नमो जदुनाथ बळीभद्र जोड़
रिणायर वास नमो रणछोड़ ।७७।

नदनंदन ! आपको नमस्कार है। नदनेश ! आपको नमस्कार है। ब्रजचन्द्र आपको नमस्कार है। ब्रजवेश को नमस्कार है। श्रीकृष्ण और बलभद्र की युगल-जोड़ी को नमस्कार है। रण

छोड कर रत्नाकर समुद्र (रेणु मरोवर) के निकट द्वारका मे जा कर निवास करने वाले हे द्वारकाधीश रणछोड ! आपको नमस्कार है ॥७७॥

नमो पुरुषोतम पूरणब्रह्म
नमो मरजाद अखड निगम्म
नमो सतरूघण भरत सनेह
नमो अवगत्त भगत्त अछेह ।७८।

हे पूर्णब्रह्म पुरुषोत्तम ! आपको नमस्कार है । वेदो की अखड मर्यादा के रूप आपको नमस्कार है । श्री भरत और शत्रुहन के रूप मे जो मूर्त्तिमान स्नेह है, वह आप ही हैं । आपको नमस्कार है । हे अविगत ! आप अपने भक्तो के लिये अनन्त हैं । आपको नमस्कार है ॥७८॥

नमो दुज-पख विजै रथ धज्ज
गुणेह अतीत लखन्न-अग्रज्ज
नमो प्रभू सायर बाधण पाज
नमो रण रावण रोळण राज ।७६।

हे विजय रथ वाले गरुडध्वज ! आपको नमस्कार है । सागर पर सेतु बाध कर रावण और उसके राज्य का नाश करने वाले गुणातीत श्रीराम ! आपको नमस्कार है ॥७६॥

नमो कुँभेण तणा भुज काळ
नमो खळ राखस कुळ खेगाळ
नमो रघुवस तणा रवि राम
विघूँसण लक वडा वरियाम ।८०।

कुभकर्ण की दीर्घ भुजाओं के काल ! आपको नमस्कार है लंका और उसके दुष्ट राक्षसों के कुलों का नाश करने वाले सर्व श्रेष्ठ रघुवंश के सूर्य भगवान् श्रीराम ! आपको नमस्कार है ॥८०॥

नमो दुजरांम दमोदर देव
नमो गुरु द्राण करण्ण गंगेव
नमो वप वांमण वीरय भीख
भिक्षग पुरंदर भांजण भीख ।८१।

हे परशुराम भगवान् ! आपको नमस्कार है। द्रोणाचार्य करण और भीष्म जैसों को शिक्षा देने में गुरु रूप हे दामोदर आपको नमस्कार है। तीनों भुवनों को अपने दीर्घ चरणोंके द्वारा तीन पैंड से माप कर भिखारे इन्द्र के भय को मिटा देने वाले वामन शरीरधारी भगवान् ! आपको नमस्कार है ॥८१॥

नमो नरसिंघ लखम्मीय नार
विसंभर वीठ्ठळ आद वराह
नमो मछ माधव कम्छ कुरम्म
पतीत-उधारण देव परम्म ।८२।

हे लक्ष्मीपति ! आपके नृसिंह विश्वम्भर विट्ठल और आदि वाराह अवतारों को नमस्कार है। पतितों का उद्धार करने वाले हे परमेश्वर ! आपके मच्छ, कच्छप और कूर्म अवतारों को नमस्कार है ॥८२॥

नमो गुरु आद प्रसन्निय ब्रम्म
नमो रघुराव कपिल्ल रिखम्म

नमो गुरु नारद ब्रह्म-गिनान
नारायण जोगिय जोग-निधान ।८३।

आदि गुरु भगवान् पृश्निगर्भ (ध्रुव नारायण) ! आपको नमस्कार है। आपके राम, कपिल और ऋषभ रूपो को नमस्कार है। योगीजनो के लिये योग के भण्डार रूप और नारद को ब्रह्मज्ञान का उपदेश देने वाले सनकादिक रूपधारी हे नारायण ! आपको नमस्कार है ।।८३।।

नमो सिरि सकर भाजण सूळ
मुरार मुकद महातत मूळ
नमो नित नाम अमीय निखात
त्रिवीध अतीत प्रदूमन-तात ।८४।

बाणासुर के युद्ध मे भगवान श्री शकर के पाशुपत्य अस्त्र को काटने वाले हे मुकुन्द ! मुर दैत्य के शत्रु ! मूल महातत्त्व रूप ! आपको नमस्कार है। त्रिविध-अतीत, अमृत की खानि रूप प्रद्युम्न के पिता श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है ।।८४।।

नमो सुख साध समद मयक
नमो निकळक नमो निरसक
नमो सिसपाळ विहडण नूर
जरासध देवण रेस जरूर ।८५।

समुद्रवत गभीर साधुजनो को सुख देने वाले चन्द्र रूप ! आपको नमस्कार है। नि शक कल्कि रूप आपको नमस्कार है। शिशुपाल और जरासध के प्रकाश को नाश करने वाले ! आपको नमस्कार है ।।८५।।

नमो हयग्रीव निगम्म निखास
वडा कमि ब्रह्म वदे वड वास
नमो प्रिथू रूप प्रताप प्रतक्ष
नमो बर-लाछ परम्म बिरक्ष ।८६।

वेदों की खानि रूप और उनका उद्धार करने वाले भगवान् हयग्रीव आपको नमस्कार है जिनके द्वारा महाकवि रूप ब्रह्माजी आपके महान् गुणों का वर्णन करते हैं। प्रत्यक्ष प्रतापी आपके पृथु रूप को नमस्कार है। संसार रूपी परम वृक्ष ! लक्ष्मी के पति ! आपको नमस्कार है ॥८६॥

नमो बर-सीत त्रिभूवण बंद
नमो मधु कीटभ जीत मुकन्द
नमो विष व्याधण मेटण व्याध
सराप भसम्म उतारण साध ।८७।

त्रिभुवनवद्य सीता के पति श्रीराम ! आपको नमस्कार है। मधु और कैटभ को जीतने वाले भगवान् ! आपको नमस्कार है। ह आधि-व्याधि के मिटाने वाले और भक्ति-ज्ञान आदि विधियों से प्राप्त होने वाले प्रभो ! आपको नमस्कार है। आप साधुजनों को दिये जाने वाले भस्म हो जाने योग्य भयंकर श्रापों को मिटाने वाले हैं ॥८७॥

नमो मधुसूदण देवण मोख
नमा दत देव विडारण दोख
नमो प्रहळाद उतारण पार
नमो हर संकट-मेटणहार ।८८।

मोक्ष की प्राप्ति कराने वाले हे मधुसूदन ! आपको नमस्कार है । ससार के त्रितापो का नाश करने वाले हे दत्तात्रय ! आपको नमस्कार है । प्रह्लाद की रक्षा करने वाले नृसिह भगवान् ! आपको नमस्कार है । विकराल नृसिह रूप की कोपाग्नि द्वारा उत्पन्न सकट से मुक्त करने वाले भगवान शकर ! आपको नमस्कार है ॥८८॥

नमो ओऽम् रूप नमो ओकार
नमो अजरामर सेस अधार
नमो अवतार सकाज अधीस
नमो जगताज नमो जगदीस ।८६।

प्रणव रूप ओमकार, अजरामर, शेष के आधार ! आपको नमस्कार है । धर्म, गौ और भक्तो के कारण अवतार धारण करने वाले जगत् के मुकुट श्री जगदीश ! आपको नमस्कार है ॥८६॥

नमो अण-आमय जोत-अखड
नमो वप कोट वसै ब्रहमड
नमो अग आणद रूप अतीत
नमो अवधूत अक्रम्म अजीत ।६०।

आपकी माया रूप अधकार रहित अखण्ड ज्योति को नमस्कार है । करोडो ब्रह्माड जिसके शरीर मे निवास करते हैं उस परब्रह्म को नमस्कार है । हे आनद रूप ! रूपातीत, अजीत, अक्रिय, और अवधूत ! आपको नमस्कार है ॥६०॥

नमो अवधूत उदास अलक्ख
नमो गुरदत्त गिनान गोरक्ख

नमो विगनान गिनान विसभ
थँभावण आभ धरा बिण थभ ।८१।

गोरस को ज्ञान देने वाले राग रहित, प्रसन्न और प्रवपूज्य गुरु दत्तात्रय ! आपको नमस्कार है। बिना स्तम्भ के स्वर्ग और पृथ्वी स्थिर रखने वाले ज्ञान और विज्ञान के आधार रूप आपको नमस्कार है ॥८१॥

नमो धरणीधर धारण धीर
नमो भवतारण भजन भीर
नमो हरिदेव नमो हरि राम
नमो हरि रूप नमो हरि नाम ।८२।

धैर्य की मूर्ति पृथ्वी को धारण करने वाले भगवान धरणीधर आपको नमस्कार है। दुःखों का नाश कर ससार रूपी समुद्र से पार लगाने वाले भगवान आपको नमस्कार है। हे राम ! आपको नमस्कार है। हे हरि ! आपके रूप और नाम को नमस्कार है। ८२॥

नमो हरि रस्स नमो हरि हस
नमो हरि कान्ह नमो अरि-ध्रस
नमो अवगत्त नमो अकळीस
नमो अपरम्म नमो सब ईस ।८३।

परम रस रूप हरि ! आपको नमस्कार है। हंसावतार श्री हरि ! आपको नमस्कार है। कंसारि श्रीकृष्ण आपको नमस्कार है। अविगत अकल ईश्वर ! आपको नमस्कार है। हे अप्रमेय ! सर्वेश्वर आपको नमस्कार है ॥८३॥

नमो निरलेप नमो निरकार,
नमो निरदोस नमो निरधार
निरग्गुण नाम नमो तुव नाथ
सरग्गुण नाम नमो समराथ ।९४।

निर्लिप्त निराकार आपको नमस्कार है। सर्व दोषो से शून्य और अन्य आधार से रहित आपको नमस्कार है। आपके निगु ण नाम को नमस्कार है और सगुण रूप वाले हे समर्थ ! आपको नमस्कार है ॥९४॥

नमो प्रह्ळाद तणा प्रतपाळ
नमो सस सूरज जोत सिगाळ
नमो करुणाकर रूप कंठीर
नमो वर-लाछ तणा रघुवीर ।९५।

प्रह्लाद की प्रतिपाल करने वाले दया की खानि श्रीनृसिंह भगवान् ! आपको नमस्कार है। सूर्य और चन्द्र की ज्योति को प्रकाश देने वाले हे प्रभु ! आपको नमस्कार है। हे लक्ष्मीपति श्री राम ! आपको नमस्कार है ॥९५॥

नमो नर सदण-हाकणहार
सबै दळ कौरव करण संघार
नमो क्रत काळ तणा दसकध
नमो बहो देव छुडावण बध ।९६।

महाभारत के युद्ध मे सारथी बन कर अर्जु न के रथ को हाक कर समस्त कौरव दल का नाश कराने वाले भगवान्

श्रीकृष्ण ! आपको नमस्कार है। रावण का नाश कर अनेक देवताओं के बन्धन छुड़ाने वाले श्रीराम ! आपको नमस्कार है ॥१६॥

नमो हरि लीलाय उत्तम नांम
सोह अवतार नमो सियाराम
विसन्न नमो तुम आद विभूत
को आणव तूम तणी करतूत ।१७।

लीलाएं करने को लिये हुये आपके अनेक अवतारों व नामों को नमस्कार है। सोऽहं रूप परब्रह्म का अवतार श्रीराम आपको नमस्कार है। हे विष्णु ! आपकी आदि विभूति परब्रह्म रूप को नमस्कार है। आपकी इन करतूतों (चरित्रों) को कोई नहीं जान सकता ॥१७॥

मुझे कुण नाथ तोरा बोहु मग
सकत न सीव सुरस न खग
करसाय कालाय-बालाय क्रोस
चतुरभुज स्होय मांनोह चीत ।१८।

हे नाथ ! आपके इन अनेक रूप और चिह्नों के रहस्य को शिव और शक्ति कोई नहीं समझ सकते। इसलिये जैसी तैसी (भोली भाली) विनम्रता युक्त विनती को हे चतुर्भुज आप उसे अपने उदार हृदय में भली समझने की कृपा करिये ॥१८॥

॥ ॐ शिव ॥

७. शरीर के समस्त अंगों को भगवान् की पूजा के निमित्त ही काम में लाना और उसी के द्वारा उनके पवित्रीकरण का वर्णन।

छद विग्रखरी

अनत उर आरती उतारिस
सोळ-भात पूजा सभारिस
भाव भगति करतो जग-भावन
पतित सरीर करिस इम पावन ।९९।

षोडशोपचार पूजा कर हे अनन्त! हृदय से आपको आरती उतारूँगा और भावभक्ति के साथ हे जगभावन! मेरे इस अधम शरीर को पावन करूँगा ॥९९॥

मस्तक पवित्र करिस मधुसूदन
वदे चरण तूझ जगवंदन
वेणि निपाप करिस लछमीवर
मस्तक चाढै तुळसी-मजर ।१००।

हे जगवन्दन! मधुसूदन! आपके चरणों में नमस्कार कर मैं अपने मस्तक को पवित्र करूँगा, और हे लक्ष्मीपति! मस्तक पर तुलसी और उसकी मञ्जरी चढाकर मैं अपनी शिखा को पवित्र करूँगा ॥१००॥

स्रवण निपाप करिस हम सांमी
गुण तुझ कथा सुण घणनांमी
भ्रकुटी पवित्र करिस वीसभर
धारे गोधदण धरणीधर ।।१०१

हे अन्तर्यामी ! आपकी कथा और गुणों को श्रवण करके मैं अपने कानों को पवित्र करूँगा और हे विश्वम्भर ! धरणीधर ! गोपीवल्लभ धारण कर मैं अपनी भृकुटी को पवित्र करूँगा ।।१०१।।

नयण निपाप करिस नारायण
पेख रूप तुझ भक्त-परायण
नासा रंध करिस हम निरमळ
प्रभु आघ्राणे पद रज परिमळ ।।१०२।।

हे नारायण ! आपके भक्ति परायण रूप का दर्शन कर मैं अपने नेत्रों को पाप रहित बनाऊंगा और हे प्रभु ! आपके पदरज की परिमल को सूंघकर मैं अपने नासारन्ध्रों को पवित्र बनाऊंगा ।।१०२।।

अधर पवित्र करिस अहिवारण
मुळके प्रेमभक्ति मधु-मारण
वांणी पवित्र करिस सीतावर
नित तुव कीत प्रकासे नरहर ।।१०३।।

हे नाग को नाथने वाले मधुसूदन ! प्रेम भक्ति की मंद मुसकान द्वारा मैं अपने होठों को पवित्र करूँगा और हे नरहरि !

हे-सीताराम ! आपके गुणो का वर्णन करके मैं अपनी वाणी को पवित्र करूँगा ॥१०३॥

रसणा पवित्र करिस इम राघव
भणै तूझ गुण तारण-दध-भव
दसण पवित्र करिस दामोदर
आणद हसै तूझ गिरि-उद्धर ।१०४।

हे राघव ! ससार समुद्र से पार करने वाले आपके गुणो का वर्णन करके मैं अपनी रसना को पवित्र करूँगा और हे दामोदर गिरिधारी ! आपके दर्शनो द्वारा आनन्दित होता हुआ आपके सन्मुख हँसकर मैं अपने दाँतो को पवित्र करूँगा ॥१०४॥

कठ पवित्र करिस करुणाकर
गायै चरित्र तूझ गोपीवर
मुख इम पवित्र करिस अघमजण
भखै प्रसाद तूझ दुखभजण ।१०५।

हे गोपीवर ! आपके चरित्र गाकर मैं अपने कठ को पवित्र करूँगा और हे दु ख और पापो का नाश करने वाले ! आपकी जूठन के महाप्रसाद को भक्षण कर मैं अपने मुख को पवित्र करूँगा ॥१०५॥

पवित्र खभ हो करिस अेणिपर
अक दिवाड सख चक्र ऊपर
पवित्र कध इम करिस महा प्रभ
नमै तूझ चरणै पोहकरनभ ।१०६।

दोनों बाहुओं पर शंख चक्र के चिह्न धारण करवा कर उन्हें पवित्र करूँगा और हे पुष्करनम ! आपके चरणों में नमस्कार करके मैं अपने कर्मों को पवित्र करूँगा । १०६॥

मन हम पवित्र करिस प्रभु मोरो
त्रीकम नाम धर उर तोरो
कर वे पवित्र करिस सेवा कर
जाडे तुझ आगळ जगत-गुर ।१०७।

आपके नाम को हृदय में धारण कर हे त्रिविक्रम ! मैं अपने मन को पवित्र करूँगा । आपकी सेवा (पूजा) करके और नम्रता पूर्वक दोनों हाथ जोड़ कर मैं उन्हें पवित्र करूँगा ॥१०७॥

उदर पवित्र करिस अपरमपर
चरणाम्रत तुझ धार चक्रधर
पावन रिदो करिस पुरुषोतम
सच गिनांन सूझ श्रीसगम ।१०८।

हे चक्रधर ! हे अपरम्पार ! आपके चरणामृत को पान करके मैं अपने उदर को पवित्र करूँगा और हे पुरुषोत्तम ! श्रीसंगम ! तेरे ज्ञान को ग्रहण करके (ज्ञान द्वारा आपके और मेरे बीच का भेद मिटाकर) मैं अपने हृदय को पवित्र बनाऊँगा । १०८॥

इंद्रिय पवित्र करिस अपरमप्रम
दमें गिनांन तुझ दहसां-दम
चरण पवित्र हों करिस चत्रभुज
त्रिगुणनाथ नाची आगळ तुझ ।१०९।

हे दैत्यो का दमन करने वाले अप्रमेय ! ज्ञान द्वारा इन्द्रियो का दमन करके मैं उनको पवित्र करूँगा। और हे त्रिगुणनाथ ! चतुर्भुज ! आपके सन्मुख नृत्य करके मैं अपने चरणो को पवित्र करूँगा ॥१०६॥

तुचा पवित्र करिस दसरथ-तण
चरचवि लेप केर हरि चदण
काय निपाप करिस हो केसव
दडवत करै तूझ दइता-दव ।११०।

हे दशरथ नदन ! आपके चरणो पर चढाये हुये चन्दन को मेरे समस्त शरीर पर लेपन कर मैं अपनी त्वचा को पवित्र करूँगा। और हे दैत्यो का दमन करने वाले केशव ! आपके चरणों मे दण्डवत करके मै अपनी देह को पवित्र बनाऊँगा।११०।

रोम रोम तव नाम रखाविस
इम करतो प्रभु चरणे आविस
मनसा वाचा क्रमणा माही
नरहर तो विण राखिस नाही ।१११।

मेरे मन, वचन और कर्मों का विषय आपके बिना अन्य नही रखूगा। रोम रोम मे आपके नाम को धारण करूँगा और हे नरहरि ! आपके चरणो मे प्राप्त हो जाऊँगा ॥१११॥

विखै ससार तणा वीसारिस
श्रीरग गुण थारा सभारिस
हो म्हारी इंद्री सह माधा
बळि-उद्धार ! विखै तो वाधा ।११२।

बलि का उद्धार करने वाले हे माधव ! हे धीरग ! मैंने अपनी समस्त इन्द्रियों को आपके साथ जोड़ दिया है जिससे भव संसार के समस्त विषयों को भुला कर मैं आपके गुणों का स्मरण करता रहूंगा ।।११२।।

आठूं पहोर अनत उळाविस
रात दिवस हरि रिद रखाविस
मांडे पूजा सूंत महणमथ
सकळ सरीर करिस इम सुकियथ ।।११३।

हे अनन्त ! रात दिन आपके 'हरि' नाम को हृदय में रखूंगा और आठों प्रहर उल्लास के साथ उसका उच्चारण करता रहूंगा और हे समुद्र को मंथन करने वाले ! आपकी पूजा करता हुआ मैं अपने शरीर के समस्त अंगों को कृतार्थ बनाऊंगा ।।११३।।

गळकासिला सिला—गोमती
मांडे वे सगम मूरती
साळगरांम-सिला सुध सेविस
अगर धूप चवण ऊखेविस ।।११४।

गंडकी और गोमती दोनों के संगम की शुद्ध शालिग्राम शिलाओं की प्रतिष्ठा कर (स्थापित कर) मैं उनकी सेवा करूंगा चन्दन चढ़ाऊंगा और अगर और धूप खेऊंगा ।।११४।।

उपासना काण्ड

१. ईश वन्दना

दूहो

मनछा डाकण माहरै, राघव ! काढ रुदाह ।
जिअ वन मे केहर वसै, त्रासै अगला ताह ।११५।

जिस वन मे सिह रहने लग जाता है उस वन के सभी मृग भयभीत होकर भाग जाते हैं। उसी प्रकार हे राघव ! मेरे हृदय मे वसी हुई वासना रूपी डाकिनी को आप उसमे निवास करके भगा दीजिये ।।११५।।

छद विअखरी

तूझ विसै मत दे ध्रुव-तारण !
कूप-ससार काढ स्रबकारण !
फेरा घणा भवोभव फरतो
माधव ! राख जनमतो मरतो ।११६।

ध्रुव का उद्धार करने वाले हे माधव ! मुझे ऐसी बुद्धि दीजिये जो आपके स्वरूप मे लगी रहे। हे समस्त जगत् के कारण ! ससार मे वार २ जन्म लेने और मरने को मिटाकर मुझे इस ससार रूपी कूप मे से बाहिर निकाल दीजिये ।।११६।।

पाप करतो मो मन पापी
ताहरै नाम जाय सह तापी
नारायण ! तो सम को नाही
चवदै भुवन हुकम चा माही ।११७।

प्रभो ! पाप करने वाले मेरे इस पापी मन के तीनों ताप आपका नाम लेने मात्र से नष्ट हो जाते है । प्रभु ! आपके समान कोई नहीं । चौदह ही भुवन एक सूत्र से आपकी आज्ञानुसार चल रहे हैं ॥११७॥

ओ असार असार अनामी
सार अवार लीजिये सामी
त्रिभुवननाथ ! नहीं को तास
बाह ग्रहो प्रभु ! ईसर बोल ।११८।

नाम आदि विशेषणों से रहित हे स्वामी ! इस असार संसार में मेरा आपके सिवाय कोई नहीं है । आप कृपा कर मेरी तुरत सुधि लीजिये । ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्रभो ! हे त्रिभुवननाथ ! आपके समान मेरी रक्षा करने वाला कोई नहीं है । आप मेरी बांह पकड़िये ॥११८॥

दूहो

दीह घणा भांमल दुनी रुळियो पेखण रूप ।
माहव ! हिवे पमाड़ मो सिव ताहरो सरूप ।११९।

आपके (अनिर्वचनीय और अगोचर) रूप के दर्शन करने के लिये इस संसार में बहुत दिनों तक इधर उधर भटका परंतु उसके दर्शन नहीं हुए । हे माधव ! अब आपके उस सर्वव्यापी जन्म-मरण के दुःखों से छुड़ाने वाले कल्याण- (कारी) शिव स्वरूप के दर्शन कराइये ॥११९॥

छंद विअसरी

मुणा हो ख्यात महारिय मत्त
गोविंद ! न जाणव तोरिय गत्त
भणा भगवान करा गुण भेट
महा ग्रभवास तणा दुख मेट ।१२०।

हे गोविन्द ! मैं आपकी गति-विधियों को तो जानता नहीं फिर भी मैं मेरी मंदमति के अनुसार आपके चरित्रों का वर्णन करता हूँ। आपके गुणों को गा कर इन्हें ही आपकी भेंट करता हूँ। भगवन् ! आप मेरे गर्भवास (जन्म-मरण) के महान् दुखों को मिटा दीजिये ॥१२०॥

माग्यो हो सरव दियो तैं मूझ
तुहारिय गत्त मागा कन तूझ
मागा मन वाच करम्म मुरार !
नारायण ! जामण ग्रत्त निवार ।१२१।

(मानव शरीर और उसके उपयुक्त) मैंने जो कुछ माँगा, आपने वह सब मुझे दे दिया। अब हे मुरारि ! मन, वचन और कर्म से आपसे आपकी गति को प्राप्त हो जाना मांगता हूँ। इसलिये हे नारायण ! मेरे जन्म-मरण को आप मिटा दीजिये ॥१२१॥

इको रसणाह लहा किम अंत
पारा नह पामत सेस पुणंत
न जाणव तोराय पार नरेस
आदेस ! आदेस ! आदेस ! आदेस ! ।१२२।

जिन आपके चरित्रों का वर्णन करते हुए शेष भी अपने हजार मुखों की दो हजार जिह्वाओं से भी पार नहीं पाते हैं तो मैं एक जिह्वा से उनका कैसे पार पा सकता हूँ। हे नरेश ! मैं आपका अंत नहीं जान सकता। आपको बारम्बार प्रणाम है॥१२२॥

छप्पय

कसा करव हों महल महल गिरिमेर कहाव
कसा गाय हो गुणव गुणय ज्यां सुम्मर गाव
मेल्हाँ की धन माल सिरीजी चरणां आगै
कसा पखाळां पाव, पवित्र नख गंगा लागै
की पुहप चढावां सिर पर पारिजात द्रख तुझ घर
राजाधिराज ! की रीझवां कवि संकर सेवा करै।१२३।

स्वर्णमय सुमेरु पर्वत के उत्तुङ्ग गिरि शिखर रूप जिसके महल हैं उसके लिये मै कौनसा मंदिर बनवाऊं। जिसके गुणों को देवता लोग गा रहे हैं मैं उसका क्या गुण गाऊं ! लक्ष्मीजी जिसके चरणों में विराज रही हैं उसके आगे मैं कौन से धन माल की भेंट करूं। जिसके पवित्र चरणों के नखों को गंगाजी स्पर्श कर रही हैं उसके चरणों का प्रक्षालन मै किससे करूं। हे राजाधिराज ! आपके तो घर में ही कल्पवृक्ष है मैं कौन से पुष्प आप पर चढ़ाऊं और जिसकी सेवा ब्रह्मा और शंकर कर रहे हैं फिर मैं कौनसी सेवा कर आपको प्रसन्न करूं ?॥१२३॥

नमो नाम नीगमण नमो नर धुर नीपावण
नमो गो करण-ग्रहण नमो थांभा विण थमण
नमो वेद विसतरण नमो हव कव्व हुतासण
नमो भुवण भोगवण नमो निसचर नीझावण

ईसरो भणै असरणसरण, विहड-कस साभळ वयण
जग जाड जीव जामण-मरण, छोड छोड गज-छोडवण १२४

आपके निगम नाम को नमस्कार है। मानव और देव योनि को उत्पन्न करने वाले आपको नमस्कार है। पृथ्वी को उत्पन्न और धारण करके उसको बिना आधार के ठहराने वाले आपको नमस्कार है। वेदो का विस्तार करने वाले आपको नमस्कार है। हव्य, कव्य और इनको ग्रहण करने वाले हुताशन रूप आपको नमस्कार है। चौदह भुवनो का पोषण और उनको भोगने वाले आपको नमस्कार है। निशिचरो का नाश करने वाले आपको नमस्कार है। ईश्वरदास कहते हैं कि हे अशरण-शरण। कस निकदन। गज को ग्राह से छुडाने वाले मेरी विनती सुनिये। इस जीव को जगत की जडता, जन्म और मरण से छुडाइये ॥१२४॥

राखै ज्यु त्यु रहा, जिहा निरमै त्या जावा
हुकम तणा वस हुवै, जिको सिरि गिरा जणावा
काम लोभ मद क्रोध, मोह वड सह जग माही
तूं ही मार जिवाड, परम ततर तुव पाही
ध्यान कर नजर तोसूं धरै, सो निवाण जग निरतरै
राजाधिराज। तोरी रजा, ईसर रा सिर ऊपरै ।१२५।

प्रभो। हम प्राणियो को जिस स्थिति मे आप रखते है उसी स्थिति मे हमे रहना पडता है, जिस जगह पर रहने के

लिये जिस किसी योनि में आप हमारा निर्माण कर देते हैं वहीं रहने के लिये हमें जाना पड़ता है। और श्रीमुख की आज्ञा के वशवर्ती होकर हमें उन्हीं योनियों की वाणियों में उच्चारण करना पड़ता है। काम लोभ मद क्रोध मोह आदि कुवासनाएँ (अविद्यायें) संसार की उन सभी योनियों में हम प्राणियों के पीछे लगी रहती हैं। तू ही मारने वाला और तूही जिलाने वाला है। यह परम तत्व तेरे ही पास है। जो प्राणी आपकी ओर दृष्टि लगा कर आपका ध्यान करता है वही संसार समुद्र से पार हो जाता है। ईश्वरदास कहते हैं हे राजाधिराज ! जैसी भी आपकी आज्ञा है मेरे लिये तो शिरोधार्य है ॥१२५॥

छंद मोतीदाम

दाखै कवि सेवक ईसरदास
प्रभेसर टाळिज जामण पास
आखै हिव ईसर तेज-अवार
प्रभूजी ! टाळिजै जम्म प्रहार।१२६।

सेवक कवि ईश्वरदास कहते हैं कि हे परमेश्वर ! अब मेरी जन्म-पाश टाल दीजिये। आवागमन की यम-यातनाओं को हे प्रकाशपुञ्ज ! हे प्रभु ! अब आप निवारण कर दीजिये ॥१२६॥

पयपत ईसर ओळिय पांण
कृपाळ करो हिव मूझ कल्याण
दिखावउ मूझ अनूप दिदार
म्रसारह वाहर माहि ससार।१२७।

श्री ईश्वरदास हाथ जोड कर कहते हैं कि हे कृपालु ! ससार के भीतर और वाहिर आपके अनुपम रूप के दर्शन करा कर मेरा अब कल्याण कर दीजिये ।।१२७।।

दूहो

अवगुण म्हारा वापजो ! वगस गरीवनवाज ।
जो कुल पूत कपूत व्है,तो हि पिता कुळ लाज ।१२८।

हे गरीवनिवाज पिता ! मेरे अवगुणो को आप क्षमा कर दीजिये। कुल मे यदि पुत्र कुपुत्र हो जाता है तो भी उसकी प्रतिष्ठा को वनाये रखने की चिन्ता पिता को ही होती है ।।१२८।।

२. ईश महिमा

दूहा

साई सूँ सगळी हुवै, नर धारी कोई नाय ।
राई कूँ परवत करै, परवत राइ समाय ।१२९।

प्रभु सव कुछ कर सकते हैं, मनुष्य कुछ नही कर सकता। वह राई को पर्वत वना सकते हैं और पर्वत को राई मे समा देते हैं ।।१२९।।

धारै तो साहव धणी, करै विलव न काय ।
मार उपावै मेदनी, महोरत हेकण माग ।१३०।

प्रभु सब कुछ करने मे समर्थ हे। वह यदि चाहें तो कुछ भी सोचने-विचारने की देरी किये बिना सृष्टि का प्रलय करके क्षण भर मे उसे उत्पन्न कर दें ।।१३०।।

साईं ! तूं ज बडा धणी, था मूं वडा न कोय ।
तू जना सिर हत्य दे, सो जग में वड होय ।।१३१।

प्रभु ! आप ही सब से बड़े और सबके स्वामी हैं। आपसे बड़ा कोई नहीं है। आप जिसके सिर पर हाथ रख दें वहीं संसार में बड़ा हो जाता है ।।१३१।।

आसम माहर अवगुणा साहब! तूझ गुणांह ।
बूंद-अखा अर रेण-कण थाघ न लाधैं तांह ।।१३२।

जिस प्रकार वर्षा के बिन्दुओं और भूमि क कणों का थाह नहीं लग सकता उसी प्रकार मेरे औगुण और आपके गुणों का हे विभु ! थाह नहीं लग सकता ।।१३२।।

कल्प वेद सासत्र कथै सिध साधक सह कोय ।
अन विण त्रपत न ऊमजे हरि विण मुगत न होय ।।१३३।

वेद और कल्प सूत्रादि शास्त्र एवं सिद्ध और साधक इन सभी का यही मत है कि जिस प्रकार अन्न के बिना तृप्ति नहीं हो सकती उसी प्रकार हरि की प्राप्ति के बिना मुक्ति भी नहीं हो सकती ।।१३३।।

अखिल ! तु हिक क को अवर महोनामी ! मुजसव्व ।
लखमीवर ! लेखा नहीं समवड़ प्राणी सव्व ।।१३४।

हे महानामी अखिलेश ! मैं आप से पूछता हूँ कि आपके समान आप ही हैं या कोई दूसरा भी है। हे लक्ष्मीपति ! प्राणियों में तो आपकी समानता करने वाला मुझे तो कोई नहीं दिखाई देता ।।१३४।।

कदी हुवो ईसर कहै, कुण जायौ करतार ।
ब्रह्मा रुद्र विचार वड, पामै निगम न पार ।१३५।

ईश्वरदास कहते है कि इस जगत् का कर्त्ता कब हुआ और किसने उसको उत्पन्न किया ? इसका विचार करने मात्र से ब्रह्मा और रुद्र को भ्रम उत्पन्न होता है और वेद तो इसका पार ही नही पाते ॥१३५॥

छंद मोतीदाम

ब्रह्म्मा विचारत रुद्र वडम्म
न पावत तोराय पार निगम्म
प्रमेसर तूझ न पार पडोय
कुराण पुराण न जाणत कोय ।१३६।

उस परब्रह्म परमेश्वर का ब्रह्मा और रुद्र विचार करते है । वेद, पुराण और कुरान पच-पच कर हार गये परन्तु वे उसका पार नही पा सके ॥१३६॥

अधोखज अक्खर तूझ अवेव
दिनकर चंद न जाणत देव
त्रणे-गुण तूझ न जाणत तत
अहीस सबद्द न जाणत अंत ।१३७।

हे अधोक्षज ! आप नाश रहित और परिणाम रहित हैं । सूर्य, चन्द्रमा और आपके तीनो गुणो की प्रतिरूप मूर्ति—ब्रह्मा, विष्णु और महेश आपके तत्व को नही जान सके और शेष और शारदा आपका पार नही पा सके ॥१३७॥

वडा ग्रह तूझ लहै न विचार
पुरदर तूझ न पांमत पार
भला मुनि तूझ न वूझत भेद
विरचिय सूझ न जाणत वेद ।१३८।

जिस प्रकार सूर्य और चन्द्र आदि बड़े-बड़े ग्रह आपका विचार ही नहीं कर सके उसी प्रकार इन्द्र भी आपका पार नहीं पा सका। बड़े-बड़े मुनिगण आपके भेद को नहीं समझ सके और ब्रह्मा तो आपको वेदों के द्वारा भी नहीं जना सके ।।१३८।।

दामोदर ! तूझ दसै दिगपाळ
किताइक पार न जांणत काळ
उमा अणपार अगम्म अलेख
सलम्मिय पार न जांणत लेख ।१३९

हे दामोदर ! दसों दिग्पालों ने कितने ही काल तक आपका पार पाने का प्रयत्न किया पर वे भी नहीं पा सके। पार्वती और लक्ष्मी भी आपके अगम और अलख रूप को किंचित् भी नहीं जान सकी ।।१३९।।

महातत तूझ न जांणत माह
कियो तुझ केण आयो तुझ काह
अनीलोय नील कहत असेस
आदेस आवस आदेस आवेस ।१४०।

हे महान् ! आपके तत्त्व को बड़े-बड़े नहीं जान सके। आपको किसने उत्पन्न किया और आप कहां से आये—इसका

कोई पता नही। कोई आपको श्याम और कोई आपको श्वेत कहते है और कोई आपको अनत कहते हैं। आपको बारम्बार प्रणाम है ॥१४०॥

अलाह अथाह अग्राह अजीत
अमात अतात अजात अतीत
अरत्त अपीत असेत अनेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४१।

हे प्रभु ! आप अलभ्य, अथाह, अग्राह्य और अजीत हैं। माता पिता और जन्म (वा जाति) से रहित है। आप लाल नहीं, पीले और श्वेत भी नही। आपका कोई निवास (वा स्वामी) नही। आपको बारबार प्रणाम है ॥१४१॥

अनख न सक न धख न धीस
निवास न सास न आस न ईस
निराळ निकाळ त्रिकाळ नरेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४२।

हे अधीश्वर ! आप इच्छा रहित, भय रहित और ईर्षा रहित हैं। आपका कोई घर नही। स्वासा और आशा नही। आप निराले, काल रहित और तीनो ही कालो के स्वामी हैं। आपको बारम्बार प्रणाम है ॥१४२॥

क्रिपाल गोपाळ भूपाळ क्रिसन्न
वडाळ सिगाळ छत्राळ विसन्न
म्रिणाळ भुजाळ विसाळ मुनेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४३।

अधोमुख ताप तपे मुनि-ईस
रजो तम रच धरै नही रीस
ध्रुव रवि चद्र सु ध्यान धरेस
आदेम आदेम आदेस आदेस ।१४६।

रज और तम से रहित, किसी पर भी क्रोध नही करने वाले कई वडे मुनीश्वर औंधे लटक कर आपके निमित्त अग्नि तप रहे है। ध्रुव, सूर्य और चन्द्र आपका ध्यान धरते हैं। हे प्रभो! आपको वारम्वार प्रणाम है ॥१४६॥

सवै कुळ मेरु सु सात समद
उचारत नाम अहोनिस इद
मुखा नित टेरत व्रह्म महेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४७।

सुमेरु और दूसरे सभी पर्वत, सातो समुद्र, ब्रह्मा, महेश और इन्द्र अहर्निश आपका नाम उच्चारण करते है। आपको वार वार प्रणाम है ॥१४७॥

अहोनिस कागभुसड अराध
पढै तुव नाम सदा प्रहळाद
जपै सुकदेव जिसा जोगेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१४८।

काकभुशुडि अहर्निश आपकी आराधना करते है, प्रह्लाद सदा ही आपके नाम का पाठ करते है और शुकदेव जैसे योगीश आपका नित्य जप करते रहते है। हे प्रभो! आपको वार वार प्रणाम है ॥१४८॥

ब्रह्माजी और शिवजी कहते हैं कि पृथ्वी सूर्य चन्द्र आदि ग्रहगण मनुष्यगण व्यापक महाकाश और छोटे-बड़े अनन्त ब्रह्माण्ड ये सब कुछ नहीं थे । आदि में वही एक था । वही था ॥१५४॥

सपत्त पियाळ न सात समद

दिसा ग्गिपाळ न चद दिनद

सुमेर न सेस पहिसोय सोज

हुतोज हुताज हुसाज हुसोज ।१५५।

सृष्टि-रचना के पूर्व सातों पाताल सातों समुद्र दसों दिशाओं के दिग्पाल चांद सूर्य सुमेरु और शेष इत्यादि इनमें से कोई नहीं था । केवल वही था । आप ही था ॥१५५॥

अमी असमाण न आण न आण

प्रलोक भुलोक न खाण न पाण

कुरांण पुरांण वखाण न कोज

हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५६।

उस समय न तो पृथ्वी न आकाश और न आना और जाना था । परलोक और यह लोक भी नहीं थे । खाना और पीना भी नहीं था और न थे आपकी कीर्ति गाने वाले पुराण और कुरान ही । केवल आप ही आप थे ॥१५६॥

अनम्म न वम्म न जीव न जस

अकम्म न क्रम्म न आद न अस

सुरेस महेस न सेस सरोज

हुतोज हुसोज हतोज हतोज ।१५७।

उस समय न तो कोई जीव जन्तु थे और न उनका कोई जन्म मरण ही था। पुण्य और पाप भी नही थे। आदि और अंत भी नही था। इन्द्र, महेश, शेष और ब्रह्मा भी नही थे। केवल तू ही था।

गोळाक्रत चक्र न वक्र गणीत
अगोचर नाम सदा तूं अतीत
अकामिय अंग असंग अकोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५८।

रेखागणित के आधार, चक्र के समान गोलाकृति और वक्राकृति इत्यादि गणित सिद्धान्त के द्वारा भी आप सिद्ध नही हो सकते। आपका नाम अगोचर और आप सदा अजेय हैं। आप एक ओर असंग है और अकामीजनो के अंग हैं। आप आपही हैं और समस्त के आदि मे आप ही थे ॥१५८॥

मिटइ सुरलोक पैठो जळ माह
तठै इक अंड निपाविय ताह
किधा धर अंबर वारि एकोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५९।

तीनो लोको का महा प्रलय होने के बाद आपने महाजल मे प्रवेश किया। वहाँ (अग्नि और वायु रूप से) आपने एक अण्ड उत्पन्न किया और उसी अण्ड से पृथ्वी, आकाश और जल बनाये। भगवान्! उस समम वह एक आप ही थे ॥१५९॥

नवो ग्रह थापण थीर सुनाम
धरै कइ लोक अलोकिक धाम

गाम नित सूर सकत्त गणम
सदा द्रढ ध्यान घरै सिध सेस
वद मुनि चारण देय विसेस
आदस आदेस आग्स आदेस ।१४६।

सूर्य शक्ति गणेश सिद्ध शेष देवता, मुनि और चारण आपका दृढ ध्यान के साथ गायन करते हैं। आपको बार बार प्रणाम है ॥१४६॥

कम सुर नाम त्रितीम करोड़
जपै नर नार सभै कर जोड़
पयपत वास पियाळ पुरेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१५०।

स्वर्ग के तेतीस करोड़ देव समूह मृत्युलोक के नर-नारी और पाताल निवासी समस्त हाथ जोड़ कर आपका जप और गुणगान करते हैं। आपको बार बार प्रणाम है ॥१५०॥

हुवा रिख खोज अठामो हजार
वन्ने जस वेद छ सास्त्र विचार
ध्रियायत किन्नर जच्छ धनेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१५१।

अठासी हजार मनुष्य आपकी खोज करने के कारण ऋषि कहलाये [अठासी हजार ऋषिगण निरंतर आपकी खोज में लगे हुए हैं]। चारों वेद और छहों शास्त्र विचार-विचार कर आपकी स्तुति करते हैं। यक्ष किन्नर और कुबेर आपका ध्यान धरते हैं। हे प्रभो ! आपको बार बार प्रणाम है ॥१५१॥

चारिय वाणिय खाणिय चार
वदै जग जीव विचार विचार
लहै नही पार कहू लवलेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१५२।

चारो वेद और सृष्टि की चतुर्विधि जीव योनिये (उद्भिज, स्वेदज, अण्डज और जरायुज नाम की योनियें) विविध प्रकार के विचारो द्वारा आपका गुणगान करती है, परन्तु लेश मात्र भी वे आपका पार नही पाती । आपको वार वार प्रणाम है ।।१५२।।

उभै रवि चद्र किया तै उजेस
रम्यो अकळक सदा तूँ रमेस
दधी घण तारण तू दरवेस
आदेस आदेस आदेस आदेस ।१५३।

सूर्य और चन्द्र दोनो को आपने प्रकाशित किया [प्रकाशमान् सूर्य और चन्द्र को आपने वनाया ।] हे दरवेश ! आपही ससार रूपी महासागर से पार करने मे समर्थ है। समस्त ससार के प्राणियो मे रमते रहने पर भी निष्कलक रहने वाले हे रमेश ! आपको वार वार प्रणाम है ।।१५३।।

प्रिथी खग आलम आभ प्रचड
म लोक आलोक महा-ब्रहमड
अजस्सिव आदित पाण अलोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।१५४।

ब्रह्माजी और शिवजी कहते हैं कि पृथ्वी सूर्य चन्द्र आदि ग्रहगण मनुष्यगण व्यापक महाकाश और छोटे-बड़े अनन्त ब्रह्माण्ड ये सब कुछ नहीं थे। आदि में वही एक था। वही था ॥१५४॥

सपत्त पियाळ न सात समद
दिसा दिगपाळ न चन्द दिनद
सुमेर न सेस पहिलोय सोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।।१५५।

सृष्टि-रचना के पूर्व सातों पाताल सातों समुद्र दसों दिशाओं के दिग्पाल चन्द्र सूर्य सुमेरु और शेष इत्यादि इनमें से कोई नहीं था। केवल वही था। आप ही था ॥१५५॥

जमी असमांण न आण न जाण
अलोक भुलोक न खाण न पाण
कुरांण पुरांण बखाण न कोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।।१५६।

उस समय न तो पृथ्वी न आकाश और न आना और जाना था। परलोक और यह लोक भी नहीं थे। खाना और पीना भी नहीं था और न थे आपकी कीर्ति गाने वाले पुराण और कुरान ही। केवल आप ही आप थे ॥१५६॥

जनम्म न दम्म न जीव न जत
अकम्म न क्रम्म न आद न अंत
सुरेस महेस न सेस सरोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।।१५७।

उ॰ समय न तो कोई जीव जन्तु थे और न उनका कोई जन्म मरण ही था। पुण्य और पाप भी नही थे। आदि और अंत भी नही था। इन्द्र, महेश, शेष और ब्रह्मा भी नही थे। केवल तू ही था।

गोळाक्रत चक्र न वक्र गणीत
अगोचर नाम सदा तूँ अतीत
अकामिय अ ग असग अ कोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज।१५८।

रेखागणित के आधार, चक्र के समान गोलाकृति और वक्राकृति इत्यादि गणित सिद्धान्त के द्वारा भी आप सिद्ध नही हो सकते। आपका नाम अगोचर और आप सदा अजेय हैं। आप एक और असग हैं और अकामीजनो के अग हैं। आप आपही हैं और समस्त के आदि मे आप ही थे ॥१५८॥

मिटइ सुरलोक पैठो जळ माह
तठै इक अड निपाविय ताह
किधा धर अ बर वारि एकोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज।१५९।

तीनो लोको का महा प्रलय होने के बाद आपने महाजल मे प्रवेश किया। वहाँ (अग्नि और वायु रूप से) आपने एक अण्ड उत्पन्न किया और उसी अण्ड से पृथ्वी, आकाश और जल बनाये। भगवान् ! उस समम वह एक आप ही थे ॥१५९॥

नवो ग्रह थापण थीर सुनाम
धरै कइ लोक अलोकिक धाम

मह्रादत मोख समापण माज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।।१६०।

महादान रूप मोक्ष के अक्षय सुख को देने वाले हे प्रभु ! आपने नवों ग्रहों की रचना और नामकरण करके महाकाश में उन्हें स्थिर किया और कई अलौकिक लोक और धामों की आपने रचना की जिनके पूर्व एक मात्र आप ही थे ।।१६०।।

वदै चत्र बेद बिरच वखाण
प्रकासत ब्यास अठार पुराण
खत्री दुज वैस गया सुद्र खोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।।१६१।

चारों वेदों में ब्रह्माजी और अठारहों पुराणों में व्यासजी ने भी यही वर्णन किया है। इसके अनन्तर ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्र आदि चारों वर्ण निरंतर आपकी खोज करते रहे हैं और वे भी यही कह रहे हैं कि उस समय एक वही था ।।१६१।।

सत्रूपा नार सयभुव भूप
रहस विचार स दीठोय रूप
मांग्यो वर पुत्र हुई हरि मोज
हुतोज हुतोज हुतोज हुतोज ।।१६२।

स्वायंभुव मनु और उनकी पत्नी शतरूपा ने इस रहस्य को समझ कर आपके उस रूप के दर्शन किये और उसी रूप में उनका पुत्र होने का उन्होंने वरदान मांगा। आपने प्रसन्नता के साथ उनका पुत्र होना स्वीकार किया। वह उसी परब्रह्म का रूप था जो सृष्टि के आदि काल में था ।।१६२।।

अनत पराक्रम तू ज अनत
नही तुझ आद नही तुझ अ त
नही तुव रूप नही तुझ रेख
नही तुव वप्प नही तुव वेस ।१६३।

हे अनत ! आप अनत पराक्रम वाले हैं। आपका आदि और अन्त नही । आपकी कोई रूप-रेखा नही और नही आपका कोई शरीर और वेश ही है ।।१६३।।

नही तुव जात नही तुव जाण
नही तुझ पिंड नही तुझ प्राण
नही तुव सार नही तुझ सुद्ध
नही तुव बाळ नही तुव व्रद्ध ।१६४।

प्रभो ! आपकी कोई जाति और पहिचान नही । आपका कोई शरीर और उसमे रहने वाला प्राण भी नही । आपको सार-सुधि की आवश्यकता नही (न आप मे वृत्ति है और न कोई स्मृति है)। न आप बालक हैं और न आप वृद्ध ।।१६४।।

नही तुव जोग नही तुव जाप
नही तुव पुन्न नही तुव पाप
नही तुव भिन्न नही तुझ भास
नही तुव वन्न नही तुव वास ।१६५।

आप न तो योग हैं, न जप हैं, न पुण्य हैं और न पाप हैं। न आप भिन्न (अदृश्य) हैं और न दृश्य। अत आप वन में नही और घर मे भी नही ।।१६५।।

नहीं तुम नण नहीं तुम नास
नहीं तुम सुम नहीं तुम सास
नहीं तुम ठोड़ नहीं तुम ठाम
नहीं तुम गोठ नहीं तुम गांम ।१६६।

आपके न तो नयन हैं और न नासिका है। स्वास लेने को शून्याकाश नहीं। निवास करने को कोई ठामठिकाना और कोई गांव-गोष्ठी भी नहीं ॥१६६॥

नहीं तुम दीह नहीं तुम रात
नहीं तुम जात नही तुम आत
नही तुम गुज्ज नहीं तुम जांण
नहीं तुम मांण नहीं तुम वांण ।१६७।

आप न तो दिन हैं और न रात। आपकी जाति नहीं और न बिरादरी भी। आपका कोई गुप्त भेद नहीं उसी प्रकार प्रगट भी नहीं। आप में न तो मान है और न वाण है। ॥१६७॥

नहीं तुम विप्र नही तुम वैस
नहीं तुम खत्रिय सूद्र न वेस
नहीं तुम दैत नहीं तुम देव
नही तुम भेद नहीं तुम भेव ।१६८।

आप ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्र नहीं। आप देव और दैत्य भी नहीं। आपका कोई प्रकार और रूप नहीं। ॥१६८॥

नहीं तुम नांम नहीं तुम नेम
नहीं तुम अतर प्रेम अप्रम

नही तुव धुप नही तुव छाह
नही तुव नार नही तुव नाह ।१६९।

आपका कोई नाम नही । आपके कोई नियम नही । आपमे न प्रेम है और न अप्रेम है । आप मे न धूप है और न छाया । नही आप स्त्री हैं और न आप पुरुष (पति) हैं ॥१६६॥

नही तुव वित्त नही तुव व्हाण
नही तुव खेत नही तुव खाण
नही तुझ दीरघ सूक्षम देह
नही तुव नार पुरक्ख सनेह ।१७०।

आप न धन (वित्त गाय बैल आदि पशु) रूप हो और न वाहन रूप हो । न आप खेत हो और न आप खान हो । आप दीर्घ और सूक्ष्म देह रूप नहो । न आप मे स्त्री-पुरुषो (पति-पत्नी) का स्नेह ही है ॥१७०॥

नही तुव क्रम्म नही तुव काम
नही तुव ध्रम्म नही तुव धाम
नही तुव मूळ नही तुव डाळ
नही तुव पत्र नही तुव पाळ ।१७१।

आपका कोई कर्म नही और आपकी कोई इच्छा नही (न आपका कोई कारण है और न आपका कोई कार्य है) आपका कोई धर्म नही और नही आपका कोई धाम है । आपकी कोई मूल नही, शाखा और पत्र नही और नही कोई रक्षक ही (सतति और सीमा से रहित हैं) ॥१७१॥

नहीं तुव साधक तंत न तंत्र
नहीं तुव जंत्र नहीं तुव मंत्र
नहीं तुझ साथ समथ सँसार
नहीं तुव जांण पिछाण जुहार ।१७२।

आप न तो जादू है और न टोना है और न आप उनके तत्त्वों के साधक है। न आप मंत्र रूप है और न आप मंत्र रूप है। संसार के समय की कोई साक्षी (साथी) आप नहीं अतः आपकी किसी से जान-पहिचान और जुहार-प्रणाम भी नहीं।१७२।

प्रथी अप तेज अनील अकास
नहीं तुझ सुन्न असुन्न निवास
प्रमेसर प्रांण-पुरक्ख प्रधान
जरत्थ जगत्त वेदान्त गिनांन ।१७३।

पृथ्वी पानी अग्नि वायु और आकाश एवं शून्य और अशून्य इनमें से कोई भी आपका निवासस्थान नहीं। आप प्रधान प्राण-पुरुष जगत के कारण और वेदान्त का ज्ञान है।।१७३।।

नहीं तुझ मात नहीं तुझ बाप
आपेह आपेज उपन्नोय आप
मनिछा-बीज बसावण मूळ
थळचर खेचर सुक्खम थूळ ।१७४।

आपके माता और पिता रूप कोई सहकारी नहीं अपने आप ही आप प्रगट हुए हैं। मनैच्छा रूपी बीज के बासक आपही हैं जिससे कि थलचर और नभचर आदि स्थूल और सूक्ष्म सृष्टि उत्पन्न हुई।।१७४।

विराट विसाळ निपाविय व्रक्ख
दुई फळ जेण किया सुख दुक्ख
निपाविय रूप उभै नर नार
वधारिवा जगत तणो विसतार ।१७५।

इस प्रकार के एक विशाल और विराट वृक्ष को उत्पन्न करके उसमे सुख दुख रूपी फल लगा दिये। ऐसे इस जगत का विस्तार करने के लिये पुल्लिग और स्त्रीलिंग (नर और नारी) के दो आकार आपने बना दिये ॥७५॥

किधा कई जीव दिधा कइ कर्म
धरै इक पाप धरै इक धर्म
सरज्जिय आप त्रिवीध ससार
हुवो मभ्फ आपज रम्मण-हार ।१७६।

कई प्रकार के जीवो को उत्पत्ति करके उनके पीछे कर्म लगा दिये । उनमें से किन्ही को पाप कर्म और किन्ही को धर्म कार्य करना धारण करवाया। स्थूल, सूक्ष्म और कारण रूप त्रिगुणात्मक ससार का निर्माण कर और व्यापक सत्ता रूप से आप उसमे प्रविष्ट होकर रमण करने वाले होगये ॥१७६।

घडै सह आपज हूताय घाट
वणाविय विस्व किधो वइराट
किताइक वार ब्रहम्माय कीध
लिला-अवतार किना तै लीध ।१७७।

आपने बिना किसी की सहायता के अनेक प्रकार के रूप बनाकर इस बिराट विश्व की उत्पत्ति की। आपने कितनी ही बार सृष्टि रचना के निमित्त ब्रह्मा को बनाया और जगत् को अपनी लीला दिखाने के लिये उसमें कई बार अवतार लिये ॥१५७॥

महागज ग्राह छुडावण मत्त
सनातन पाळक केवळ सत
मगत स भूधर ! भाजण भीड़
प्रभाळह देव ! अमाणिय पीड़ ।१७८।

गरुड़ और सुदर्शन चक्र भी उस त्वरित गति से नहीं पहुँच सकने के कारण आपने पैदल दौड़ कर अथाह जल में ग्राह द्वारा खींचे जाने वाले गज को बचाया। अनादिकाल से संतों की रक्षा करने वाले और अपने भक्तों की भीड़ को मिटाने वाले हे भूधर ! अब आप मेरी पीड़ा को भी मेटिये ॥१७८॥

भणै गुण तोर लछी भरतार !
लगै न तिकां मन पाप लिगार
मुकंद ! सु आय वसै जिण मुक्ख
सँसार-समुद्र तरै वह सुक्ख ।१७९।

हे लक्ष्मीपति ! जो आपके गुणों का कथन करता है उसको लेशमात्र भी किसी पाप कर्म का स्पर्श नहीं होता। हे मुकुन्द ! आप जिसके मुँह में आकर निवास कर लेते हैं वह सुख से इस संसार-समुद्र को तिर जाता है ॥१७९॥

मुरार ! सु आय वसै जिण मत्त
वहै नहीं ताहि सँसार-दवत्त

जपै हरि तोर सु जाप जिकाह
टळै भव वधन पाप तिकाह ।१८०।

और हे मुरारि ! आप जिसके मन मे आकर निवास कर लेते हैं, वह निरतर फिर आप ही का जप करता रहता है। उसके ससार मे वधन के कारण रूप समस्त पाप नाश हो जाते हैं और फिर उसे ससार-दावानल जला ही नही सकता ॥१८०॥

त्रिवोध त्रिजग्ग त्रिविक्रम तार
चतुरभुज आतम चेतन सार
वळीभद्र-वधव गोकुळ-वाळ
खिमावँत साधव दुस्ट-खँगाळ ।१८१।

वलभद्रजी के वधु गोकुल वाले हे श्री चतुर्भुज ! हे त्रिविक्रम ! आप सज्जनो पर दयालु और दुष्टो का नाश करने वाले हैं। त्रिविध जगत के त्रितापो से मुझे बचाइये और चेतन आत्मतत्व के मुझे दर्शन कराइये ॥१८१॥

गोविंद ! भगत्त निवारण ग्रब्भ
परम्म अमीय मय पद प्रब्भ
सदा उनमद्द जोगाणद सिद्ध,
वय तन वाळ न जोवन व्रद्ध ।१८२।

हे गोविन्द ! आप भक्तो का गर्भ (जन्म) निवारण करने वाले हैं और उन्हे अमृतमय परम पद को देने वाले हैं, जहाँ नही कोई शरीर है और नही उसकी बाल, युवा और वृद्ध अवस्थाएँ ही हैं किन्तु उन्मद योगानद के समान सदा आनद ही आनद है ॥१८२॥

उथाप सथाप ब्रह्म्माम इंद
चतुरभुज भाज घडे़ रवि चद
भुवण त्रणे-नर देव भुजग
प्रमेसर [1] ताराय कीट पतग ।१८३।

हे चतुर्भुज ! आप ब्रह्मा और इन्द्र को प्रतिष्ठित और पदच्युत करने वाले हैं। सूर्य और चन्द्र का नाश करके आप उन्हें पुनः बना सकते हैं। तीनों भुवन (स्वर्ग मृत्यु और पाताल) के देवता, मनुष्य और नाग आपके सम्मुख कीट पतगों के समान हैं ॥१८३॥

निराकार निरलेप, अगम आणै स्रु ति सिव अज
अनतमार अवतार करै भूधर भगतां कज
जयति जयति जग जीव विरुद राखण वद्रीपत
अगम सुगम कर अमर सत स्हायक छळ खळ हत
गत प्राक्रम तोरा को गिणै नामे नर नारी सहै
प्रभावाम-धाम आवै नहीं कर-जोड़े ईसर कहै ।१८४।

प्रभो ! आपको शिव, ब्रह्मा और वेद निराकार निस्पृह और अगम्य कहते हैं फिर भी आप अपने भक्तों के लिये असंख्य बार अवतार धारण करते हैं। छली और दुष्टों का नाश करके देवता और संतों को सुख देते हैं। आपकी इस गति और पराक्रम को कौन जान सकता है। आप अगम्य को सुगम करने वाले हैं। ईश्वरदास भी कहते हैं कि जो नर-नारी आपकी शरण में आजाते हैं वे फिर गर्भवास की घाटी में नहीं फंसते। ऐसे परम पावन विरुद वाले हे जगजीवन बदरीश ! आपकी जय हो, जय हो ॥१८४॥

अलख पुरस आदेस, मात विण तात सपन्नो
धात जात विण ध्यान, आप ही आप उपन्नो
रूप रेख विण रग, ध्यान जोगेसर ध्यावै
अमर कोड तेतीस, प्रभु तो पार न पावै
इळ रचण त्रिगुण सिव विसन अज, हेक निरजण आप हुव
घण घणा घाट भाजण घडण, अलख पुरस आदेस तुव १८५

हे अलख पुरुष ! आप सत्यत: अलक्ष्य हैं। आप किसी धातु से निर्मित नही। किसी जाति से उत्पन्न नही और धातु और जाति विशेष के ध्यान से आपका कोई निश्चित रूप नहीं। आप उस सृष्टिक्रम मे भी नही हैं जो माता-पिता के ससर्ग द्वारा उत्पन्न होता है। आपतो अपने मे से ही स्वय उत्पन्न हो गये। आपके उसी विना रेखा और विना रग के रूप का ही योगीश्वर ध्यान धरते हैं। तैंतीस कोटि देवता आपका पार नही पा रहे हैं। आपने सृष्टि रचना के निमित्त अपने उस निरजन स्वरूप को ब्रह्मा, विष्णु और महेश—इन त्रिगुण रूपो मे धारण किया। असख्य सृष्टियो का नाश और निर्माण करने वाले हे अलख पुरुष ! आपको नमस्कार है ॥१८५॥

अलख पुरस आदेस, आद जिअ जगत उपाया
अलख पुरस आदेस, विसद वैकुठ वसाया
अलख पुरस आदेस, धरा तळ अबर धरिया
अलख पुरस आदेस, सेवतां सेवग तरिया

आवेस करां इम्र नाम ना जो जोनी सकट हुरै
आदस अहोनिसअलख नां कर जोड़ी ईसर करै ।।१८६।

उस अलख पुरुष को आदेश है जिसने आदि में इस जगत को उत्पन्न किया। जिसने विषय वकुण्ठ की रचना की उस अलख पुरुष को प्रणाम है। जिसने पृथ्वी पाताल और आकाश को धारण कर रखा है उस अलख पुरुष को नमस्कार है। जिसकी सेवा करने से अनेक भक्त गण इस भवसागर से पार होगये उस अलख पुरुष को नमस्कार है। भक्त ईसरदास हाथ जोड़ कर कहते हैं कि उस अलख पुरुष के नाम को रात दिन (नित्य) बारम्बार प्रणाम है कि जो चौरासी लाख योनियों के जन्म-मरण के दुखों का नाश करने वाला है ।।१८६।

आदि अंत आदेस अलख आदेस अनंतर
अ ग-अलख आदेस अगम आदेस अपपर
एक रूप आदेस जगत गुरु जोग जोगेसर
ओमकार जोगेस, अनेक आदेस नरेसर
आधत नमो भगतां ईस गुण जपै ईसर गुणी
आदेस अलख इक रूप तू नमो नाथ त्रिभुवन धणी ।१८७।

हे आद्यन्त रहित अलख पुरुष ! आपको आदि और अं संज्ञाओं को आदेश है। आदि और अंत की संज्ञाओं को समवेत करने वाली आपकी अनंतर (=ब्रह्म) संज्ञा को आदेश है। अलख स्वरूप को जानने के जो साधन अंग (=सगुण रूपादि हैं उन्हें नमस्कार है। आपके अगम्य और अपरम्पार रूप को

नमस्कार है। हे जगत के गुरु-योग और योगेश्वर स्वरूप! आप एक ही हैं, आपको नमस्कार है। आप योगेश्वर और नरेश्वर के रूप मे ओम्कार स्वरूप हैं, आपको अनेक प्रणाम है। अलख रूप एक आप ही हैं,आपको नमस्कार है। कवि ईश्वरदास कहते है कि हे त्रिभुवन के स्वामी! मैं आपके उस अलख स्वरूप का ध्यान करता हूँ। आपको बारम्बार नमस्कार है ॥१८७॥

अलख पुरस आदेस, अमर नर नाग उपावण
सतत रत सघार, चार ही खाण चलावण
धर अबर ढकियण, वेद ब्रह्मा विसतारण
त्रिभुवन तारण-तिरण, सरण-असरण साधारण
घण घणा घाट भाजण वडण, विस्व ईस! साभळ वयण
ईसरो कहे असरण-सरण, नमो नाथ तो नारीयण ।१८८।

हे अलख पुरुष! आप देवता, मनुष्य और नागो को उत्पन्न करने वाले हैं। उद्भिज, स्वेदज, अडज और जरायुज–इन चारो प्रकार की योनियो मे आप सृष्टि को नित्य चलाने वाले और उसका सहार करने वाले है। पृथ्वी को आकाश से ढकने वाले और ब्रह्मा के रूप मे वेदो का विस्तार करने वाले हैं। आप त्रिभुवन के आधार रूप और उसका उद्धार करने वाले एव अशरण-शरण है। कवि ईश्वरदास कहते हैं कि असख्य सृष्टियो के रचने वाले और नाश करने वाले हे विश्वेश! आप मेरी भी विनती सुनिये। हे नाथ! हे अशरण-शरण! आपको नमस्कार है ॥१८८॥

सिंघासण धर सोह करत वींजण समोर कर
पुहप भार अड्डार पूज चढवे बिधि बिधि पर
छाह धरत घन छत्र करै सकर कीरत्ती
अवतारत निस-अहर, अरक ससिहर आरत्ती
धुनि करत वेद मगळ धमळ, ग्रह सुम्मर गावत गुण
मानवी साहरो महमहण ! करह सेव रिझवै कवण ।१७६।

समस्त धरातल आपका सिंहासन है पवन अपने हाथ से आप पर पंखा झल रहा है। अठारह भार वनस्पति अपने अनेक प्रकार के पुष्पों को चढ़ा कर आपकी पूजा करती है। बादल छत्र के रूप में आप पर छाया कर रहे हैं। भगवान् शंकर आपका कीर्ति-गान करते हैं। सूर्य और चंद्र रात दिन आपकी आरती उतार रहे हैं। वेद आपके मंत्र की निर्मल मंगल ध्वनि कर रहे हैं और अनेक ग्रहगण और देवता लोग आपके गुणों का गान कर रहे हैं। हे महा महाराव ! इस प्रकार के सेवा के सम्मुख एक साधारण मनुष्य आपकी किस प्रकार की सेवा करके आपको प्रसन्न कर सकता है ? ॥१८९।

ब्रह्मा वेद उच्चरै बीण ग्रहो तुमर बजावै
रमा अवसर रचै, गीत सुरसत्ती गावै
व्यास कीरत विसतरै सक्र सिर चम्मर ढाळै
सिव आमाधन कर पाव गगा सु पखाळै
सस साळ मळा ग्रघत सव सूरज ओनो सुभ धरे
एकत्र नाथ सुर निस अहो कमळा ता आरति करे ।१९०।

प्रभो ! वेदो द्वारा ब्रह्मा आपके गुणो का उच्चारण करते है, देवता लोग वीणा वजा रहे है, रभा नृत्य कर रही है और सरस्वती आपका गीत गा रही है। भगवान् वेदव्यास आपकी कीर्त्ति पढते हैं, इन्द्र आप पर चमर झल रहा है। भगवान् शकर विवेचन करते हैं और गगा आपके चरणो का प्रक्षालन करती है। चद्र अपनी सोलह कलाओ द्वारा अमृत वर्षा कर रहा है और सूर्य शुभ प्रकाश कर रहा है। इस प्रकार लक्ष्मीजी द्वारा आपकी की जाने वाली आरती मे देवता लोग निरतर एकत्रित होते हैं ॥१९०॥

नमो निरंजणनाथ, पार कुण तोरा पम्मै
निगम कहै गम नाय, देह जोगेसर दम्मै
नाग-नवे-कुळ आय, चरण रज सीस चढावै
गगा गायत्री गवरि, गुण सह थारा गावै
सह धाम प्राग तीरथ सवै, चद रवी पूजै चरण
कर जोड दास ईसर कहै, नमो नमो नारायण ।१९१।

हे निरजननाथ ! चारो वेद आपके सम्वन्ध मे सव कुछ कहने के बाद कह देते है कि इसके आगे हम कुछ नही जानते, वह 'नेति' है। योगीश्वर लोग आपकी प्राप्ति के लिये अपनी देह का दमन करते है। नवो ही कुलो के नाग लोग आकर आपकी चरण रज अपने शीश पर चढाते हैं। गगा, गायत्री और गौरी सभी आपका गुण गाती हैं। सभी (चारो) धाम और प्रयाग आदि सभी तीर्थ, सूर्य और चन्द्रमा आपके चरणो की पूजा करते है। ईश्वरदास कहते हैं कि हे नारायण ! आपका पार कौन पा सकता है। आपको वारम्वार नमस्कार है ॥१९१॥

सेस अनंत सिव सक्ति, ग्यांन कर निस दिन गाव
अनंत वेद अज इद्र कीरती सार कहाव
अनत कोट अवधूत महा तपसी वन मांही
भजै अनंत सस भांण पार जस कोउ न पाही
दिगपाळ देव दानव सकळ सगुण कथत थारा सबै
किणमात विया प्राकृत कवि चत्रभुज थारा गुण चव १६२

शेष शिव शक्ति वद ब्रह्मा और इन्द्र निसदिन अनंत प्रकार से ज्ञान द्वारा आपकी कीर्ति का वर्णन करते हुए आपका गुणगान करते हैं। अनन्त कोटि अवधूत और महा तपस्वी वन में आपका भजन करते हैं। अनंत सूर्य और चन्द्रमा कोई भी आपके यश का पार नहीं पा रहे हैं। दसों दिग्पाल देवता और दानव सभी आपके सगुण रूप का कथन करते हैं। (ईश्वरदास कहते हैं कि) हे चतुर्भुज ! इन सबके आगे अन्य साधारण कवि आपके गुणों का वर्णन किस प्रकार करने में समर्थ हो सकते हैं ? ॥१६२॥

दूहा

नारायण नारायणा तारण-तिरण अहीर ।
हूं चारण हरि गुण चवां सागर भरियो खीर ॥१६३॥

हे नारायण ! आपही नर-नारायण हैं। अहीर कुल में अवतीर्ण होकर भी और भक्तजनों का उद्धार करने वाले आप ही श्रीकृष्ण हैं। उन श्री हरि के गुणों का मैं चारण ईश्वरदास वर्णन करूं मेरे लिये यह सौभाग्य ? क्षीर से भरे सागर की प्राप्ति के समान है ॥१६३॥

नारायण नारायणा, म्होटा काटण फद
हो चारण हरि गुण चवा, सोनो अनै सुगध ।१६४।

चारण ईश्वरदास कहते हैं कि हे नारायण ! हे विष्णो ! आप जन्म-मरण के बधन को काटने वाले हैं। ऐसी अहेतुकी कृपा करने वाले श्री हरि के गुणो का मैं चारण ईश्वरदास वर्णन करू, यह सोने मे सुगधि के समान है ॥१६४॥

॥ ॐ शिव ॥

३. नाम महिमा

गाथा

अहळै हो हरि नाम, जाण अजाण जपीजै जीहा
सास्त्र वेद पुराण, सर्व मही तत अक्खर सार ।१६५।

वेद, पुराण और सभी शास्त्रो मे हरि के नाम के अक्षर तत्त्व और सार रूप कहे गये हैं। इसलिये जान या अनजान जैसे भी हो श्री हरि का नाम जिह्वा से जपते रहना चाहिये ॥१६५॥

दूहा

पहलो नाम प्रमेस रो, जिय जग मँडियो जोय ।
तीन भवन चो रज्जियो, सुफळ करेसी सोय ।१६६।

जिस परमेश्वर ने जगत् की रचना की है उसी का नाम सर्व प्रथम लेना चाहिये। वही त्रिभुवन का स्वामी है और प्राणी मात्र के जीवन को सफल बनाने वाला है ॥१६६॥

अहळे नारायण तणों, जे नर नांम लियत
ते यमराणापुर तजी, राघव चरण रहंत ।१६७।

जो मनुष्य सहज ही में नारायण का नाम लेते रहते हैं वे यमराणापुरी (यमपुरी) को छोड़ कर (यमलोक में नहीं जाकर) भगवान राम के चरणों में जाकर निवास कर लेते हैं ।।१६७।।

नारायण रो नांम तो, भूडां ही भल थांण
चोपड़ियो चणो थियै जहड़ो-सहड़ो खांण ।१६८।

जैसा-तैसा भोजन भी घृत युक्त होने से स्वादिष्ट हो जाता है इसी प्रकार बुरे मनुष्यों के मुंह से श्रीनारायण का नाम निकलते ही वह मनुष्य भला बन जाता है ।।१६८।।

नांम सु तीरथ नांम व्रत, नांम सलक्मो कांम
एको अक्खर तत फळ जप जिव्या श्रीरांम ।१६६।

श्री हरि नाम का जप ही तीर्थ व्रत और सुकृत्य (नाम-दायक नाम) है। उसका एक-एक अक्षर (एक ही नाम) तत्त्व फल का देने वाला है। अतः जिह्वा से श्री राम के नाम का जप कर ।।१६६।।

दासै ईसरदास यूं कटक न होणा कीध ।
रांम रांम रटतां थकां, लक वभीखण लीध ।२००

ईसरदास कहते हैं कि राम के नाम का प्रभाव तो देखिये। विभीषण ने राम का नाम रटते हुए बिना सेना की सहायता के (युद्ध किये बिना ही) लंका का राज्य प्राप्त कर लिया ।।२०० ।।

राम जपता राज श्री, राम भणता रिद्ध ।
राम नाम सभारता, पामीजै नव निद्ध ।२०१।

श्रीराम का नाम जपने से राज्य और लक्ष्मी, राम का नाम जपने से ऋद्धि और राम के नाम का सुमिरण करने से नौ ही निधियाँ प्राप्त हो जाती हैं ।।२०१।।

राम नाम रटता रहो, आठूं पहोर अखड ।
सुमरण सम सौदा नही, नर देखो नवखड ।२०२।

आठो पहर अखड रूप से श्री राम का नाम रटते रहिये । नौ ही खड में देख लीजिये—श्रीराम नाम के सुमिरण के समान कोई (सुलभ और लाभकारी) सौदा नही है ।।२०२।।

नारायण रो नाम जिअ, ना लीधो निरणाह ।
यूं जनमारो जिकण रो, ज्यूं जगळ हिरणाह ।२०३।

जिन्होंने प्रात काल भोजन करने के पहले नारायण के नाम का उच्चारण नही किया, जिनका जीवन जगल के हरिण की भाति यो ही गया ।।२०३।।

नारायण रा नाम सू, लोक मरै कर लाज ।
बूडैला बुघ-बाहरा, जळ विच छोड जिहाज ।२०४।

श्री नारायण का नाम लेने से जो लोग लाज मरते हैं, वे बुद्धिहीन नाम रूपी जहाज को छोडकर भव जल मे डूब जायेंगे ।।२०४।।

नारायण रा नाम री, मोडी पडी पिछाण ।
कई दिन बाळापण गया, कई दिन गया अजाण ।२०५।

कई दिन तो बचपन और जवानी में बीत गये परंतु अब बहुत देरी से (बुढ़ापे में) श्री नारायण के नाम की पहिचान हुई ॥२०५॥

नारायण रा नांम सू प्राणी कर लै प्रीत ।
इण घट वणियो आतमा, चत्रभुज आसी चीत ।२०६।

हे प्राणी ! तू नारायण के नाम से प्रीति कर क्योंकि इस मनुष्य शरीर में जब तक आत्मा का प्रकाश बनाया हुआ है तभी तक वह याद आ सकेगा ॥२०६॥

नारायण रा नांम सू, प्राणी वांणी पोय ।
जम डांणी लागै नहीं हांणी, मूळ न होय ।२०७।

हे प्राणी ! नारायण के नाम रूपी रत्न को रसना रूपी धागे में पिरोले। पिरोलेने के बाद उस पर फिर यम-डाणी (कर वसूल करने वाला) पाप-पुण्य के व्यापार का लेखा करके उसका फल भुगताने वाले यमराज का कोई कर नहीं लग सकेगा। और मोक्ष प्राप्ति रूप अपने मूल धन की तो कोई हानि हो ही नहीं सकती ॥२०७॥

नारायण रा नांम सू भरियो रह भरपूर ।
दामोदर नां दाखवे दम छिक करै न दूर ।२०८।

हे प्राणी ! तू श्री नारायण के नाम रूपी रस से पूर्ण भरा रह। श्री दामोदर के नाम का सुमिरण एक श्वास के लिये भी दूर मत कर ॥२०८॥

नांम समोवड को नहीं जप तप तीरथ जोग ।
नांमे पातक नासही नांमे नासे रोग ।२०९।

नाम के समान जप, तप, तीर्थ और योग कोई नही है। नाम से पाप और ताप नाश हो जाते हैं ॥२०९॥

खुधा न भाजै पाणिया, त्रिखा न छीजै अन्न ।
मुगत नही हरि नाम विण, मानव साचे मन्न ।२१०।

भूख पानी से और तृषा अन्न से नही मिटती। इसी प्रकार हे मानव! यह सच समझ कि हरि के नाम सुमिरण बिना मुक्ति नही ॥२१०॥

वैद तणी वसावळी, कहो कि वाचण काम ।
मिटै रोग जाँमण मरण, निगम लियंता नाम ।२११।

वैद्य की वशावली पढने से (खुशामद करने से) क्या प्रयोजन ? जब कि जन्म-मरण जैसी भयकर व्याधियें भी उस परब्रह्म परमात्मा का नाम लेने मात्र से ही मिट जाती हैं॥२११॥

अजामेळ जम-दळ अगा, विछुटो विखमी वार ।
करते नारायण कह्यो, पुत्र हेत पोकार ।२१२।

नारायण नाम के अपने पुत्र को अत समय मे पुकारने के कारण अजामिल यमदूतो के दल से मुक्त हो गया ॥२१२॥

न ले साद क्यु नाथजी, सादविया ज्या सत ।
आपण नाम उळावताँ, घीणू कान धरत ।२१३।

अपना नाम पुकारने से गौ भी उधर कान देती है। तो भला जिन सतो ने भगवान को पुकारा है, उनकी पुकार वे क्यो नही सुनेंगे ? ॥२१३॥

अेको नाम अनत रो, पालै पाप प्रचड ।
जव तिल जेतो जाळनळ, खोण दहै नव-खड ।२१४।

छोटा से छोटा अग्निकण जो सब पृथ्वी को जलानेमें समर्थ है उसी प्रकार उस भगवत का एक नाम ही भयंकर पापों को नाश करने में समर्थ है ।।२१४।।

चत्रभुज चरणां धार चित अकळ अजोणी आख ।
गोकळ गिरधर ग्यान ग्रहि राम नांम मुख राख ।२१५।

हे प्राणी ! तू उस चतुर्भुज रूप भगवान् विष्णु के चरणों का चित्त में ध्यान धर कर उनके नाम का नित्य स्मरण कर जो अलख और अयोनि ब्रह्म है । गोकुल में श्री गिरिधर के रूप में लीला करने वाले उस परब्रह्म के ज्ञान का सम्पादन कर और उसी परब्रह्म के राम नाम को अपने मुंह से उच्चारण कर।।२१५

बद्री त्रीकम नाथ बुध, जगमोहन जयकार ।
घण दाता आनद घण, श्रीपत स्रवणां धार ।२१६।

नाना रूप और अपनी लीलाओं से जगत को मोहित करने वाले उस परब्रह्म के बदरी त्रिविक्रम (विष्णु वामन) नाथ (शिव) और बुद्ध आदि असंख्य नामों का हे प्राणी ! जय उच्चारण कर और उस औढरदानी और आनद से भरपूर (आनंदस्वरूप) श्री विष्णु के नामों को अपने श्रवणों में धारण कर।।२१६।।

पुरुषोतम पूरण प्रभू राघव गिरधर रूप ।
मुरलीधर मोहन मुकन भजले त्रिभुवन भूप ।२१७।

सोलह कलाओं युक्त पूर्णावतार पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम गोवर्धन पर्वत को धारण करने वाले गिरधारी मुरली को बजाकर जगत को मोहित करने वाले त्रिभुवन के स्वामी श्री कृष्ण और मुकुन्द—इन नामों को हे प्राणी ! तू सदा स्मरण कर ।।२१७।।

राम क्रिसन नारायणा, सचिदानद गोविंद ।
वासुदेव वीठळ विभु, नरहर गोकुळ नंद ।२१८।

श्रीराम, कृष्ण, नारायण, सच्चिदानद, गोविंद, वासुदेव, विट्ठल, नृसिह और गोकुलनद—सर्वत्र व्यापक ब्रह्म के इन नामो का तू सदा स्मरण कर ।।२१८।।

छद विअखरी

नाम नांव हो चढ़ियो जग त्रिप
रखे हिवै डोलै रावण-रिप
करो क्रिपा तो सेवा कीजै
लिवरावो तो नाम लिरीजै ।२१९।

हे रावणरिपु, जगत्पति श्री रामचद्र ! मैं आपके नाम रूपी नौका मे सवार हुआ हूँ, तो कही ऐसा न हो जाय कि वह नाव डोलने लगजाय । क्योकि नाम का लिया जाना और आपकी सेवा करना—ये दोनो काम आपकी कृपा पर ही निर्भर है ।।२१९।।

छप्पय

प्रगट नाम परताप, वास वैकुंठ वसायो
प्रगट नाम परताप, दूत जम त्रास दिखायो
प्रगट नाम परताप, चड भागै चौरासी
प्रगट नाम परताप, उरे नव रहै उदासी
राम रो नाम प्राणी रटै, तासू जळ पाथर तरै
धर ध्यान ईसरा सक धर, अजूं राम मुख उच्चरै ।२२०।

नाम का प्रभाव प्रगट है जिसने यमदूतों को त्रास दिला कर अजामिल को बकुंठ में बसा दिया। नाम का प्रभाव प्रगट है जिससे घोर चौरासी के दुख मिटकर हृदय में कोई संताप नहीं रहने पाता। राम का नाम रटने से जल पर पत्थर तिर गये। ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्राणी! (अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है।) सांसारिक कामों में यमयातना का भय मानते हुए उसके निवारणार्थ अब भी मुख से श्रीराम के नाम का उच्चारण कर और उसका ध्यान धर ॥२२०॥

रांम नांम परताप हणू दूणागिर लायो
रांम नांम परताप इंद्र इन्द्रासण पायो
रांम नांम परताप ध्रुव अवचळ हुइ रहियो
रांम नांम परताप पांडु कुळ नकळंक कहियो
सो रांम नांम रटतां रसण अनत भक्त जन उधरै
धर ध्यांन ईसरा सक धर, अजू रांम मुख उच्चर ।२२१।

श्री राम नाम के प्रताप से हनुमान द्रोणागिरि उठा कर ले आये। श्री राम नाम के प्रताप से इन्द्र ने इन्द्रासन प्राप्त किया। श्रीराम नाम के प्रताप से ध्रुव को अचल धाम की प्राप्ति हुई। श्री राम नाम के प्रताप से पाण्डुकुल निष्कलंक कहलाया। उसी राम नाम को रसना द्वारा रटते रटते कई भक्तजनों का उद्धार हो गया। ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्राणी! परभव का डर मानकर श्री राम नाम का मुख से उच्चारण करता हुआ अब भी तू उसका ध्यान धरना शुरू करले ॥२२१॥

वासुदेव परब्रह्म परम आतम परमेसर
अकळ ईस अणपार जगत जीवण जोगेसर

निरालव निरलेप, अखिल ईसर अविनासी
थावर जगम थूळ, सुछम जग माय निवासी
दाळद्र पाप राखस दमन, पारस सगम लोह परि
निज नाम नमो नारायणा, हसराज सिरताज हरि ।२२२।

हे परब्रह्म परमात्मा ! आप परमेश्वर वासुदेव हैं। निराकार ईश्वर है। अपार हैं। जगत के जीवन और योगीश्वर हैं। आप अवलबन रहित और निर्लेप हैं। अखिल विश्व के ईश्वर और अविनाशी हैं। स्थावर, जगम, स्थूल और सूक्ष्म—समग्र जगत् मे सत्ता-स्फूर्ति से निवास कर रहे हैं ! सर्वशिरोमणि परमात्म स्वरूप हे श्री नारायण ! आपके नाम रूपी पारस के सगम से लोह रूपी दारिद्र्य और पाप नामक राक्षसो का नाश हो जाता है ।।२२२।।

छद मोतीदाम

न मेलहु तूझ तणो कदी नाम
विसन्न ! भगत्त तणा विसराम
परम्म निवास निवारण पाप
जोगेसर भद्र अजपाय जाप ।२२३।

हे भक्तो के विश्राम विष्णु भगवान् ! आप पापो का नाश करने वाले और परम-निवास (मोक्ष स्वरूप) हैं। आप ही कल्याणकारी शिव हैं और आप ही अजपा जाप हैं। आपके ऐसे परम पावन नाम को मैं अब कभी नही छोडूगा ।।२२३।।

प्रगट्टत ग्यान तोरो ज्या प्रम्म
भगै मद मम्मत छूटत भ्रम्म

अक्षरांय नांम टळ दुख ओघ
उपज्जत आणद चित्त अमोघ ।२२४।

परमात्मन् ! जिनको आपके स्वरूप का ज्ञान हो गया, उनका भ्रम निवारण होकर मद और ममता का नाश हो जाता है। ऐसी स्थिति में आपके नाम का उच्चारण करते ही पाप समूहों का नाश होकर चित्त में अमोघ आनन्द उत्पन्न हो जाता है ।।२२४।।

तव हरि नांम अहोनिस तम्म
जरा र्त्यां काळ न व्यापत जम्म
भज तव नांम टळ मन भ्रम्म
कथै तव नांम कटै सब क्रम्म ।२२५।

प्रभो! आपके श्री हरि नाम को जो अहर्निश लेते रहते हैं उन्हें वृद्धावस्था मृत्यु और यम की यातना नहीं व्यापती। आपका नाम जपने से भ्रम की निवृत्ति होती है और आपका गुणानुवाद गाने से पाप कर्मों का नाश हो जाता है ।।२२५।।

रटै तव नाम मिटै दुख रोर
जरामय पाप न लागत जोर
जपै तव नांम प्रती दिन जोह
ससार सिंकां नहीं खावत सीह ।२२६।

आपका नाम रटने से नरक का दुख बुढ़ापा रोग और पापों का जोर नहीं चलता। और जो प्रतिदिन आपका नाम जपते रहते हैं उन्हें संसार में काल रूपी सिंह नहीं खाता ।।२२६।।

रटै तव नाम ब्रिदावन-राव
तिका मन काम न व्यापत ताव
करै हरि हेत सु तोर सुक्रीत
चित्या त्या मूळ न व्यापत चीत ।२२७।

हे वृन्दावनराव श्री कृष्ण ! जो आपका नाम रटते हैं, उनके शरीर मे काम की पीडा नही व्यापती । हे हरि ! प्रेम के साथ जो आपकी कीर्ति का वर्णन करते हैं, उनके चित्त मे किंचित् भी चिन्ता नही व्यापती ।।२२७।।

रटै तव नाम सदा सिरिरग
अखै नहि ताहि ससार-भुजग
रखै तव नाम तणी अत रीझ
वळै धखती त्या मारै न वीज ।२२८।

हे श्री रग ! जो सदा आपका नाम रटते हैं, उन्हे ससार रूपी भुजग नही डसता । और जो आपके नाम मे अत्यन्त प्रेम करता है, उसको जलता हुआ वज्रपात भी मार नही सकता ।।२२८।।

रता तुव नाम रहै रहमाण
जिका नहि सासो आवण-जाण
जिको हरि पाय लग्यो रह जाय
तिलो भर मोह न लोपत ताय ।२२९।

हे ईश्वर ! जो आपके नाम मे रत रहता है उसे आवागमन का सशय नही । हे हरि ! जो आपके चरणो की भक्ति मे अनुरक्त रहता है, उसका मोह किंचित भी बिगाड नही कर सकता ।।२२९।।

मर्दे तव नाँम लखम्मण-वीर
नरां ल्यां पास लगै नहि नीर
ग्रह तव नाँम सु अक्खर दोय
नैडो रह प्रांण नियारो न होय ।२३०।

हे लक्ष्मणाग्रज श्रीरामचन्द्र! जो आपके नाम का उच्चारण करते हैं उन्हें यम पाश नहीं होती। और प्राण समीप आने (कंठगत होने) के समय जो राम इन दो अक्षरों को दृढ़ता से कह देता है उससे यम की फाँसी अलग हो जाती है (वह यम की फाँसी से छूट जाता है) ॥२२ ॥

चतुरभुज नाँम धरै तुव चित्त
नवो-निध सिद्ध मिळे ल्यां नित्त
रुचै तव नाँम जिके घण रूप
कधी न पड़ नर सो भव-कूप ।२३१।

हे चतुर्भुज! जो आपके नाम को चित्त में धारण करते हैं उन्हें नौ निधि और अष्ट सिद्धि नित्य प्राप्त होती हैं। हे घन रूप! जो आप के नाम में रुचि रखते हैं वे कभी संसार-कूप में नहीं गिरते ॥२३१॥

उळगत राँम ज आपहि-आप
विमै तन पच सकै न वियाप
भजै तव नाँम जिके भगवाँन
खपै ल्यां पाप त्रिखा खय माँन ।२३२।

इस प्रकार हे भगवान् ! आपके 'श्रीराम' के नाम को जो मस्त होकर अहर्निश गाता ही रहता है, उसको ससार के पच विषय नही व्याप सकते। और उसके पाप, तृष्णा और मान अपमान आदि विकारी भावनाओ का नाश हो जाता है ।।२३२।।

छप्पय

त्रीकम पुरुसोतम्म, रूप हे मह्य मनोहर
हरि वांमन हयग्रीव, धनुस धारण फरसूधर
निकळक गोपीनाथ, पतित पावन प्रमोदघण
माधव साळगरांम, अनत नांम नारायण
त्रयलोक नाथ तारण-तिरण, साहव वलिभद्र सभरै
धर ध्यांन ईसरा सक धर, रांम नांम मुख उच्चरै ।२३३।

श्री त्रिविक्रम, पुरुषोत्तम, हरि, वामन, हयग्रीव, धनुष-धारी श्रीराम, परशुराम, कल्कि, गोपीनाथ, पतितपावन, आनद धाम, माधव, सालिग्राम, नारायण, त्रिलोकीनाथ, तारण-तरण, श्रीकृष्ण आदि उसके अनन्त महा मनोहर रूप और नाम हैं। उनका तू सुमिरण कर। ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्राणी ! परभव का डर मानकर तू उस प्रभु के एक श्रीराम नाम का ही मुख से उच्चारण करता हुआ अव भी उसका ध्यान धरना शुरू करले। (तेरा वेडा पार हो जायेगा) ।।२३३।।

॥ ॐ शिव ॥

४ श्री चरण महिमा

छंद मोतीदाम

सहस्र विभूत वियापक स्रब्ब
धुवावस आंगळ गात दिपब्ब
जदूकुळ-नायक सामिय-जग्ग
पदम्म पताक अलक्रत पग्ग ।२३४।

सहस्रों विभूतियों द्वारा सारे संसार में आप व्यापक हैं एवम् सर्व प्राणियों के बारह अंगुल के वहराकाश में भी आप उसी प्रकार विद्यमान (प्रकाशमान) हैं । ऐसे हे सर्व जगत् के स्वामी यदुकुलनायक भगवान् श्री कृष्ण ! आपके चरण ध्वजा और पद्मादिक चिह्नों से अलंकृत हैं ।।२३४।।

पगां रिय रेण धरै सिर श्रम्म
धियावत पग्ग अहोनिस ध्रम्म
पुजै पदपंकज कोमळ पांण
उदक्क चढावत गंग सु आंण ।२३५।

आपके चरणों की रेणु को श्री शंकर सिर पर धारण करते हैं । धर्मराज अहर्निश आपके चरणों का ध्यान करते हैं । कोमल करोंवाली श्री लक्ष्मीजी आपके चरणों की पूजा करती हैं और श्री गंगाजी स्वयं आपके चरणों को अर्घ्य प्रदान करती हैं ।।२३५।।

पखाळत तीरथ अडसठ पग्ग
इद्रादिक देव करत ओळग्ग
तळासत पाय नवे निध तम्म
महा सिध साधक जाणत भ्रम्म ।२३६।

अडसठ तीर्थ आपके चरण-कमलो का प्रक्षालन करते हैं। इन्द्रादिक देवतागण उनकी स्तुति करते हैं। नौ ही निधियाँ आपके चरण कमलो की सेवा करने के लिये आतुर रहा करती हैं। आपके इन चरणो की महिमा के रहस्य को महा सिद्ध और साधक ही जानते हैं ॥२३६॥

महातम जाणत ब्रह्म महेस
सदा पग आगळ लोटत सेस
गुणा सत अस्तुति करत गणेस
पगा रिख लाग करै नित पेस ।२३७।

आपके चरणो की महिमा को श्री ब्रह्मा और श्रीशकर जानते हैं और शेष भगवान तो सदा चरणो के आगे लोटते ही रहते हैं। भगवान गणेश आपके चरणो की स्तुति सैकडो प्रकार से करते ही रहते हैं और ऋषिगण आपके चरणो का स्पर्श करके नित्य अपनी सेवा अर्पण करते हैं ॥२३७॥

पगा हणमत करत प्रणाम
सदा पग वदत कार्तकसाम
पगा तळ मडत सीस प्रयाग
वसै पग आगळ ग्यान विराग ।२३८।

महावीर श्री हनुमान और स्वामिकार्तिक नित्य आपके चरणों में प्रणाम करते हैं। तीर्थराज प्रयाग अपना मस्तक आपके चरणों के तलों में लगाते हैं और ज्ञान और वैराग्य आपके चरणों में निवास करते हैं ॥२३८॥

पियै पग रस्स ब्रहम्म-सपूत
अमीय सुरभ लिवै अवधूत
पुज पग निम्मळ बेद पुरांण
अळीयळ नाथ लिय अपरांण ।२३९।

सनकादिक और अनेकों अवधूत आपके सुगंधयुक्त चरणामृत का पान करते हैं। वेद और पुराण आपके चरण कमलों की पूजा करते हैं और नौ नाथ भौंरों के समान भी चरण-कमलों की सुगंधि पान करते हैं ॥२३९॥

लखम्मिय पग्ग धरै उर लह
बुधो सिधि पग्ग तळै रह वह
रमै पग छांह मधूकर रक्ख
तकै पग नाग सरीखाय तक्ख ।२४०।

श्री लक्ष्मीजी आपके चरण कमलों का हृदय में धारण किये रहती हैं। शारदा और सिद्धि दोनों चरणतल में निवास करती हैं। ऋषिगण रूप भ्रमर आपके चरण कमलों की छाया में क्रीड़ा करते हैं और शेष सरीखे नागराज आपके चरणों के दर्शन करने की ताक में रहते हैं ॥२४०॥

पगां भणि सिंधुव सात पियाळ
मेल्है पग अग्घि मुताहळ-माळ

सुहै पग छांह सातू-रिख साम
रहै पग छाह यसा वरियाम ।२४१।

सातो समुद्र और सातो पाताल (उनके अधिपति देवता वरुण और शेष नाग) आपके चरणो को मोतियों की मालाओं से पूजा करते हैं। सप्तऋषि आपके चरणो की छाया मे रह कर शोभा पा रहे है। ऐसे सभी श्रेष्ठ और दिव्य पुरुष आपके चरणो की छाया मे निवास करते हैं ॥२४१॥

सेवै तुझ पाव सदामद सक्क
इळा पग छाह मयक अरक्क
सेवै तुझ पाव समदर सात
निरजण पाव नमो निरगात ।२४२।

इन्द्र निरतर आपके चरणो की सेवा करते हैं। पृथ्वी, चद्र और सूर्य आपके चरणो की छाया मे रहते हैं। सातों समुद्र आपके चरणो की सेवा करते हैं। निरंजन और निराकार ब्रह्म का चिन्तन करने वाले ज्ञानी जन भी उन चरणो को नमस्कार करते हैं ॥२४२॥

जपै पग गोतम गर्ग जमन्न
कपिल्ल कणाद कहै करमन्न
पतजळ व्यास जुडै नित पाण
वदे पग रा खट-भाख वखाण ।२४३।

गोतम, गर्ग, जैमिनी, कपिल, कणाद, पतजलि और व्यास जैसे कर्मण्य महामुनि सदा हाथ जोड

कर प्रणाम करते हैं और छहों शास्त्रों द्वारा (न्याय, वैशेषिक, मीमांसा सांख्य और पातंजल योग) आपके चरणों की स्तुति करते हैं ॥१४३॥

नमै पद कुंभज द्रोण नारद
वंदे पद भारद्वाज विहद
जपै पग वासिठ जामदगन्न
महा वलमीक सनक्क मगन्न ।२४४।

अगस्त्य द्रोण, नारद भारद्वाज वशिष्ठ, जमदग्नि वाल्मीकि और सनकादि महामुनिगण आपके विशद चरणों की मग्न हो कर सेवा-पूजा करते हुए गुणगान करते हैं ॥२४४॥

परासर वालखिला पद-सेव
अस्टावक्र अत्रि प्रांणे अस भेव
विस्वामित कासप गस्त्र विमेक
अठासी हजार असै मन हेक ।२४५।

पाराशर (साठ सहस्र) बालखिल्यऋषि अष्टावक्र अत्रि विश्वामित्र कश्यप गस्त्र आदि अठासी सहस्र ऋषि एक ही मन और वाणी से स्तुति करते हुए आपके चरणों की महिमा और रहस्य को समझ कर उनकी सेवा करते हैं ॥२४५॥

जुजट्ठळ भीम करै पग जाप
चंदै पग रेण अरज्जुण आप
देखै पग छांह रहै सहदेव
सदाहि नकूल करै पग सेव २४६।

युधिष्ठिर और भीम आपके चरणो का जप करते हैं। आपकी चरण रज को अर्जुन नमस्कार करते हैं। सहदेव आपके चरणो की छाया को प्रतीक्षा करता है और नकुल नित्य आपके चरणो को सेवा करता है ॥२४६॥

सेवै पग जन्नक सन्नक सूर
अभेमन ओधव त्यूं अकरूर
जपै पग कोट-छपन्न-जदूव
वंदै सुकदेव जसा विसनूव ।२४७।

देवता, सनकादिक, जनक, अभिमन्यु, उद्धव और अक्रूर आपके चरणो की सेवा करते हैं। छप्पन करोड यादव आपके चरणो का ध्यान धरते हैं और परम वैष्णव शुकदेव जैसे आपके चरणो को प्रणाम करते है ॥२४७॥

पगा विहु-राह करत प्रयाण
सेवै पदकज सन्यासि सयाण
प्रणम्मत पाय परम्म प्रवीत
सावित्रिय गौरि गायत्रिय सीत ।२४८।

निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनो मार्गो के अनुयायी आपके चरणों को भक्ति द्वारा मोक्ष को प्राप्त होते हैं। इसलिये ज्ञानी सन्यासी भी आपके चरण कमलो की सेवा करते हैं। आपके परम पवित्र चरणारविंदो मे सावित्री, गौरी, गायत्री और लक्ष्मी प्रणाम करती हैं ॥२४८॥

सेवै पग गंध्रव चारण सिद्ध
वंद पग रा जस वस विसुद्ध
प्रुहारत पग्ग जसा जयदेव
सेवक्क अनम करै पग सेव ।२४६।

गन्धर्व चारण और सिद्ध जन विशुद्ध वंदों का वर्णन करने के पूव आपके चरणों के यश का वर्णन करते हैं। जयदेव जैसे भक्त, आपके चरणों को प्रणाम करते हैं और आपके अनेक सेवक आपके चरणों की सेवा करते हैं ॥२४६॥

हिये पद छाह सदा हुर हार
सुरमत पग्ग पहाड़-सधार
चहै पग छांह विबुद्ध समाज
रहै पग छांह वडा बळिराज ।२५०।

गोवर्धन पवत को धारण करने वाले गिरधारी के सुखप्रद चरणों की छाया को शेष सदा अपने हृदय में धारण किये हुए हैं। देवगण आपके चरणों की छाया की इच्छा करते हैं और महा दैत्य बलिराजा आपके चरणों की छाया में निवास करते हैं ॥२५०॥

चरच्चत पाव सुसीतळ चंद
दिये पग वदन रेव दुबिंद
तळै पग छांह नवग्रह तांम
पगां दिगपाळ करत प्रणांम ।२५१।

शीतलता प्रदान करने वाले चन्द्रदेव आपके चरणों की सदा अर्चा करते हैं। सूर्यदेव (समिष्ट रूप से अपने प्रकाश द्वारा)

आपके चरण कमलो को प्रणाम करने के लिये देखते रहते हैं। नवो ग्रह आपके चरणो को छाया तले निवास करते हैं और दशो दिक्पाल आपके चरणो को प्रणाम करते हैं ॥२५१॥

वडा पग नित्त वँदै दरवेस
अणी पग देव लहत आदेस
उळग्गत पाव धरम्म अलक्ख
चहै पग गोरख आतुर-चक्ख ।२५२।

आपके महान् चरणो को ज्ञानी साधु प्रणाम करते हैं। देवता लोग इन्ही चरणो को नमस्कार करते हैं। आपके चरणो का यशगान करने से अलक्ष धर्म को प्राप्ति होती है इसीलिये गोरखनाथ वडी आतुर दृष्टि से आपके चरणो के दर्शनो को चाह रहे है ॥२५२॥

अळूझत पाव विरक्त अमाण
सेवै पग राउर दास सुजाण
पगा स्रव वँदई जोडत पाण
भुवन्न-चऊद वँदै पग भाण ।२५३।

वडे वडे अमानी विरक्तगण आपके चरणों मे उलझ रहे हैं। आपके दास और ज्ञानी आपके चरणो की सेवा करते है। चौदह ही भुवन और उनके चौदह ही सूर्य हाथ जोड कर आपके चरणो मे प्रणाम करते है ॥२५३॥

अहल्या दीधस उत्तम अग
सरीर कुबज्जाय कीध सुचग
दिधी नळ कूवड पूरब देह
न भाग्योह नागणि नाग सनेह ।२५४।

इन्हीं पावन चरणों ने शिलारूप अहिल्या को उत्तम धाम प्राप्त कराया। कुबड़ी कुब्जा की कूब को मिटा कर उसे सुन्दर बना दिया। वृक्ष रूप नल और कूबर को अपनी पूर्व मनुष्य-देही दे दी। परस्पर अत्यन्त स्नेह वाले काली नाग और नागिन को आपके चरणों ने वियोग नहीं करा कर उनके स्नेह को तोड़ा नहीं ॥२५४॥

नखां उपमा नव कोट अरक्क
सम्राथ सरज्जण भाजण सक्क
इके खिण मांस भंजै घर आभ
निपाय अधेखिण पद्‌मनाभ ।२५५।

आपके चरणों के नखों की उपमा करोड़ों सूर्य के समान है और वे इन्द्र जैसों को बनाने और बिगाड़ने में समर्थ हैं। हे पद्मनाभ ! आपके चरण-नख एक क्षण में पृथ्वी और आकाश को नष्ट कर आधे ही क्षण में पुनः उत्पन्न कर सकते हैं ॥२५५॥

इसा पग सूझ तणाह उदार
सेवै तिहि पाप टळै ससार
म ठेल म ठेस पगां सुंय मूझ
त्रिविक्रम नाथ अनाथांह तूझ २५६।

आपके चरण कमल ऐसे उदार हैं कि जिनकी सेवा करने से संसार के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। हे अनाथों के-नाथ ! त्रिविक्रम ! ऐसे आपके चरण कमलों से आप मुझे दूर नहीं कीजिये ॥२५६॥

वडा स्रव योगि वँछे, पग-वास
तुहाळा पाव न मेलुंह तास
परीमळ कम्मळ सद्रस पग्ग
निधान परम्म निवारण ऋग्ग ।२५७।

सुगधयुक्त सु दर कमल के समान आपके चरण नरक का निवारण करके मोक्ष को देने वाले हैं। वडे-वडे योगीजन आपके चरणों मे निवास करने की इच्छा करते हैं। हे प्रभु ! अब आप मुझ पर भी ऐसी कृपा कीजिये कि मैं आपके चरणो से कभी दूर नही रहूँ ।।२५७।।

छप्पय

असरण-सरण असग, परम मोहादि पनगह
सकर ब्रह्म सकत्ति, अखिल गण-ईस अनंगह
मगळ वुद्ध मयक, तरण-तन सुकर गुरू तित
राहू केत रथी-अरण, नवग्रह साति करै नित
पूरण पुनीत श्रीराम पद, विघन हरण त्रै लोक वर
परणाम हेत ईसर पुणै, ततह नाम भवसिंधु तर ।२५८।

अशरण-शरण, असग, परम मोहादि शत्रुओं के लिये पन्नगरूप, पूर्ण पुनीत, विघ्न हरण, त्रिभुवन में श्रेष्ठ, परिणाम के हेतु श्रीरामचन्द्रजी के चरणो के प्रभाव से शकर, ब्रह्मा, शक्ति, गणेश, कामदेव आदि देवता और मगल, बुध, चद्र, शनि, शुक्र, गुरु, राहु, केतु और सूर्य-ये नौही ग्रह नित्य शान्ति करते हैं। अत ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्राणी ! उस नाम का सुमिरण करके तू भी भवसागर से पार हो जा ।।२५८।।

॥ ॐ शिव ॥

५ भक्ति महिमा

छंद त्रिभङ्गी

ममतो राख हिवै जग भावन,
प्रेम भक्ति दै त्रिभुवन पावन
क्रिसन ! राख हिवै हूं-तूं करतो
धरणीधर मन ममता धरतो ।२५८।

हे धरणीधर ! हे श्रीकृष्ण ! त्रिभुवन को पावन करने वाली प्रेम भक्ति देकर अब आप मुझे चौरासी लाख योनियों में भटकने से रोक दीजिये। मैं और तू से सम्बंध रखने वाली मेरी और तेरी इस ममता से बचाइये ॥२५८॥

दूसरा अर्थ

हे जगत् के प्रिय ! तीनों भुवनों को पवित्र करने वाली आपकी प्रेम लक्षणा भक्ति देकर अब मुझे जन्म-मरण के भ्रमण से बचाइये और हे धरणीधर ! हे श्री कृष्ण ! मैं और तू रूपी अहंता और मेरापन रूपी ममता को मेरे मन से हटाइये ॥२५८॥

छंद मोतीदाम

दातार मुगत्त अणब्रस देव
सालोक सामीप सायुज्य सादेव
सदाणंद दाताह नाम सहस्स
रघुपती भक्ति तु अन्नत रस्स ।२६०।

हे निष्कल परमात्म देव ! आप सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य मोक्ष रूप परमानद के दाता हैं। हे रघुपति ! आपके सहस्रो नाम हैं जो सदा भक्ति और आनद को देने वाले हैं, जिनके उच्चारण मात्र से ही अमृत वत रस की प्राप्ति होती है ॥२६०॥

भगत्त अधीन मुगत्ति भडार
अगोचर वेद ब्रहम्म उचार
निरजणनाथ नमो निरवाण
क्रिसन्न महा घण रूप कल्याण ।२६१।

हे अगोचर ! आप भक्तो के अधीन और मुक्ति के भडार हैं, ऐसा वेद और ब्रह्मा कह रहे है। घनश्याम स्वरूप श्रीकृष्ण ! आप निरजन हैं, कल्याण स्वरूप है और निर्वाण स्वरूप है। आपको नमस्कार है ॥२६१॥

ज्ञान काण्ड

॥ ॐ शिव ॥

१, ब्रह्म दर्शन अर्थात् आत्म साक्षात्कार

छंद विश्रखरी

चवता चरित तुहारा चेतन
जनम नही पुनरपि मानव जन
अकळ अजन्मा अलख अलेपम
क्रम हो छुटिस तूझ कथतां क्रम ।२६२।

हे चेतन (ज्ञानस्वरूप) ! आपके गुणानुवादो का कथन करने से प्राणी को पुन. जन्म नही लेना पडता । आप कल्याण से रहित हैं, अजन्मा हैं, अलख हैं और अलेप हैं । आपके गुणानुवादो का कथन करने से मैं अपने कर्मों से छूट जाऊँगा ॥२६२॥

छंद मोतीदाम

पदारथ लद्धोहि तूझ परब्ब
सुत्रा जिम ताणा-वाणा स्रब्ब
पुराण स प्रभ्भ वंचाणा पत्र
जगत्पति तू हिज तूं ज जगत्त ।२६३।

ताने-वाने के रूप मे सूत्र ही समस्त वस्त्र मे व्यापक है उसी प्रकार वस्त्र रूपी इस जगत के ताने बाने मे अस्ति, भाति, प्रिय रूपी सूत्र रूप से व्यापक पदार्थ आप मुझे प्राप्त हुए हैं । पुराण आदि शास्त्रो के पन्नो मे भी यही पढने मे आता है कि आपही जगत्पति अर्थात् जगत का निमित्त कारण और आप ही जगत अर्थात् जगत् का उपादान कारण भी(अभिन्न रूप से केवल) ,आपही हैं ॥२६३॥

जगत हि जातिय-पातिह जांण
प्रछन्न हुओ तउ दीठउ प्रांण
दिठो प्रभ आतम आपहि दाख
भुवण नहीं जिण ठोड स भाख ।२६४।

जगत् के जाति भांति रूपी नाम रूपात्मक लौकिक ज्ञान से आप छिपे हुए होने पर भी मैंने आपको नाम रूपों के प्राण स्वरूप (आधार रूप से) देख लिया है। मैंने अपनी आत्मा रूप से व्यापक प्रभु को देखा। चौदह भुवनों में कोई ऐसा स्थान नहीं जिसमें आप न हो ।।२६४।।

छुटो गयो माहव ! गू घट छोड़
ठ्यो तू ठाबो ठाविय ठोड़
भुणां किय जाग असी जग भूर
नहीं जिम मांझ तुहारोय भूर ।२६५।

हे माधव ! जब मैंने अपना अज्ञानावरण हटाया तो मिथ्या जगत से मैं पृथक प्रतीत हुआ और आपको प्रसिद्ध एवं निश्चित स्थानरूप सर्वत्र व्यापक पाया। हे जगदाधार ! अब ऐसा कौनसा स्थान बतलाऊ कि जिसमें आपका अस्तित्व न हो ।।२६५।।

जळां-थळ थावर जंगम जोय
किय हरि ! सूझ पखै नहीं कोय
मकोड़िय कीट पतंग भुणाळ
मिळग तु हीज तु हीज भुआळ ।२६६।

जल, स्थल, स्थावर और जगम इत्यादि की आपके बिना कोई सत्ता नही है। कीडी-मकोड़ी से लगाकर सूर्य और ब्रह्मा और भिखारी से लगा कर राजा पर्यन्त सभी रूपो मे एक मात्र आपही प्रकाशित हो रहे हैं ॥२६६॥

सोहो भरपूर रह्यो घणसाम
रमै घट माझ सदा तुहि राम
हरि ! तू वणाविय बाजिय हद्द
बाजीगर तूझ वडो हि विहद्द ।२६७।

हे घनश्याम राम ! आप सर्वत्र भरपूर हैं और सबके घटो मे (सत्ता और ज्ञान रूप से) आप रमण कर रहे हैं। हे हरि ! आपने यह कमाल बाजी रची । आप वह महा बाजीगर हैं जिसका कोई पार नही पा सकता ॥२६७॥

अछै सब माझ तु आप अळूझ
गोविंद ! तुहाळ लधो हिव गूझ
मुकद ! म पैठ पडद्दा माय
ठावो हो कीध सरब्बस ठाय ।२६८।

हे गोविन्द ! आपके रहस्य को अब जान गया। आप ससार के समस्त पदार्थों मे चिज्जड ग्रन्थि रूप आत्मा अनात्मा के तादात्म्य सबध से उलझे हुए अर्थात् ओत-प्रोत हुए हैं। उन सब पदार्थों में अणु प्रत्याणु रूपी हृदयदेश मे आपके सत्ता स्फुर्त्यात्मक व्यापक रूप को जान लिया है। किन्तु हे मुकुन्द ! अज्ञानावरण के होते थके आपकी प्रतीति नही होती थी ॥२६८॥

सब असंथान हों देखत सांइ
मांणस्सां देवस -नागां मांहि
इंडज सिदज जरा उदभिज्ज
माया सब तूझ न भूलव मुज्झ ।२६९।

मनुष्य लोक देवलोक और नाग लोक इन सभी लोकों में मुझे आपकी सत्ता के दर्शन होते हैं। अंडज, स्वेदज जरायुज और उद्भिज इत्यादि योनिएं—ये सभी आप ही की (मिथ्या भ्रम-रूपात्मक) माया है। मुझे उससे डर लगता है। इसलिये अब मुझे उसमें फिर न भुलाइये ॥२६९॥ –

सुरत तू हीज तु हीज सबद
मरद्-महेळिय मांहि मरद
मसोत तु करत क्रिडा तुहि कांम
रमाड़ म पग्ग लघो हिव रांम ।२७०।

सुरत रूपी अंतःकरण की बुद्धि वृत्ति शब्द रूपी नाद, ध्वनि (सुरत द्वारा बिन्दु-सृष्टि और शब्द द्वारा नाद-सृष्टि) आप ही हैं। स्त्री-पुरुषों (नर और नारी जाति) में पौरुष संहार कर्त्ता काम कर्त्ता कर्म और इच्छा—ये सब आप ही हैं। इस प्रकार सर्वगत रूप ज्ञात हुए आप पुनः विस्मृत न होइये ॥२७०॥

म राख परदोय आडा मूझ
जिथां निरखां तिथ दाखव तूझ
विधोविध दीठौ मांझ विभूत
धुधाइय मूक परी हिव धूत ।२७१।

अब हे ईश्वर ! ऐसा करिये कि जहाँ कही भी मेरी दृष्टि जाय, अस्ति, भाति, प्रिय रूप आपको ही देखू । नाम रूपात्मक अज्ञानावरण मे दृष्टि न जाय। युक्ति, प्रमाण और अनुभव से सब पदार्थों मे अनुगत एक आपको मै देख चुका हूँ। अपनी महान् आनन्द सत्ता को छिपा कर पच क्लेशो से आवृत्त मिथ्या और दुखमय ससार रूप दिखा देने की महान् धूर्त्तता करने वाले हे धूर्तेश्वर ! नाम रूपात्मक विकारो मे सत्य बुद्धि कराने की इस धूर्त्तता को अब आप शीघ्र त्याग दीजिये ॥२७१॥

प्रभु ! तू पाणिय तू ज पवन्न
गरज्जत भोम पियाळ गगन्न
इळा त्रय तू ज उडीयण अब्भ
पुणगा मेघा माहि परब्भ ।२७२।

हे प्रभु ! आप ही जल है, आप ही पवन है, आप ही पृथ्वी, पाताल और आकाश मे गरज रहे है। तीनो लोक आपही हैं। आकाश के नक्षत्र आप ही हैं और सृष्टि को जीवन देने वाली मेघो की बूदें भी आप ही हैं ॥२७२॥

रमैं तू राम जुवा धरि रग
तु हीज समद तु हीज तरग
अणु परमाणु तिहारो हि अस
हिवै म सँताय छतो थइ हंस ।२७३।

सय असयांन हों देखत सांह
मांणस्सां देवत नागां मांहि
ईंडज सिवज जरा उदभिज्ज
माया सब तूझ न भूलव मुज्झ ।२६९।

मनुष्य लोक देवलोक और नाग लोक इन सभी लोकों में मुझे आपकी सत्ता के दर्शन होते हैं। अण्डज स्वेदज जरायुज और उद्भिज्ज इत्यादि योनिएं—ये सभी आप ही की (मिथ्या नाम-रूपात्मक) माया है। मुझे उससे डर लगता है। इसलिये अब मुझे उसमें फिर न भुलाइये ।।२६९।।

सुरत्त तु होज तु होज सबद्द
मरद्द-महेळिय मांहि मरद्द
कळात तु काळ क्रिया तुहि काम
रमाड़ न पग्ग लखो हिव राम ।२७०।

सुरत रूपी अंतःकरण की बुद्धि वृत्ति शब्द रूपी यावत् ध्वनि (सुरत द्वारा बिंदु सृष्टि और शब्द द्वारा नाद-सृष्टि) आप ही हैं। स्त्री-पुरुषों (नर और नारी जाति) में पौरुष संहार कर्त्ता काल कर्त्ता कर्म और इच्छा—ये सब आप ही हैं। इस प्रकार सर्वगत रूप जाने हुए आप पुनः विस्मृत न होइये ।।२७०।।

न राख पड़दोय आडो भूप
जियां निरखां तिण दाखव रूप
विधोविध दीठी मांझ विभूत
धुताइय मूक परी हिव धूत ।२७१।

अब हे ईश्वर ! ऐसा करिये कि जहाँ कही भी मेरी दृष्टि जाय, अस्ति, भाति, प्रिय रूप आपको ही देखू । नाम रूपात्मक अज्ञानावरण मे दृष्टि न जाय। युक्ति, प्रमाण और अनुभव से सब पदार्थों मे अनुगत एक आपको मै देख चुका हूँ। अपनी महान् आनन्द सत्ता को छिपा कर पच क्लेशो से आवृत्त मिथ्या और दुखमय ससार रूप दिखा देने की महान् धूर्तता करने वाले हे धूर्तेश्वर ! नाम रूपात्मक विकारो मे सत्य बुद्धि कराने की इस धूर्तता को अब आप शीघ्र त्याग दीजिये ॥२७१॥

प्रभु ! तू पाणिय तू ज पवन्न
गरज्जत भोम पियाळ गगन्न
इळा त्रय तू ज उडीयण अब्भ
पुणगा मेघा माहि परब्भ ।२७२।

हे प्रभु ! आप ही जल है, आप ही पवन है, आप ही पृथ्वी, पाताल और आकाश मे गरज रहे हैं। तीनो लोक आपही है । आकाश के नक्षत्र आप ही हैं और सृष्टि को जीवन देने वाली मेघो की बूदें भी आप ही हैं ॥२७२॥

रमै तू राम जुवा धरि रग
तु हीज समद तु हीज तरग
अणु परमाणु तिहारो हि अस
हिवै म सँताय छतो थइ हंस ।२७३।

हे राम ! आप पृथक-पृथक आकार धारण करके इस प्रकार व्यापक हो रहे हो जैसे तरगों में समुद्र और समुद्र में तरगें। सृष्टि के अणु अणु में आप ही का सत्तांश विद्यमान है। हे परमात्मन्! इस प्रकार प्रकट होकर अब छिपिये नहीं ॥२७३॥

जड्यो हिव ओभळ छोड जिवन
पेखां तुय डाळांय साखां पन्न
अजांण रि आगळ रे तु अजाण
जांणीता पाहि न अ तर आण ।२७४।

हे जीवन (आत्मस्वरूप) ! मैंने आपको प्रत्यक्ष अपना स्वरूप जान लिया है। आप व्यवधानात्मक अप्रत्यक्षता सदैव के लिये मिटा दीजिये। इस भाव रूपों को आपके ही अनिर्वचनीय शाखा-प्रशाखा और पत्र रूप से मैं देखा करू। अज्ञानियों के सम्मुख आप दूर हैं। हे ज्ञान स्वरूप ! ज्ञानियों को आप सदा प्रत्यक्ष हैं ॥२७४॥

सगाह गळ अनि अ तर लाय
वहेसो थाय नहीं सहवाय !
वसीकर सब्ब तुहाळो वेस
नहीं सू जेय स दायव नेस ।२७५।

क्षण मात्र भी स्वरूप की विस्मृति न करके सदा स्वरूप स्थिति में मुझ से अभिन्न हो रहिये क्योंकि अब वियोग सहन

नही हो सकता । अपना नाम रूपात्मक बाह्य स्वरूप अस्ति, भाति, प्रिय रूप से स्वाधीन कर दीजिये । ऐसा कोई स्थल न हो जहाँ मै आपको अस्ति, भाति, प्रिय रूप से भिन्न देखूं ।।२७५।।

लख्यो हिव रूप प्रछन्न न लाय
मुरार ! प्रतक्ख हि बाहर माय
ठगारा ठाकर हेकट थीय
पडदुदो नाख परो हिव पीय ।२७६।

हे मुरारि ! बाहिर अस्ति, भाति, प्रिय रूप से और भीतर आत्मस्वरूप से मैंने आपको प्रत्यक्ष देख लिया है । अव पुन आवरण का कष्ट न करिये । हे प्रियतम ! अज्ञान रूपी आवरण को जो मैने हटाया तो ठगारा रूपी माया और ठ्कुर रूपी चेतन दोनो अभिन्न प्रतीत हुए ।।२७६।।

जोयो हो राम विमासिय जेम
तना घट मा हरि ! दीठउ तेम
गळी गयो भ्रम्म छुटी मन गठ
करो हरि ! वात लगाडिय कठ ।२७७।

हे राम ! जिस व्यापक रूप से मैंने आपको देखा (अर्थात् जिस प्रकार श्रवण किया उसी प्रकार मनन एव निदिध्यासन करने पर) वैसा ही हृदय में प्रत्यक्ष पाया । जिससे मेरे समस्त

भ्रम नष्ट हो गये और चिज्जड़-ग्रन्थि छूट गई।[1] हे आत्म स्वरूप हरि! अब ऐसी बात करिये कि मानो मुझे आप अपने कंठ से लगा कर एक हो गये हों अर्थात् मैं सदा अखंड आनन्द रूप में स्थित हो जाऊँ ॥२७७॥

त्रिणो नहैं पेखां आडो तूझ
मुखामुख सेव कराडउ मूझ
त्रिभगिय ! हक हुआ हुम-तम्म
अपोटाय अ व तणीपरि अम्म ।२७८।

हे परम! ध्याता ध्यान और ध्येय रूप आप और हम एक ही होगये हैं जैसे कि पानी और उसके बुदबुदे पानी से भिन्न नहीं। आप और हमारे बीच तृण मात्र भी अंतर डाले वाला कोई पदार्थ नहीं देख रहा हूँ अतः प्रत्यक्ष मेरी सेवा मुझे करने दीजिये। (अपने ब्रह्म स्वरूप को पहिचान कर उसमें लीन हो जाने की चेष्टा करूं ऐसी शक्ति दीजिये)। यथार्थतः ब्रह्म ही ब्रह्म की सेवा कर रहा है[2] ॥२७८॥

समाणोय तूझ मेंहि घणसांम
रघुवर ! माहरो आतम रांम

1 भिद्यते हृदयग्रन्थि छिद्यन्ते सर्व संशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।

2 चित चेतन्य विलास तदूप थै, ब्रह्म लटका करै ब्रह्म पासे।
—नरसी महता

महारउ ठाकर वैठौ माहि
पुजावत आपहि आपहि पाहि ।२७६।

हे रघुवर ! अत्यन्त श्याम नामक अज्ञान मिथ्या होकर मेरा आत्माराम अभिन्न रूप से आप मे सम्मिलित हो गया। मेरा ध्येय रूप स्वामी मेरे अतर घट मे अपना स्वरूप ही विराज कर आप ही अपनी पूजा करवा रहा है ।।२७६।।

अजै अह मझ तु वैसीय गूझ
पुजारा सु पच चढावहि पूज
सबै तुझ मझ तुहा थिय स्रब्ब
उपज्जहि जेम सु अबुद अब्ब ।२८०।

हे परमात्मन् ! आप हृदयगत दहराकाश में विराज कर गुह्य गाज (अनिर्वचनीय प्रकाश) कर रहे हैं। पच ज्ञानेन्द्रिय रूप आपके पुजारे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गध, इन पच विषयो द्वारा आपका पूजन कर रहे है। सत्ता-स्फूर्ति रूप से समस्त विश्व आपमे स्थित है और इसी रूप से आप सर्वत्र व्यापक हैं। जिस प्रकार मेघ से पानी उत्पन्न होता है उसी प्रकार यह सृष्टि आपसे उत्पन्न होती है ।।२८०।।

कहै जिम कथ करा सुहि काम
रिदा मझ लाधो तु आतमराम

नजीक निहाळ तनां मम नाथ
सदा शिव मुक्त असगहि साथ ।२८१।

हे नाथ ! आप मुझे मेरे हृदय में निकटतम आत्म रूप से प्राप्त हुए। (यह महान आनन्द का विषय है)। अब मैं सग रहित होकर सदा कल्याणकारी मुक्ति स्वरूप हो गया हूँ और केवल आपकी आज्ञा रूप वेदशास्त्रानुकूल (लोक सग्रह के निमित्त) कर्म करूंगा ।।२८१।।

समांणउ तूझ मेंहि सुख सांत
वेंछै यह सांम करां जिहि यात
सेवग पयपै तूझ समोह
विसन ! रखे हिव थाय विछोह ।२८२।

हे विष्णु ! मैं अभिन्न रूप से आपमें सम्मिलित होकर सुख शान्ति को प्राप्त हुआ। (आरम्भ निर्दोष पयत) आपकी (वेद की) आज्ञानुसार व्यवहार करूंगा। किन्तु हे प्रभु ! मै यह निवेदन करता हूँ कि कहीं अब ऐसा न हो कि मुझे पुन अविद्या सम्मोहित करके आप से विछोह करा दे ।।२८२।।

दधी सहरी मळ हेक न दोय
हरी ! तिम तूझ विसै जग होय
मुकंन्द ! सदै कुण वाहरो भ्रम्म
अणू मभ दाखवि कोटि असम्म ।२८३

जैसे समुद्र मे तरगें समुद्र रूप ही है, भिन्न नही है। उसी प्रकार हे हरि ! यह जगत भी आप से भिन्न नही है। हे मुकुद ! एक अणु मे करोडो सृष्टियें आप दिखा सकते हैं। आपके रहस्य को कौन जान सकता है ? ॥२८३॥

समाणउ सामिय माहि सरीर
गोविद गदाधर ग्यान- गहीर !
प्रगट्टिय अतर पूरख-प्राण
आदेस करै सह आपहि आण ।२८४।

हे अज्ञान नाशक ज्ञान रूप गदाधर ! हे इन्द्रियों के अधिष्ठान ! ब्रह्मज्ञान के द्वारा आप परमात्मा में मेरा आत्म-स्वरूप अभिन्न रूप से सम्मिलित हो चुका ! मेरे हृदय मे पुरुष नामक परमेश्वर प्राण नामक आत्म रूप से प्रत्यक्ष हो गया। अतएव आदेश करने वाले शासक और शासित केवल आप ही हैं ॥२८४॥

हुवा इम सामिय सेवक हेक
उळखिय अ तर एक अनेक
हुवो हिव हेक जुओ नही होय
गगोदक आण मिल्यो गग जोय ।२८५।

वाहर जो नाम रूप से अनेक प्रतीत हो रहा है, वही अतर्दृष्टि करने से एक प्रतीत हो गया। जो तत्त्व रूप से

प्रत्यक्ष ही एक है, बहु भव पृथक होना असंभव है। जिस प्रकार समाजस गंगा में मिल कर एक हो जाता है उसी प्रकार स्वामी और सेवक अर्थात् जीव और शीव (शिव) एक होगये॥२॥

समांणउ मांहि हुअउ सुख सांत
भरम्म दुआळ छुटै अग भ्रात
सचीरण सत्त-अणद-सचेत
गोविंद ! गहीर तु ग्यांन-रुपत ।२८६।

हे गोविन्द ! मेरी जगत की भ्रान्तियां और भ्रम आदि जगद्वास मिट कर मैं आप में मिलकर अखंड सुख शान्ति को प्राप्त हो गया। हे सच्चिदानंद ! आपके इस गंभीर ज्ञान स्वरूप को प्राप्त कर मैं उसमें स्थिर हो गया हूं ॥२८६॥

सच्चिदायनद अतीत ससार
विभू अतुळीबळ अम्म विचार
धरम्म करम्म परम्म सुधाम
रहीत समद सु केवळ रांम ।२८७।

हे सच्चिदानंद श्रीराम ! आप संसार से विरक्त हैं व्यापक हैं अतुलित बलशाली और परम विचारणीय हैं। आप ही धर्म और कर्म हैं। आप ही परम धाम हैं और आपही द्वन्द्व रहित केवल्य रूप है ॥२८७॥

जाण्यो तव रूप कह्यो नव जाय
मळी जिम मूक सिता मुख मांय
पमै कुण पार तोरा परचड
वसै प्रति रोम विसै ब्रह्मड ।२८८।

जिस प्रकार मूक मिसरी को चखकर भी उसके मिठास का वर्णन करने मे असमर्थ है, उसी प्रकार ही प्रत्यक्ष रूप से आपका स्वरूप जान लेने पर भी, वाणि का अविपय होने से वर्णन नही किया जा सकता। हे प्रचड ! आपके प्रत्येक रोम मे अनत ब्रह्माण्ड प्रतिभासित हो रहे है। आपका पार पाने में कौन समर्थ हो सकता है ? ।।२८८।।

तना मध आद प्रपूरण अ त
सनक्क सनातन जाणत सत
तुही स्रव काळ तुही स्रव देस
निगम्म अनत करै निरदेस ।२८९।

समस्त देश कालो मे, आदि, मध्य और अत में सनकादिक समान सर्वज्ञ सत आपको सनातन, प्रपूर्ण (व्यापक) जनाते हैं। और इसी प्रकार वेद आपको 'नेति' कह करके निर्देश करते हैं ।।२८९।।

दिठौ तउ गत्त न बूझव देव
अगम्म अगोचर तोर अवेव

सख्यी तउ पार सह्या न अलक्ख
नये सउ मग्ग दिखाडिय नक्ख ।२६०।

हे देव ! श्रुति-स्मृति से आप पृथक होने पर भी इस व्याप्ति द्वारा नहीं देखे जा सकते क्योंकि आपके रहस्यों का कोई अंत नहीं। वे अगम्य और अगोचर हैं। हे अलख ! आपको लख लेने पर भी आपका पार नहीं पाया जाता। आप अपने एक नख मात्र देश में नवों खंड दिखा सकते हैं ।।२६०।।

उळखियउ हूं-तूं आपहि आप
तुझां हिव तूझ बियां नहिं बाप
अखयो तउ पार न जांण सुजांण
विसम्भ ! तुहाळा कोट विनांण ।२६१।

हे सर्वत्र व्यापक जगत् पिता ! मैंने आपको अपने आप रूप से पहचान लिया है और समझ गया हूँ कि आपके सिवाय कोई आदि कारण नहीं है। इस प्रकार से आपको जान लेने पर भी आपके अनंत चरित्रों का आदि अंत मन इन्द्रियादिक द्वारा नहीं जाना जा सकता ।।२६१।।

अमाप कळा बुद नाद उदास
निरंजण भूस सरम्भ-निवास

प्रतीत अतीत पुरक्ख-पुराण
अखडित हेक ब्रह्म्म-गिनान ।२९२।

हे पुराण पुरुष ! आपकी कलाये अपरिमाण हैं। विन्दु और नाद—दोनो प्रकार की सृष्टि से आप विरक्त हैं। आप समस्त भूतो मे निवास करने वाले निरजन स्वरूप हैं। आप गुप्त हैं, प्रगट है। आप एक और अखडित हैं और आप ही ब्रह्मज्ञान हैं ॥२९२॥

सथापण ध्रम्म प्रकासण स्रब्ब
गोविंद ! असूर उतारण ग्रब्ब
अनाप-सनाप अनूप अछेह
दयाळ मुरत्त विवरजित देह ।२९३।

असुरो का गर्व उतारने वाले हे श्री गोविन्द ! आप धर्म को स्थापन करने वाले हैं और सब मे प्रकाशित हैं। आप देह रहित हैं। फिर भी आप अपरिमाण, अनुपम और अनत हैं एवम् दया की मूर्ति हैं ॥२९३॥

प्रथव्विय कारण तारण प्रभ्भ
सोहो जग द्रव्व वियापक स्रब्ब
उपत्ता खपत्त प्रकर्त असग
साधार सोहो तु सनातन सग ।२९४।

हे प्रभु ! आप इस जगत् के कारण रूप और उसके उद्धार कर्ता हैं। जगत् के समस्त पदार्थों में आप सर्वत्र व्याप्त हैं। जगत् की उत्पत्ति और नाश आपकी माया है और हे सनातन ! आप इस जगत् के आधार और धर्म होते हुए भी आप इससे असग हैं ॥२६४॥

बिना वप रूप अनत विथार
अमूळ विसम्ब विरक्ख अधार
प्रछन्न प्रतक्ख प्रधान-पुरक्ख
अगोचर हेक अनेक अलक्ख ।२६५।

आपका कोई शरीर और रूप (आकृति और अवस्था) नहीं फिर भी आप अनंत विस्तार वाले हैं। आप विश्व रूपी वृक्ष के आधार हैं परंतु स्वयं आधार (मूल) रहित हैं आप गुप्त हैं और प्रत्यक्ष प्रधान पुरुष भी हैं। एक अगोचर और असदृय हैं और अनेक भी हैं ॥२६५॥

अहै विण पांण अपाव गवन्न
अलेखत रूप सोहो अनभन्न
मुनेस महा चित अंतर मास
प्रचड महाबळ तेज प्रकास ।२६६।

मुनीश्वर वरों के महान हृदयों में निवास करनेवाले हे प्रचण्ड बली और तेज के पुंज ! आप बिना हाथों के ग्रहण

करने वाले और बिना पाँवो के चलने वाले हैं एव बिना नेत्रो के अणु अणुगत समस्त रूपो को देखने वाले है ॥२९६॥

अखील तपोनिध त्रीगुण-ईस
अजीत जराम्रत जोग अधीस
विसव्व विमोह विसन्न विग्यान
रतीपत-तात ! प्रकर्त्ता-राजान ।२९७।

हे तपोनिधि ! आप त्रिगुणात्मक सृष्टि के अखिलेश्वर हैं। जरा और मृत्यु से नही जीते जाने वाले योगीश्वर (शकर) हैं। विश्व को मोहित करने वाले विष्णु हैं और विज्ञान रूप (ब्रह्मा) हैं। आप कामदेव के पिता और माया के पति हैं॥२९७॥

वदै इम ईसर सूब्ब-वियाप
जुवो जनि थाय अजप्पा जाप
अजपाय जाप तणो तु अधीस
अजपा माहरो आतम ईस ।२९८।

ईश्वरदास कहते हैं कि हे ईश्वर ! आप सर्वत्र व्यापक हैं एवम् 'अजपा जाप' अर्थात् मन और वाणि के अविषय हैं। आप अजपा जाप के आधार हैं और मेरा आत्मा भी मन-वाणि का अविषय है। अतएव आप और मैं—एक हैं। अब पुनः सम्मोहन द्वारा पृथक न हुइये ॥२९८॥

छप्पय

मणां तेल तिल मांम, वास जिम पुहप विराजत ।
रग मजीठ सु रहत सबद अरथादिक साजत ॥
वेळा सायर वसत, दारु मक्ष अगन दिखावत ।
पयस मांझ घ्रत पूर ऊख मधु रस उपजावत ॥
वळि साहकता पावक विसै, साधूजण सोहै सहण ।
ईसरो भणै ज्यूंही अमस, मो मन वसियो महमहण ।२६६।

जैसे तुम्हारा काम तिलों में मनों बद तेल पुष्पों में सुगंध मजीठ में रंग शब्दों में अर्थ समुद्र में तरंगें काष्ठ में अग्नि दूध में घृत ईख में मधुर रस अग्नि में दाहकता और साधुओं में क्षमा—निवास करते हैं। ईश्वरदासजी कहते हैं कि इसी प्रकार महार्णव रूप परब्रह्म आप मेरे मन में बसे हुए हैं।।२९९।।

॥ ॐ शिव ॥

२. ईश्वर सत्ता के अधीन कर्मों की प्रधानता मानते हुए सृष्टि उत्पत्ति वर्णन

दूहा

आद तणो जोता अरथ, भाजै मूझ न भ्रम्म ।
पहला जीव परट्ठिया, किया कि पहला क्रम्म ।३००।

आदि प्रपच की ओर जब मै देखता हूँ तो मेरा यह भ्रम दूर नही होता कि आपने पहले जीवो की रचना की या कर्मों की ॥३००॥

आद तूझ थी ऊपन्या, जगजीवन ! सह जीव ।
ऊच नीच कर अवतरण, दीधा वस दईव ! ।३०१।

हे जगजीवन ! आदि मे समस्त प्राणी आप ही से उत्पन्न हुए। आपही ने उन्हे मनुष्य, पशु, पक्षी आदि ऊच-नीच (परिमाण मे छोटी बडी) जातियो मे जन्म दिया ॥३०१॥

आप रूप हूता अनत, आप्या तै अवतार ।
पाप धरम दुइ पीडवा, लीधा जीवा लार ।३०२।

हे अनत ! ये समस्त प्राणी आप रूप थे । आपने उनको जन्म दिया । किन्तु यह पाप और धर्म का बखेडा दु ख देने के लिये उनके पीछे क्यो लगा दिया ? ॥३०२॥

अकरम करम उपाय कर जागविया तैं जोय ।
जगपत ! को जांणै नहीं गत थारी हयग्रीव ।२०३।

शुभाशुभ कर्मों को उत्पन्न करके आपने इन जीवों की सृष्टि की । आपके इस रहस्य को हे जगत्पति ! कोई नहीं जानता ।।२०३।।

खांण चियारै खोण घर, जाया जे दी जत ।
कीधा गुण-पाखै किसन ! उत्तम मध्यम अत ।२०४।

हे कृष्ण ! जिस दिन आपने पृथ्वी पर चतुर्विध जीवों को उत्पन्न किया तो इनको उत्तम मध्यम और निकृष्ट किसलिये बनाया ? ।।२०४।।

ताहरि इछा थीय त जीवां आदि जनम्म ।
तित कित हुता अम-तणां केसव ! कसा करम्म ।२०५।

हे केशव ! हम तो यही जानते हैं कि आपने अपनी इच्छानुसार आदि में जीवों की सृष्टि की । उस समय हमारे कौन से कर्म शेष रह गये थे ? ।।२०५।।

ओ परपच अमाप रो तू करता त्रीकम्म ।
आपांपै अळगो रही, केथ मळावै क्रम्म ।२०६।

हे त्रिविक्रम ! इस अपरिमित प्रपंच के कर्त्ता आप हैं । किन्तु उससे अलग रहकर आपने इस झगड़े को औरों के सिर डाल दिया ।।२०६।।

एह् पटतर दाख इम, वतसळ-भगता ब्रह्म ।
कीधा अम कै तम किया, धुर हरि पाप धरम्म ।३०७।

हे भक्त वत्सल ब्रह्म ! मुझे यह रहस्य तो बताइये कि इन पाप और पुण्यो को प्रारम्भ मे आपने पैदा किया या हमने ? ॥३०७॥

विण अपराध विटबतो, दे हो त्रिभुवन राय !
कर कूडा सासत्र कथन, कर कूडा क्रम काय ।३०८।

हे त्रिभुवन पति ! इस जीवात्मा को बिना अपराध ही जन्म-मरण के दुखो को भुगताते हुए इधर-उधर मारा-मारा भटकाया जा रहा है। यह क्या रहस्य है ?

सृष्टि के आदि मे एक से अनेक (एकोऽहम् बहुस्याम्) होने की अपनी इच्छा से मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष आदि रूपों में आप उत्पन्न होगये—शास्त्रों के इस कथन को या तो असत्य ठहरायें या फिर कर्मों की प्रधानता को असत्य ठहरायें कि जिसके कारण—"जैसे-जैसे कर्म किये जाते हैं, उनसे प्रेरित होकर वैसे-वैसे जन्म धारण करने पड़ते हैं",—माना जाता है ? ॥३०८॥

कीधा कुण पूगो किसन, वडा सामुहो वाद ।
आद न को तो मो अनत !, आतम करम न आद ।३०९।

हे कृष्ण ! महद् पुरुषो से अथवा महद् पुरुषों के विषय मे विवाद करके कौन सफल हो सका है ? अर्थात् कोई नही

हो सका। कारण कि हे अनन्तात्म रूप परमात्मा ! न तो आपके भावि-भव का, और न कर्मों की गहन गति का ही पता लग सकता है ।।१०९।।

क्रमगत पूछां तो कना, गोविंद हूँ गेमार।
आड वसती डेडरी, पुछै समदा पार।३१०

अर्थः हे गोविंद ! कर्मों की गति के विषय में आप से मेरा जो प्रश्न करना है, वह निरा गँवारपन है। और ऐसा ही है जैसा कि पानी के भरे छोटे गड्ढे में रहने वाला मेंढक समुद्र के पार की बात कहता हो।३१०।।

छप्पय

अमर मेर आधार मेर वसुधा आधार।
धरा सेस आधार सेस कोरम साधार ।।
कोरम जळ आधार, नीर सु अनिल अधारे।
अनिल सक्ति आधार, सक्ति करतार सधारे ।।
करतार सदा निरधार ही कवि म राच दूजा करम।
आपेज करतो आप फळ आपहि विलस इहि मरम।३११

देवताओं का निवास मेरु पर्वत है। मेरु पृथ्वी पर टिका हुआ है। पृथ्वी का आधार शेष है। शेष का आधार कूर्म

कूर्म का आधार जल, जल का आधार वायु, वायु का आधार शक्ति, शक्ति का आधार कर्त्ता (ईश्वर) और कर्त्ता निराधार (अर्थात् कारण रहित सर्व तन्त्र-स्वतन्त्र सर्व शक्तिमान्) है।

इसलिये कवि कहता है कि उस कर्त्ता को छोड कर, जो अन्योन्य आधार वाले हैं, उनके निमित्त कर्मों को करके व्यर्थ ही उनकी ओर प्रवर्त्त नही होना चाहिये। क्योंकि कर्म का करने वाला और उसका भोक्ता एवम् उसका फल वह स्वयम् है। यह शास्त्रो का गुह्य सिद्धान्त है। यथा—॥३११॥

अहमेवहि यज्ञाना भोक्ता च प्रभुरेवच ॥ गीता अ० ६

उपद्रष्टाऽनुमता च भर्त्ता भोक्ता महेश्वर ॥ गीता अ० १3

॥ ॐ शिव ॥

३ श्री हरि सुमिरण उपदेश

अवध नीर तन अ जळी टपकत सास-उसास ।
हरी भजन विण जात है, अवसर ईसरदास ।३१२।

ईसरदास कहते हैं कि शरीर रूपी अंजली में से आयु रूपी जल स्वास्वोस्वास की बूंदों के रूप में टपक रहा है। अर्थात् स्वास प्रति स्वास इस शरीर की आयु बीत रही है। मनुष्य शरीर पाने का अमूल्य अवसर हरि के भजन बिना यों ही बीता जा रहा है ॥३१२॥

हिया म छाँड हरि भगति, रसण म छाड राम ।
अतरखांमी आपणों ठाकर है सह ठांम ।३१३।

सर्व सर्वत्र विराजमान आत्मस्वरूप अंतर्यामी प्रभु की हृदय से (हरि) भक्ति को और रसना द्वारा उसके 'राम' नाम को कभी नहीं छोड़ना चाहिये ॥३१३॥

हरि हरि करता हरख कर अरे जीव अणवूझ ।
पारस लाधो ओ प्रगट तन मानव में तूझ ।३१४।

हे अबोध प्राणी ! तू आनंद मनाता हुआ श्री हरि का नाम उच्चारण कर क्योंकि इस मनुष्य शरीर में तुझे इस हरि नाम रूप प्रत्यक्ष पारस की प्राप्ति हुई है ॥३१४॥

नारायण ना विसरिये, नितप्रति लीजै नाम ।
जे लाधो मिनखा जनम, करिये उत्तम काम ।३१५।

हे प्राणी ! भगवान को भूलिये नही । नित्य प्रति उसका नाम लेते रहना चाहिये । मनुष्य जन्म मिल जाय तो फिर ऐसे उत्तम काम को ही करना चाहिये ॥३१५॥

आतम ! आळस पहल तज, ओळग आद विसन्न ।
जेह मनोरथ मन करै, सो पूरवै क्रिसन्न ।३१६।

इसलिये हे प्राणी ! तू प्रथम आलस्य का त्यागकर श्री आदि विष्णु का सुमिरण कर । तेरे मन की कामनाओ को श्री कृष्ण पूर्ण करेंगे ॥३१६॥

हस माहळा मूढ रे ! कर हर-सर विसराम ।
मर मर धर पर फर मती, उर धर गिरधर नाम ।३१७।

हे अज्ञानी हस ! तू वार-वार जन्म लेकर ससार मे मत भटक । हृदय मे श्री कृष्ण का नाम धारण करते हुए उस परब्रह्म-सरोवर मे जाकर विश्राम कर ॥३१७॥

राम भणो भण राम भण, अवरा राम भणाय ।
जिअ मुख राम न उच्चरै, जा मुख लोह जडाय ।३१८।

श्री राम का नाम वार-वार बोलते रहना चाहिये और दूसरों के मुख से भी बुलवाते रहना चाहिये । और जिस मुख

से राम का नाम नहीं निकलता उसके मुंह में तामा भरवा देना चाहिये ॥३१८॥

जीह् भणोभण जीह् भण, कठ भणोभण कठ ।
मो मन लागो महमहण, हीर पटोळै गठ ।३१६।

जिह्वा और कंठ द्वारा पुन पुन उच्चारण करते रहने से मेरा मन उस महा महार्णव परब्रह्म से इस प्रकार गुंथ गया है कि जिस प्रकार रेशमी वस्त्र में लगी हुई हीरा गांठ ॥३१६॥

जीहां जप जगदीसवर, अर अंतर में ध्यांन ।
क्रम बंधण नह बंधवै, मो भजण भगवांन ।३२०।

हे प्राणी ! तू भय भजन भगवान् जगदीश्वर का अंतर में ध्यान रखता हुआ जिह्वा द्वारा उसका जप कर । तो तू संसार के शुभाशुभ कर्मों के बंधन में नहीं बंध सकेगा ॥३२०॥

नर ! हर वीसरजै नहीं आसम मूढ अजांण ।
काळ सबळ जग काटवा कस उभो केवांण ।३२१।

हे अज्ञानी जीव ! श्री हरि को भूल मत (नित्य सुमिरण कर) (क्योंकि मृत्यु संसार का संहार करने के लिये तलवार कसे हुए सदा सिर पर खड़ी है ॥३२१॥

प्रभू भजतां प्राणिया कीजै ढील न काय ।
नर यापां अथ कारिमै मदर वळतां मांय ।३२२।

जलते हुए घर मे से जिस प्रकार दौड दौडकर और वार्य भर-भर कर धन निकाला जाता है, उसी प्रकार हे प्राणी ! इस विनाश होते हुए काया रूपी घर मे से प्रभु का भजन रूपी जितना धन तू सग्रह कर सकता है, उसके लिये किंचित भी विलब मत कर ॥३२२॥

राम जपता रे रिदा, आळस म कर अजाण ।
जे तू गुण जाणै नही, पूछ तु वेद पुराण ।३२३।

हे अज्ञानी हृदय ! राम का नाम जपने मे तू आलस मत कर । उस नाम की महिमा यदि तू नही जानता है तो वेद और पुराणो को पढ-सुनकर मालूम करले ॥३२३॥

जद जागै नद राम जप, सूता रांम सभार ।
ऊठत बैठत आतमा, चालता चोतार ।३२४।

हे प्राणी ! जागते, सोते, उठते, बैठते और चलते हुए-किसी भी काम को करते हुए आत्मस्वरूप श्रीराम का तू सुमिरण कर ॥३२४ ।

रहै विलूबो राम रस, अनरस गणै अलप्प ।
एह महा-ध्रम आतमा, ए तीरथ ए तप्प ।३२५।

सासारिक रसो को तुच्छ समझकर राम नाम रूपी रस को पीते हुए जो उसमे लीन रहता है, उसके लिये यही बडे से बडा धर्म, तीर्थ और तप है ॥३२५॥

रूड़ो करस्ही रांमजी, सह थातां थीरग ।
भगतां पर भूधर धणी, चाढण नीर सुचग ।३२६।

हे प्राणी ! भगवान् श्री राम सभी प्रकार आनंद और श्रीवृद्धि के करने वाले हैं । तू विश्वास रख । अपने भक्तों की निर्मल प्रतिष्ठा बढ़ाने [में भगवान् भूधर सदा तत्पर रहते हैं ।।३२६।।

भाग वडा तो रांम भज दिवस वडा तो देम ।
अकस वडी उपगार कर देह धर्न्यां फळ एह ।३२७।

हे प्राणी ! यदि तू भाग्यशाली है तो श्री राम का भजन कर समय अनुकूल है तो दान कर और बड़ी बुद्धि वाला है तो दीनों का उपकार कर । मनुष्य शरीर धारण करने का फल इन्हीं बातों में है ।।३२७।।

मोह न मूख्र आपजी, पे सिर छत्र प धोम ।
कर जीहा लोचण करण, किसो सु आपै कोय ?३२८।

हे पिता ! यदि मेरे सिर पर छत्र भी धारण करा दिया जाय (दीन से राजा बना दिया जाय) तो भी मैं आपको नहीं भूलूँगा । संसार में ऐसा कौन है जो हाथ जिह्वा नेत्र और कान इत्यादि—कर्म और ज्ञानेन्द्रियों से आत्मस्वरूप को समझने योग्य—शरीर को संपूर्ण भाँति भूषित आपके सिवा कोई है, जो इन्हें प्राप्त करा सके ? ।।३२८।।

राम नाम रसणा रटो, वासर वेर अवेर ।
अटक्या पछी न आवही, राम तणी मुख रेर ।३२९।

अत हे मन ! तू सदा ही समय असमय भी श्री राम का नाम अपनी जिह्वा से रटता रह। क्योकि कठ रुक जाने पर श्री राम के नाम की ध्वनि निकल नही सकेगी ।।३२९।।

राम भणता रे रिदा ! कह गुण केता होय ?
मानै ठाकर जग नमै, प्रसण न पीडै कोय ।३३०।

हे हृदय ! देख, श्रीराम नाम का उच्चारण करने से कितने लाभ होते हैं ? वह बडा माना जाता है, ससार उसके आगे सिर झुकाता है और शत्रु उसका नाश नही कर सकते ।।३३०।।

राम सजीवण मत्र रट, आमय लगै न अग ।
जेता दुख है जगत मे, सुजि ओखद श्रीरग ।३३१।

श्री राम के सजीवन-मत्र को रटने से शरीर मे कोई रोग नही लगता। ससार मे जितनी प्रकार की आधि-व्याधियाँ हैं उन सब की एक मात्र औषधि भगवान् श्रीरग—श्रीराम का नाम है ।।३३१।।

रसणा रटै तो राम रट, वयणा राम विचार ।
स्रवण राम गुण सुण सदा, नयणा राम निहार ।३३२।

रूड़ो करही रामजी, सह वातां और ग।
भगता पर भूधर धणी, वाधण नीर सुचग ।३२६।

हे प्राणी ! भगवान् श्री राम सभी प्रकार आनंद और श्रीवृद्धि के करने वाले हैं। तू विश्वास रख। अपने भक्तों की निर्मल प्रतिष्ठा बढ़ाने [में भगवान् भूधर सदा तत्पर रहते हैं ॥१२६॥

भाग वडा तो राम भज दिवस वडा तो देय।
अकल बडी उपगार कर देह धन्या फळ एह ।३२७।

हे प्राणी ! यदि तू भाग्यशाली है तो श्री राम का भजन कर समय अनुकूल है तो दान कर और बड़ी बुद्धि वाला है तो दीनों का उपकार कर। मनुष्य शरीर धारण करने का फल इन्हीं बातों में है ॥१२७॥

बोह न भूलू बापजी, जे सिर छत्र न होय।
कर जीहा लोचण करण, किसो सु आप बोम ?३२८।

हे पिता ! यदि मेरे सिर पर छत्र भी धारण करा दिया जाय (दीन से राजा बना दिया जाय) तो भी मैं आपको नहीं भूलूंगा। संसार में ऐसा कौन है जो हाथ जिह्वा नेत्र और कान इत्यादि—कर्म और ज्ञानेन्द्रियों से आत्मस्वरूप को समझने योग्य—शरीर को संपूर्ण भांति भूषित आपके सिवा कोई है, जो इन्हें प्राप्त करा सके ? ॥१२८॥

राम नाम रसणा रटो, वासर वेर अवेर ।
अटक्या पछी न आवही, राम तणी मुख रेर ।३२९।

अत. हे मन ! तू सदा ही समय असमय भी श्री राम का नाम अपनी जिह्वा से रटता रह। क्योकि कठ रुक जाने पर श्री राम के नाम की ध्वनि निकल नही सकेगी ॥३२९॥

राम भणता रे रिदा ! कह गुण केता होय ?
मानै ठाकर जग नमै, प्रसण न पीडै कोय ।३३०।

हे हृदय ! देख, श्रीराम नाम का उच्चारण करने से कितने लाभ होते हैं ? वह बडा माना जाता है, ससार उसके आगे सिर झुकाता है और शत्रु उसका नाश नही क र सकते ॥३३०॥

राम सजीवण मत्र रट, आमय लगै न अ ग ।
जेता दुख है जगत मे, सुजि ओखद श्रीरग ।३३१।

श्री राम के सजीवन-मत्र को रटने से शरीर मे कोई रोग नही लगता। ससार मे जितनी प्रकार की आधि-व्याधियाँ हैं उन सब की एक मात्र औषधि भगवान् श्रीरग—श्रीराम का नाम है ॥३३१॥

रसणा रटै तो राम रट, वयणा राम विचार ।
स्रवण राम गुण सुण सदा, नयणा राम निहार ।३३२।

हे प्राणी ! तू अपनी जिह्वा से श्री राम के नाम का ही रटन कर वास्य शब्दों द्वारा श्रीराम के नाम का विचार कर कानों द्वारा श्री राम के गुणों को नित्य सुन और नेत्रों द्वारा श्रीराम के दर्शन कर ।१३२॥

रांम मात पित महत गुरु, राम सखा सुखदात ।
राम सगधी बांधवा, रांम सहोदर भ्रात ।१३३।

श्री राम ही माता पिता बड़ेरे गुरु सुखदायक मित्र सबधी कुटुम्बी और सहोदर भाई हैं ॥१३३॥

रांम विसारी क्यू रह्यो, रे मूरख मद अंध !
जिन दी राम न समरै ऊ दी अंधाधुंध ।१३४।

हे मदान्ध मूर्ख ! विषय-वासना आदि संसार के अंधकार मय प्रपंच को तो तू भूला नहीं और हृदयाकाश के महानान्ध कार को मिटाकर आत्मप्रकाश को दिखाने वाले श्रीराम को तू भूल गया ? श्रीराम जिस दिन स्मरण न हो सके निश्चय ही वह दिन तेरे लिये अन्धकारमय है ॥१३४॥

हरी विसारह तू सुवै हरि जागै तो कज्ज ।
सो अपराधी सांपरत अवगुण एह अलज्ज ।१३५।

हे निर्लज्ज ! तेरे औगुण को तो देख । तू जब भगवान को भूल कर सो जाता है (मोहरूपी निद्रा में बेखबर हो जाता है) उस तेरी बेखबरी में भी तेरी रक्षा के निमित्त भगवान जाग्रत रहते हैं । (तेरा कल्याण करने को नहीं भूलते

हैं।) उनके इस उपकार को भूल जाना, तेरा प्रत्यक्ष अपराधी होना है ॥३३५॥

वाणी हरी विसारनै, वाँचै आण कुवाण ।
पत मत छडी पापणी, जार विळूंधी जाण ।३३६।

श्री हरि के चरित्रो को पढना भूलकर जो पुरुष अन्य कुकाव्यो को पढते हैं, वे उस मतिहीन पापिनी स्त्री के समान है जो अपने पति को छोड कर जार पुरुष के गले से लिपटती है ॥३३६॥

हरी नाम परहर अवर, नह सभार अजाण ।
तरु छडी लागी लता, पाथर चे गळ जाण ।३३७।

हे अज्ञानी! श्री हरि के नाम को छोड़ कर तू दूसरो के नाम को याद मत कर। ऐसा करने से तेरी उस लता के समान दशा होगी, जो अपने पोषक और आधार रूप वृक्ष को छोड कर पत्थर के गले लग जाती है ॥३३७॥

हर हर कर परहर अवर, हरि रो नाम रतन्न ।
पाचू पाडव तारिया, कर दागियो करन्न ।३३८।

हे प्राणी! दूसरे नामो को छोड कर तू हरि के नाम का उच्चारण कर। क्योकि हरि का नाम ही रत्न है। श्री हरि ने अपनी भक्ति करने वाले पाँचो पाँडवो का उद्धार कर दिया और भक्त कर्ण को अपने हाथो मे जलाया ॥३३८॥

एरे नर ! परहर अवर, हर हर सुमर हिआह ।
सत सुदामा सारखा, कोटीधज्ज कियाह ।३३९।

हे मनुष्य ! तू सांसारिक धाम-जजाल (व्यर्थ की बातों) को छोड़ कर अपने हृदय में निरंतर श्री हरि का सुमिरण कर। श्री हरि सुमिरण के प्रताप ने सुदामा जैसे दीन सत को क्षण भर में कोटिध्वज बना दिया ॥३३९॥

हित सूं हरि भज रे हिया ! आळस न कर अजाण !
जिण पांणी सूं पिंड रच्यो पवन मिळायो प्रांण ।३४०।

जिसने पानी की बूंद से शरीर की और उसमें पवन को युक्त करके प्राणों की रचना की है उस हरि को हे अज्ञान ! तू हृदय से भजने में आलस मत कर ॥३४०॥

आळसवांण अजाणवां दिल खूटल सूं दूर !
साहब साचा साधवां है हाजरा हजूर ।३४१।

जो आलसी है अज्ञानी है और जिनके दिल अंदर से कुटिल है—उनसे भगवान् दूर है। और जो सच्चे साधु है उनके लिये वह सर्वत्र व्यापक एवं अंतर्यामी रूप से सदा हाजिर-नाजिर है ॥३४१॥

पलक निमेख न पांतरौ दाखौ दीनदयाळ ।
धरणीधर हिरदै धरो गुण गावो गोपाळ ।३४२।

हे प्राणी ! एक निमिष भी उस दीनदयाल को मत भूल। श्री धरणीधर गोपाल कृष्ण को हृदय मे धारण करके नित्य उसके गुणो को गा ॥३४२॥

आठूं पहर अणद सूं, जप जीहा जगदीस ।
केसव क्रिसन कल्याण कहि, अखिलनाथ कह ईस ।३४३।

हे प्राणी ! तू अपनी जिह्वा से आठो पहर आनद के साथ अखिल विश्व के स्वामी श्रीकृष्ण, केशव और जगदीश्वर के कल्याणकारी नामो का उच्चारण किया कर ॥३४३॥

भगतपाळ भगवत भणी, ध्यान सगुण उर धार ।
चित निसदिन हरिहर उचर, सासोसास सभार ।३४४।

भक्तो की रक्षा करने वाले भगवान के प्रति अत्युत्कट सगुणोपासना से ध्यान धारण कर और नित्यप्रति चित्त से श्रीहरि और श्री शिव के नामो का स्वास प्रति स्वास उच्चारण कर ॥३४४॥

आतम हूसी एकलो, छूटत तन सगाथ ।
साथी तिअ दी सखधर, सुरग तणै पथ साथ ।३४५।

हे जीवात्मा ! शरीर का साथ छूट कर जिस दिन तू अकेला रह जायगा, उस समय तेरे स्वर्ग पथ के साथी केवल श्री नारायण ही होगे ॥३४५॥

केसव कहि कहि सुमरिये, नव सुइये निरधार ।
रात दिवस रै सुमिरणै, पूगै अवस पुकार ।३४६।

श्री केसव के नाम का सुमिरण बार बार करते रहना चाहिये। निराधार होकर प्रमाद से सो नहीं जाना चाहिये (ईश्वर के अवलम्बन से रहित होकर समय व्यतीत करने का प्रमाद मत कर)। रात दिन सुमिरण करते रहने के कारण कभी न कभी तेरी पुकार अवश्य पहुँचेगी ही ॥३४६॥

मन पाखैं ही महमहण, चवियै जिहाँ चरित्त।
आतम पीधाँ अवस ही, अमर करै अमरत्त।३४७।

मन नहीं होने पर भी जिह्वा से महा महाराणव (परब्रह्म) का चरित्र गाते रहना चाहिये। क्योंकि अमृत को यदि बिना मन पिया जाय तो भी वह अमर कर देता है ॥३४७॥

नारायण भज रे नरा! अंतरजामी एक।
साँई जो सवळो हुवै अवळा हुवो अनेक।३४८।

हे मनुष्य! तू उस एक अंतर्यामी श्री नारायण का भजन कर। वह यदि तेरे अनुकूल है तो अनेक प्रतिकूल होने पर भी तेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते ॥३४८॥

छप्पय

कोम नहीं केदार, प्राग जमना नहीं पायो।
सेतबंध रांमेस, भटकतो भ्रम न आयो॥
गया न न्हायो गंग, धांम कुरखेत न दीधौ।
पुहारयो न जगदीस, करम भवबंधन कीधौ॥

तन पाय सुभग मानव तणो, प्रेम न अतर पाईयो ।
ईसरो कहे रे आतमा ! गोविद गुण नह गाईयो ।३४६।

केदार, प्रयाग, सेतुबध रामेश्वर, गया, गगा, कुरुक्षेत्र, जगदीश इत्यादि तीर्थों मे जाकर दर्शन, स्नान, दान, प्रणाम और साधुओ का सत्सग नही किया और तू सु दर मनुष्य शरीर पाकर श्री गोविन्द का गुण गाते हुए उसके प्रेम मे नही पगा तो ईश्वरदास कहते है कि ससार मे आकर और कर्म बन्धनो मे फंसता रहा ।।३४६।।

मात उदर नव मास, रुदत ऊधे सिर रहियो ।
तद पायो नर तन्न, सकटा पूरण सहियो ।।
पसू जेम रहि पेट, सोण मळ मूत्र सु खायो ।
भज्यो नही भगवान, गाढ सुख मूळ गमायो ।।
जगदीस भजन जाण्यो नही, धायो घर धधो धरै ।
धर ध्यान ईसरा सक धर, अजौ राम मुख ऊचरै ।।३५०।

पशु की भाँति मल-मूत्र और रक्त को खा-पीकर नौमास माता के उदर मे औंधे सिर लटकता रहकर रोता रहा। प्रसव के अनेक भाँति सकट सहकर फिर मनुष्य जन्म पाया, परतु भगवान का भजन फिर भी नही किया। परम और सत्य सुख को मूल से खो दिया। जगदीश के भजन को नही जानकर भाग-दौड करता हुआ घर-धधे मे रत रहता है। ईश्वरदास कहते हैं कि हे प्राणी ! अब तो तू निर्भय होकर श्री राम के नाम का उच्चारण करता हुआ अब भी उसका ध्यान धरे तो अच्छा है ।।३५०।।

॥ ॐ शिव ॥

४ सत्य महिमा

साच पियारो सांईयो सांई साच सहाय ।
साचां अगन नि साळगे सापां सप न डसाय ।३५१।

सत्यवादी के अस्तित्व को (सच्चे को) त्रिताप रूपी अग्नि जला नहीं सकती। काम रूपी सप के डसने से भी सत्यवादी का अस्तित्व मिट नहीं सकता। सत्य परमात्म स्वरूप है अतः वह उसको प्यारा है। परमात्म स्वरूप सत्य सदैव सत्यवादी की शक्ति के रूप में सहायता करता है ॥३५१॥

---

५ श्री मद्भागवत महिमा

दूहो

जाड टळे मन मळ मळ थावे निरमळ देह ।
भाग हुवै सो भागवत सांभळिये स्रवणेह ।३५२।

जिसके श्रवण मात्र से मन के विकार और अज्ञानता का नाश होकर यह देह निर्मल—पाप रहित हो जाता है। जिनके भाग्य में बदा है वे भाग्यशाली ही श्रीमद्भागवत की कथा को अवश्य सुनते हैं ॥३५२॥

॥ ॐ शिव ॥

६. श्री हरिरस महिमा

दूहा

हरिरस हरि रस हेक है, अनरस अनरस आण ।
विण हरिरस हरिभक्ति विण, जनम व्रथा कर जाण ।३५३।

रस रूप आनन्दात्मक हरि और यह हरिरस काव्य—इन दोनो मे कोई अन्तर नही, एक ही हैं। ससार के अन्य रसो को रसहीन जानो। अत ऐसे हरिरस और हरि की भक्ति के बिना अपने जन्म को वृथा समझना चाहिये ॥३५३॥

सरव रसायण मे सरस, हरिरस समी न कोय ।
हेक घडी घट मे रहै, सह घट कचन होय ।३५४।

समस्त रसायनो मे हरिरस के समान अन्य कोई श्रेष्ठ रसायन नही है। जो यह रसायन एक घडी ही घट के भीतर रह जाय तो समस्त घट कचन जैसा-आनद रूप हो जाता है ॥३५४॥

सकळ हरीरस सोध सुभ, वाणी अरथ विचार ।
स्रवण करै सुध मन सदा, तो सूझै तत सार ।३५५।

वाणी और अर्थ के विचार रूपी शोधन सहित इस शुभ हरिरस को जो शुद्ध मन से नित्य सुनता है, उसे सार तत्व जो ब्रह्मतत्व है उसका साक्षात्कार हो जाता है ॥३५५॥

हरिरस सू सुख-बुध हुवै कस्ट न व्याप कोय ।
हरिरस सू सदगत सदा सहै सकळ नर लोय ।३५६।

हरिरस के सुनने पढ़ने से बुद्धि पवित्र होती है । आधिभौतिक आधिदैविक और आध्यात्मिक—किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं व्यापता और समस्त स्त्री पुरुष सदगति को प्राप्त होते हैं ॥३५६॥

ठनक भनक हरिरस तणी कंठ-प्रांण सुणि कांन ।
महा पाप पह मावही आवै जनम न आंन ।३५७।

कंठ में प्राण आने के समय हरिरस की थोड़ी सी भनक भी सुनाई दे दे तो उसके समस्त महापापों का नाश हो जाता है और फिर वह जन्म में नहीं आता । ३५७।

हरिरस सू सब सुख हुवै, हरिरस सू सब ग्यांन ।
हरिरस सू नव निध हुवै, हरिरस रूप निधांन ।३५८।

हरिरस से सर्व सुख (अखंड सुख) की प्राप्ति होती है । हरिरस से सर्वात्म ज्ञान की प्राप्ति होती है । हरिरस से नौ निधियों की प्राप्ति होती है और हरिरस से उस अखंड रूप की प्राप्ति होती है ॥३५८॥

छंद मोतीदाम

हरीरस रो रस लेन हमेस ।
लगै नहि काळ भय लवलेस ॥
जपै कव ईसर वे कर जोड ।
कथता हि पाप टळै दुख क्रोड ।३५६।

जो पुरुष हरिरस के रस का पान करता है उसको काल का भय लवलेश भी नही होता। कवि ईश्वरदास दोनो हाथ जोड कर कहते है कि हरिरस का ध्यानपूर्वक कथन करने वाले के करोडो पाप और दुख निवृत्त हो जाते हैं ॥३५६॥

दूहा

ओ अवसर नहि आवसै, आखै ईसर एह ।
पुण रे हरिरस प्राणिया, जनम सफळ कर जेह ।३६०।

कवि ईश्वरदास कहते हैं कि इस मनुष्य जन्म का अवसर फिर प्राप्त नही होगा। इसलिये हे प्राणी ! तू हरिरस का कथन कर, जिससे तेरा जन्म सफल हो जाय ॥३६०॥

कवि ईसर हरिरस कियो, छंद तीनसौ साठ।
महा दुस्ट पामै मुगत, पो चठ कीजै पाठ ।३६१।

कवि ईस्वरदास कहते हैं कि मैंने यह तीन सौ साठ छंद का हरिरस निर्माण किया है जिसका प्रातःकाल उठकर पाठ करने से महा दुष्ट भी मुक्ति को प्राप्त हो जाता है ॥३६१॥

॥ श्री हरिरस सपूर्णम् ॥

सं० १८०७ जेठ सुदी ११ लिखी धामट वेष[राम] बीठू [जा]मध्ये।
" बर' 'डु रट वसाबी री पोथी' लिखी छै ॥

---

* पचहत्तर प्रतिशत पाठ इस विषम-चिन्हांकित प्रति के आधार पर है। अतः इस प्रति की प्रशस्ति दी गई है।

अनुक्रमिक प्रथम-पँक्ति-सूची

परिशिष्ट १

॥ ॐ शिव ॥

परिशिष्ट १

अनुक्रमिक प्रथम-पंक्ति सूची

अ

उ

ओ

ओ

क

च

छ

ज

त

द

ध

न

प

ब

भ

व

स

म

र

ल

म

र

व

स

ह

शब्द कोष

परिशिष्ट २

परिशिष्ट २

शब्द कोष

अ

अक (१०६) चिन्ह
अत (३०४) निकृष्ट, अत्य
अतरजामी (३४७) अतर्यामी
अधाधु ध (३३४) अधकारमय
अब (२७८) जल
अकरूर (२४७) श्रीकृष्ण के चाचा अक्रूर
अकळक (१५३) कलक रहित
अकळ (२१५, २२२, २६२) अकलनीय
अकळीस (९३) अकलनीय, ईश्वर
अकामिय-अग (१५८) अकामी जनो के अग
अक्खर (१३७) नाश रहित
अक्खर (१९५, १९९, २३१) अक्षर, वर्ण
अक्रम्म (९०) अक्रिय कर्मों से रहित
अक्रम्म (१५७) पाप, अकृत्य
अखताय (२२४) लेते हो, कहते हो
अखा (२५५) कहूँ
अखे (२४५) कहते हैं
अखैमाळ (६९) अक्षमाला
अखोण (४६) अक्षौहिणी
अगम्म (१३६, १४४, २९०) अगम्य
अगा (२१२) आगे
अगाध (२४) अत्यन्त, अधिक
अगेह (१४४) घर रहित
अग्गि (२४१) आगे
अग्राह (१४) अग्राह्य
अघ-मजण (१०५) पाप धाने वाला पापों का नाश करने वाला
अघराण (२३९) सुगन्धि
अचुतानद (७५) अच्युतानन्द
अछेह (७८) अनन्त
अछै (२६८) है
अजपाय (१७) अजपा जाप द्वारा जपने योग्य
अजपाय-जाप (२२३, २९८) अजपा जाप
अजप्पाय जाप (२९७) अजपा जाप
अजस्सिव (१५४) ब्रह्मा और शिव
अजाण (२०५) अनजान में

अपरम्म (९३) परम, अप्रमेय
अपाव-गवन्न (२९६) बिना पांवो के चलने वाला
अपीत (१४१) पीला नही
अब्ब (२८०) पानी
अब्भ (२७२) आकाश
अभग (४८) नाश न होने वाला
अभूत (५१) अद्भुत, अभूतपूर्व
अभैमन (५०, २५७) अभिमन्यु
अम (३०७) हमने
अम तरणा (३०५) हमारे
अमरत्त (३४७) अमृत
अमरीख (५२) अम्बरीष
अमाण (२५३) अमानी
अमाणिय (१७८) हमारी, मेरी
अमीय (८४, २३९) अमृत
अमीय मय (१८२) अमृतमय
अम्म (१९) हमें, हमको
अम्रित वाव (२३) १ अमृत वर्षा २ अमृत वापि
अलक्ख (९१) अलख
अर (१३२) मोर
अरक (१८९) अर्क, सूर्य
अरक्क (२४२, २५५) अर्क, सूर्य
अरज्जुण (२४६) अर्जुन
अरत्त (१४१) लाल नही
अराध (१४८) आराधना करते हैं
अराधवा (१) आराधना करने के लिये
अलक्ख (१६, २५२, २९५) अलख
अळगो (३०६) अलग, दूर
अलज्ज (३३५) निर्लज्ज
अलप्प (३२५) अल्प, तुच्छ
अलाह (१४१) १ अलभ्य २ लाभ रहित
अलीध (४२) लेने से पहले, विना लिये ही
अळोयळ (२३९) भ्रमर समूह
अळूझ (२६८) उरझा हुआ
अळूझत (२५३) उलझ रहे हैं
अलेख (१७, १३९) अलख
अलेखत (२९६) देखने वाला
अलोज (१५४) १ आलोचना करते हैं, २ कहते हैं
अवगत्त (७८, ९३) अविगत
अवचळ (२, २२१) अविचल
अवतारत (१८९) उतारते हैं, घुमाते हैं, फिराते हैं
अवध (३१२) अवधि, आयु
अवर (८, ३३७, ३३८, ३३९) मोर

अवरां (११८) औरों को
अवळो (१४८) प्रतिकूल
अवस (२११ १४६ १४७) अवश्य
अवसर (१६०) नृत्य
अवार (११८) तुरंत
अवेव (२९०) १ रहस्य २ अवयव
अससम (२३) पर्वसम
असम (१२) असंभव
अस (२४५) ऐसा
असथांन (२६१) स्थान
असहां (१) १ हमको अस्मको
२ हमारा
३ असहाय जनों को
असी (२६५) ऐसी
असुरांणा (१२) असुर समूह
असेत (१४१) श्वेत नहीं
अस्तुति (२३७) स्तुति
अहुडै (२६५ १९७) १ थोड़ी
२ वैसे भी ३ गुप्त से
अहुडै ही (१६५) १ स्वाभाविक तौरसे
२ वैसे भी हो
अहि-धारण (१ ३) नाग को धारने
वाला
अहीस (१३७) शेषनाग
अहोनिस (२२५) अहर्निश

आ

आगळ (२३४) १ अधिक
२ अधिक परिमाण
आंण (२८४ २८५) १ आकर २ शपथ
आंण (३३६) अन्य
आंण (३५३) अन्य प्रकार समझो
आणिय (११) ले आये
आंन (३५७) और दूसरा २ फिर
आंपणो (११३) १ अपना
२ आत्म-स्वरूप
आमय (२०, ३११) १ माया
२ रोग
आस (२१५) कथन कर
उच्चारण कर
आखै (१२९ ३६) कहता है
आगळ (१०६, २३७, २१८ २७४)
आगे सम्मुख
आगळै (१०७) सम्मुख
आघ्राणी (१ २) सूंघ कर
आठूं पहोर (१ २) आठ पहर
आड (३१०) पानी से भरा हुआ
छोटा गड्ढा
आडो (२७८) बीच में

आणंद (१०४,२२४) आनन्द, आनन्द से
आणदघण (२१६) आनद से भरपूर
आण-जाण (१५६) आना और जाना
आतम (२०६) आत्मा
आतमा (२०६) आत्मा
आतमा (३२५) अपने लिये
आद (१६३, १८६) आदि
आद पुरक्ख (५६) आदि पुरुष
आद विसन्न (३१६) आदि विष्णु
आदित (१५४) सूर्य
आदेश (१२२, १४०, १४१, १४२, १४३, १४४, १४५, १४६, १४७, १४८, १४६, १५०, १५१, १५२, १५३, १८५, १८६, १८७, १८८, २५२) प्रणाम, नमस्कार
आपज (१७६) स्वय
आपण (२१३) अपना
आपहि आण (२८४) अपने आप
आपहि पाहि (२७६) अपने आप
आपही आप (१८५) अपने आप
आपापे (३०६) स्वयम्
आपेज (३११) आपही, स्वय ही
आपेह आपेज (१७४) अपने आप
आपै (३२८) देदे, दे सके
आपोपिय (१६) अपनी ही
आप्यो (४५, ३०२) दिया
आभ (६, ८१, २५५) १ आकाश, अन्तरिक्ष २ स्वर्ग
आय (१८०) आ कर
आरत (२८, २६) १ आर्त, दुखी, आतुर
आलम (१३२, १५४) १ प्रभु २ ससार
आलसवाण (३४१) आलसी लोगो को
आव (२३) आ कर
आवण-जाण (२२६) आवागमन का
आवद्ध (७०) आयुध
आवसे (३६०) आयेगा
आवही (३२६) आएगी
आविय (३५) आ कर
आविस (१११) आऊँगा
आवै (३५७) आता है
आस (१४२) आशा
आसी (२०६) आयेगा

इ

इछाय (१६) इच्छा, इच्छा से

इंडज (२९१) अण्डज अंडे से उत्पन्न होने वाले प्राणी
इत्थी (११२) स्त्रियाँ
इम (१० १८६ २०६) इस
इक्के (२५५) एक ही
इक्को (१८२) एक
इम (१११, ११३ २८५) ऐसे इस प्रकार
इला (६६ १८१) इला पृथ्वी
इला (४२) पृथ्वी
इलात्तय (२७२) त्रिभुवन त्रिलोक
इसा (२५६) ऐसे
इहि (३११) यह

ई

ईसर (१५) ईश्वर

उ

उधार (४२, ४६) बचाकर उद्धार करके
उगारण (५६ ६) बचाने के लिए
उगारिय (४५, ५२) बचा लिया उद्धार किया
उचारत (१४७) उच्चारण करते हैं
उचरै (२३३) उच्चारण करता हुआ
उजेस (१५३) प्रकाशित, प्रकाशमान्
उज्जोयण (७२) जुगनू
उग्गाम (७२) उद्गम
उतारण-प्रबल (२१३) गर्व उतारने वाला
उतारण-पार (८८) पार उतारने वाला संकट से मुक्त करने वाला
उतारिय (४१) उतारा
उतारिस (११) उतारूँगा
उथाप-थपाप (१८३) उत्थापन और स्थापित करने वाला परन्तु और प्रतिष्ठित करने वाला
उदक (२३५) जल उदक
उदभिज्ज (२६१) उद्भिज्ज उगने वाला
उधरै (२२१) उद्धार होगया
उनमद (१८२) उन्माद
उपज्जस (२२४) उत्पन्न होता है
उपज्जहि (२८०) उत्पन्न होता है
उपत्त (२६४) उत्पत्ति
उपनाय (१८) उत्पन्न हुए
उपन्नो (१८५) उत्पन्न हुआ
उपन्नोय (१७४) उत्पन्न हुआ
उपाइ (४०) उठा कर
उपाय कर (३०२) उत्पन्न करके
उपाया (१८६) उत्पन्न किया

उपावण (१८८) उत्पन्न करने वाला
उपाविय (३०)बनाया, उत्पन्न किया
उवार (१९) बचाइये
उवारण (७२) उद्धार करने वाला
उवारिय (५१) उबारा
उभै (१५०, १५३, १७५) १ दो
२ दोनो
उरे (२२०) हृदय मे
उळक्खिय (२८५, २९१) पहचान लिया
उळग्गत (२३२, २५२)=गाता है
उळावता (२१३) पुकारने से
उळाविस (११३) उल्लास पूर्वक स्मरण करूंगा

ऊ

ऊखेविस (११४) खेऊंगा, घूपूगा
ऊचरै (३५०) उच्चारण करता हुआ, उच्चारण करके
ऊ (३३४) वह
ऊपजै (१३३) उत्पन्न होती है

अे (ए)

ए (३२५) यह
एकलो (३४५) अकेला
अेकोज (१५८) एक
अेणि पर (१०६) इस प्रकार
एह (३०७, ३२५, ३३५, यह

अै (ऐ)

अै (६) ये

ओ

ओ (१०, ३०६, ३१३, ३६०) यह
ओखद (३३१) औषधि
ओघ (२२४) समूह
ओझळ (२७४) अप्रगटसा
ओड (४०) किनारा
ओदव (२४७) उद्धव
ओळग (३१६) याद कर
ओळग्ग (२३६) १ स्तुति २ गान

क

कठीर (९५) १ सिंह २ नृसिंह
कद्रप (६८) कामदेव
कच्छ (१३, ८२) कच्छपावतार
कज्ज (२२, ३३५) लिये
कथताहि (३५९) कथन करने से हो
कथत (१९२) कथन करते हैं
कथता (२६२) कथन करते हुये
कथा (४, ७) कथन करता हूँ, कहूँ
कथिस (११) कथन करूंगा

कधै (१३३ १५० २२५) कहते हैं, मारते हैं, कहने से
कदी (१३५ २२३) कब कभी
कधी (२३) कभी
कम (१२१) पास
कन्ह (६४) कृष्ण
कपाल (५२) सिर
कपि (३६) सुग्रीव
कपिस्म (८३) कल्कि
कमठाधर (५७) कच्छपावतार
कम्मल सरस (२५७) कमल के समान
करंत (२५१) करते हैं
करंतिय (२१) करती हुई
करंतो (३११) करने वाला
करण (३२८) कर्ण, कान
करइ (१८६) करके
करण-संघार (६६) संहार करने वाला
करम्ण (८१) महादानी कर्ण
करतूत (६७) चरित्र
करण (३३८) महादानी कर्ण
करमन्न (२४३) कर्मण्य
करम्म (५२ १२१) कर्म
करव हौं (१२३) मैं करवाऊ
कराही (३२६) करके

करां (१२० २८१, २८२) करता हूं कर
कराइव (२७८) करवाइये
करिस (६६ १०० १०१, १०२ १०४ १०५,१०६,१०७ १०८ १०६, ११०, १११) करूंगा
करूर (६२) क्रूर
करेवाय (२१) करने के लिये
करेसी (१६६) करेगा
करे (५५, ११०) किये करके
कल्किम (७१) कल्कि अवतार
कलको (१३) कल्कि अवतार
कलपंत (५) कल्पों के अंत में
कलि (५४, ६६)=१ पाप
२ कलियुग
कव (३५६) कवि
कवण (१८८) १ किस प्रकार
२ कौन
कवि (१०३) ब्रह्मा
कश्य (१२४) कश्य
कसा (१२३ ३०५) कौन सा
कसी (८) कैसी कौनसी
कहंत (१४०) कहते हैं

कहावै (१६२) कहते हैं, गाते हैं
कह्यो (२८८) कहा
कान धरत (२१३) कान देता है, सुनता है
कान्ह (६३) कृष्ण
काय (१३०) कुछ भी
कागभुसड (१४८) काकभुशुंडि
काटण (१६४) काटने वाला
काटवा (३२१) काटने के लिये
काम (१७१) इच्छा
काय (३०८) या तो, अथवा तो
कार्तकसाम (२३७) स्वामीकार्तिक
काळ (७३, ३२१) मौत, काल
काळख (६६) पाप
काळजवन्न (४७) कालयवन
कालाय-वालाय (६८) भोली-भाली विनती
कासप (२४५) कश्यप
काह (१४०) कहाँ मे
कि (२११, ३००) क्या, अथवा, या
किकेइ (३७) राजा दशरथ की पत्नी कैकेयी
किण मात (१६२) किस प्रकार
कित (३०४) कहाँ
किता (२२, २३, २६, २७, २८, २९, ३०) कितने ही
किताइक (२१, २५, ३१, १३६, १७७) कितने ही
कितावर (४५) उपकार
किथ (२६५) कौनसी
किथै (२६६) कहाँ
किधेव (३७) किया
किधौ (३६, ३८, ४०, ४५, ४७, ५२, १७७) किया
किम (१२२) कैसे
कियाह (३३९) कर दिया
कियो (१४०) उत्पन्न किया
किसकध (४०) किष्किंधा
किसन (१३) कृष्ण
किसो (३२८) कौन
की (१२३) १ क्या २ कौनसा
कीध (२२, ३१, ३५, ४२, ४५, ४८, १७७, २५४, ३४९) किया
कीधा (३०४, ३०७) किया
कीधा (३०३, ३०६, ३०९) १ करने से २, करके
कीधो (३४९) किया
कीन (५०) कर दी, कर दिया
कीरत (१९०) कीर्त्ति
कीरत्ती (१८८) कीर्त्ति
कुभेण (८०) कुंभकर्ण

कुण (१३५, १६१, २८३, ३०९) कौन, किसने
कुण पासे (३०४) किस लिये
कुबज्जाय (२५४) कुब्जा की
कुमंत्र (३७) खोटी सलाह अनुचित परामर्श
कुरखेत (४६) कुरुक्षेत्र
कुरखेत्र (३४९) कुरुक्षेत्र
कुरम्म (८२) कूर्मावतार
कुल मेरु (१४७) सुमेरु सहित सातों पर्वत
कुवांण (३१५) १ कुकाम्य २ कुवाणी
कू (१२६) को
कूहा (३०८) क्रोध
कूबड़ (२५४) कूबर
केक (१०६) किसी को
केण (१४०) किसने
केत (२५८) केतु
केता (३३) कितने
केतिक (१६, ६५) कितनी ही
केम (६, ७) कैसे, किस प्रकार
केर (११०) का संबंधकारक विभक्ति 'केरो' का एक रूप। केर, केरी केरे आदि। इसके बहु वचन और स्त्री जाति रूप हैं
केवांण (३२१) तलवार
कै (१३४ ३०७) अथवा
को (१७, १३५) कोई कौन
कोय (१५६) कोई
कोट (९८, ६०, २१५) करोड़ों
कोट असम्म (२८३) करोड़ों अश्व
कोटीधज (३६८) कोटिध्वज
कोयलारांणी (२) कोकिलारोहिणी देवी। सौराष्ट्र में द्वारिका के पास कोयल पर्वत पर निर्मित एक प्राचीन मंदिर की इष्टदेवि (इष्टदेव) नाम की कोकिलारोहिणी देवी
कोरम (३११) कूर्म
कसकाल (६६) नाश करने वाला मारने वाला
कत्त (२७०) कर्त्ता
कपाल (१९७) कृपालु
क्रम,क्रम्म (४, ११ १५७, १७१ २९५, २१९ ३०० ३ ६ ३०८, ३२०) १ कर्म १ शुभाशुभ कर्म

३ चरित्र, ४ गुण,
५ यश, ६ पुण्य कृत्य
क्रमणा (१११) कर्मणा
क्रिपाळ (१४३) कृपालु
क्रिमन, क्रिसन्न (२६, ४७, २१८, २५६, २६०, ३१५ ३४३) कृष्ण
क्रीत (२, १०३) कीर्ति, गुण

ख

खभ (१०६) बाहु दंड
खग (१५४) सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह
खट-भाख (२४३) षट् शास्त्र
खत्री (३३) क्षत्रिय
खपत्त (२६४) नाश
खपै (४६, २३२) खपादिये, नाश किये
खय-मान (२३२) मान का क्षय
खरदूख(३८) खर और दूषण नामक दोनो दैत्य
खळ (५५, ८०, १८४) दुष्ट
खांण (७, १८८) खानि, योनि
खाण (१६८) भोजन
खाणिय चार(१५२)चार जीव योनियाँ
खाण-पाण (१५६) खाना और पीना
खिण (२५५) क्षण
खिमावत (१८१) दयालु, क्षमावंत
खीर (१६३) क्षीर
खुधा (२१०) क्षुधा
खेचर (१७४) नभचर
खेत (५५) रणक्षेत्र
खेम (३३) भगाकर
खेंगाळ (८०) नाश करने वाला
खोण (२१४, ३०४) क्षोणी, पृथ्वी

ग

गगेव (४६, ५०, ८१) गागेय, भीष्मपितामह
गध्रव (२४६) गधर्व
गणै (३२५) समझकर
गत (१४, ३०३) गति
गत्त (२६०) गति
गम (१६१) ज्ञान
गरभ्भ-जगत्त (१७३) १ जगत का कारण २ जगत-गर्भ
गळ (३३७) गला
गळकासिला (११४) गडकी नदी की शिला, सालिग्राम
गळी गयो (२७७) मिट गया
गळै (२७५) कठ में, कठ से
गवरि (१६१) गोरी
गहीर (२८६) गभीर
गाम-गेठ (१६६) १ प्रवास, २गांव-गोष्ठी, ३ ठाम-ठिकाना

घ

घट (२०६) शरीर
घड़े (१७७) बनाये
घरण-घरणा (१८५, १८८) असंख्य
घरण दाता (२१६) औढर दानी
घरणनामी (११, १०१) असंख्य नामों वाला
घनवांन (६६) मेघ वर्ण
घाट (१८५, १८८) १ रूप २ शरीर

च

चगो (१६८) अच्छा
चउद (२६) चौदह
चक्ख (२५२) १ दृष्टि २ चक्षु
चख (४७) चक्षु
चढवे (१८६) चढाती है
चढावहि (२८०) चढ़ाते हैं
चढियो (२१६) सवार हो गया हूँ
चत्र (५३) चार
चत्रभुज (१०६, २०६, २१५) चतुर्भुज
चत्रवेद (१६१) चारो वेद
चम्मर (१६०) चंवर
चरचवि लेप (११०) लेपन करके
चरच्चत (२५१) अर्चा करते हैं
चरीत (१७) चरित्र
चवत (३६) १ बरसाता हुआ, झराता हुआ २ कहता हुआ
चवता (२६२) कथन करने से
चवां (१६३, १६४) वर्णन करूँ
चवियै (३४७) गाइये, कहिये
चवै (१६२) वर्णन करे
चा (११७) के (विभक्ति)
चाढरण (३२६) चढाने वाला
चारिय-वाणिय (१५२) चारों वेद
चिंत्या (२२७) चिंता
चिताविय (१७) सचेत किया
चियारै (३०४) चतुर्विध, चारो
चीत (२०६, २२७) याद, चित्त मे
चीतार (३२४) सुमिरण कर
चुरासिय लक्ख (१६) चौरासी लाख जीव योनि
चोपड़ियो (१६८) घी से चुपडा हुआ
चौ (१६६) का (विभक्ति)

छ

छडता (६) छोड़ते समय
छडी (३३६, ३३७) छोड़कर

जरा (२६६) जरायुज, पिंडज
जरामय (२२६) बुढापा और रोग
जराम्रत (२६७) जरा और मृत्यु
जव्ताय (४६) सतप्त, जलते हुए
जळांथळ (२६६) जल और स्थल
जळा (४७) ज्वाला
जळाय (२४) जला डाला
जळावण (६२) जलाने वाला
जळै (३५२) जलता है
जव-तिल (२१४) यव और तिल, सूक्ष्मातिसूक्ष्म
जस (१५१) यश
जसा (२४७, २४६) जैसे
जहडो-तहडो (१६८) जैसा तैसा
जाण (१६४, १६७) पहचान, प्रगट
जाण (३५३) समझना चाहिये
जाणत (१३६, १३७, १३८, १३६, १४०) जानते हैं
जाणव (६७, १२०, १२२) जाना जानता है, जान सकता है, जानता हूँ
जाणीता (२७४) ज्ञानी, जाननेवाला
जाणै (३२३) जानता है
जांण्यो (२८८) पहचाना
जांमण (१२६) जन्म
जांमण-पास (१२६) जन्म पाश, जन्म बंधन
जांमण-मरण (१२४, २१०) जन्म और मृत्यु
जांमण-म्रत (१२१) जन्म मरण
जांमदगन्न (६३, २४४) परशुराम
जा (३१८) उस
जाग (३४, ३५) यज्ञ
जाग (२६४) जगह
जागविया (३०३) उत्पन्न किये
जागै (३२४) जग जाय
जाड (३५२) जडता, अज्ञानता
जात (१६, १८) जाति, प्रकार
जातिय-पातिह (२६४) १ जाति और पंक्ति, जाति-पाँति
जातिय रेस (२२) १ जाती हुई २ रसातल को जा रही
जाया (३०४) उत्पन्न किया
जायो (१३५) उत्पन्न किया
जाळनळ (२१४) ज्वालानल, अग्निकण
जाळिय (४७) जला डाला
जिम्र (१०,११५,१७६,१८०, १८६, १६५,२०३,२६४,२६५,३१८, ३३४,३४०) जिस,जिसने,जिसके

जिण री (३३४) जिस जिस
जिकरण रो (२०३) जिसका
जिकांह (१८०) जिनके
जिकां (२२१) जिन्हें
जिके (२३१, २३२) जो
जिको (१२१, २२१) जो
जियां (८७१) जहां
जिपें (३३) जीते
जिम्मा (१११) जीभ
जिम (२,२८१ २६१) जिस प्रकार
जिम (१७६, १८०) जिसके
जिवाड़िय (५) जिला दिया
जिह्वा (३४७) जिह्वा से
जिहि (२८२) जो
जीत (८७) जीतने वाला
जीत्यो (४७) जीत लिया
जीवण-न्यइ (७२) प्राणों के जीवन
जीह (२२६ ३१२) जीभ
जीहां (११५, ३२० ३४२) जिह्वा से जिह्वा द्वारा
जीहा (३२८) जीभ
जुमी (२८२) मजब
जुमोजुम (४८) जुग-जुग
जुधट्ठल (२४६) युधिष्ठिर
जुई (२४२) जोड़ते हैं
जुवा (२७३) जुदा, अलग
जुवौ (२१८) अलग
जुहार (१७३) प्रणाम
जुहारत (२४६) प्रणाम करते हैं
जुहारयो (३४६) १ प्रणाम किया, २ दर्शन किया ३ तीर्थयात्रा की
जे (३०४) जिस
जेण (३ १७५) जिसकी, जिसकी
जेता (३३१) जितने
जेम (२७४) जहाँ
जेना (१३१) जिसके
जेम (१८० ३४०) जैसे
जेह (३१६ ३६) जिससे जो
जोग-निवास (६०) ध्यानावस्थित
जोगाणंद (१८२) योगानन्द
जोगिय (८३) योगियों के लिए
जोगेस (१४४, १४८) योगेश्वर
जोड़िय पांण (१२७) हाथ जोड़ कर
जोड़ (१०७) जोड़कर
जोत असख (१०) असंख्य ज्योति वाला
जोतां (२००) देखते देखते हुए
जोतो (११०) ज्योति
जोमी (१८६) जन्म योनि
जोय (११६) १ प्रतीक्षा २ देख
जोमो (२७७) देखा

जोवन (१८२) १ युवा २ यौवन
ज्यां (२१३, २२४) १ जिन
२ जिनको
ज्यु (१२५) जैसे

झ

झलणहार (६) धारण करने वाली

ट

टळै (१८०, २२४, २२५, ३५२)
टलता है
टाळण (७१) मिटाने वाला,
टालने वाला
टाळिजै (१२६) टालिये
टेरत (१४७) रटते हैं

ठ

ठगारा (२७६) ठगने वाला
ठयो (२६५) १ होगया २ प्राप्त हुआ
ठाय (२६८) स्थान
ठाविय ठोड (२६५) निश्चित स्थान
ठावो (२६५) प्रगट, प्रसिद्ध
ठावो हों कीध (२६८) १ मैंने
पा लिया, २ मैंने पता
लगा लिया

ड

डरया (३६) डर गये
डाळ (१७१) शाखा
डाळांय-साखा (२७४) शाखा प्रशाखा
डेडरी (३१०) मेंढकी

ढ

ढकियण (१८८) ढकने वाला
ढोल (३२२) विलम्ब

त

तंत (१७२, १९६) तत्त्व
ततर (१२५) तत्र
तत्र (१७२) जादू-टोना
तउ (५, २६४, २६०, २६१) तो,
तोभी
तक्ख (२४०) १ तक्षक नाग
२ शेषनाग
तज्यौ (३६) छोड दिया
तठै (१५६) वहाँ
तणा,तणा (४, १४, २१, ३२, ५३,
८०, ६६, ११२, १२०,
१२५, २२३) के, का
(विभक्ति)
तणी (५०, ६७, २११, २२८,
३२६, ३५७) १ मे
२ की (विभक्ति)
तणी-परि.(२७८) के समान
तणै (३४, ३५, ३४५) के (विभक्ति)

तणो (५, ४६, १७६, २२१ ३० ३४६) संबंधकारक विभक्ति (का) का एक रूप

तणा, तणां, तणा तणी, तणी—इसके बहुवचन और नारी-जाति आदि रूप हैं।

तत (११५) तत्व

ततसार (३५५) सार तत्व

ततह (२५८) उस

तद (३२४ ३५०) तब

तदी (३८) तब

तनै (७७ २८१ २८९) तुझे

तम (३ ७) तुमने

तम्म (२२५, २३६) तुम्हारा

तर (३३७) तब तुम

तरण-तन (२५८) अग्नि

तरै (१७९, २२०) तिर जाते हैं।

तळ (१८९ ३३८) १ तले तल में २ पाताल

तम्मंसत (२२४) १ तरसती है २ तपस्या करती है

तवण (६) स्तवन करने के लिये, कहने के लिये

तविजै (१२) कहे जाते हैं जाने जाते हैं

तवै (२२५) कहता है

ताणां-बांणां (२६३) ताने बाने में

ताड़ीका (३५) ताड़का राक्षसी

तात-अनंग (६७) प्रद्युम्न के पिता श्रीकृष्ण

ताप (१४६) अग्नि तप

तापी (११७) त्रिताप

ताय (२२६) उसे

तारण तिरण (१८८ ११३ २३३) उद्धार करने वाला

तारण-सघ भव (१०४) संसार रूपी समुद्र से तारने वाला

तारिया (३३८) तार दिये

ताव (२२७) ताप पीड़ा

तास (२५७) उन

तासू (२२०) उससे

ताहरि, ताहरी (१८६, ३०५) तेरी

ताहरो (११६, २८३) तेरा

तिम (१० ३४५) उस

तिम दी (३४५) उस दिन

तिका, तिकांह (१७६, १८० २२६, २२७) उनको

तित (३०५) १ तब, २ वहाँ, तहाँ
तिथ (२७१) वहाँ
तिरलोक (३६) तीन लोक
तिलो भर (२२६) तिल भर भी, किंचित भी
तिहा (२२४) १ जिनको २ उनको
तिहारो (२७३) तुम्हारा
तिहि (१६, ४१, २५६) १ उस, २ उसे ३ जिनकी
तु (१६) तेरे
तुचा (११०) त्वचा, चमडी
तुझ मझ (२८०) तेरे में
तुमर, तुम्मर (१२३, १८६, १६०) १ देवता २ गधर्व, तुम्वर
तुव (२७३) तुझे
तुव पाही (१२५) तेरे पास
तुहा थिय (२८०) तेरे से
तुहारा (११, १५) तेरे
तुहारिय (१२१) तुम्हारी
तुहारोय (२६५) तुम्हारा
तुहाळ, तुहाळा, तुहाळो (४, ११, २५७, २६८, २७५, २६१) तेरा, तुम्हारा
तूझ (१३२) तेरे
तूझ तणाह (२५५) आपका, तेरा
तूझ थी (३००) तेरे से
तूझ विसै (११६, २८२) तेरे में
तेज (१७३) अग्नि
तेज अनार (११६) तेज पुंज
तेम (२७६) वैसा ही, उसी प्रकार
तै (१२१) तूने
तो (८, ११७, १२२, १८७, १८६, ३०८, ३३४) १ तेरे, तुम्हारे २ तुझे ३ तुम्हारी
तो (६,) फिर, तब, उस दशा में (एक अव्यय)
तो कना (३०८) तेरे से, तेरे पास
तोर (५१, १७६, १८०, १६२, २२७, २८६) तेरी, तुम्हारी
तोरा (५, १८५, १६१, २८७) तेरा, तेरे
तोराय (१२६, १८३) १ तेरे सम्मुख, २ तेरा
तोरिय गत्त (१२०) तेरी गति
तो विण (१११) तेरे बिना
त्या (२२७, २२८, २३०, २३१, २३२) उसको, उनको, उनके
त्यार (३६) तय्यार
त्युं (१२५) तैसे
त्रणै गुण (१२७) तीनों गुण— सत्त्व, रज, तम

त्रपत (१११) तृप्ति
त्रय-रूप (११) त्रिमूर्ति (ब्रह्मा विष्णु और शिव)
त्रासै (११५) डर कर भाग जाते हैं।
त्रिकाल (१४२) १ तीनों काल—भूत, वर्तमान और भविष्य २ तीनों समय—प्रातः मध्याह्न और सायं
त्रिकाल-नरेस (१४२) तीनों कालों का स्वामी
त्रिखा (२१०, २ २) १. तृषा २. तृष्णा
त्रिजग (१८१) १ त्रिविध जगत २ त्रैलोक्य—स्वर्ग, पृथ्वी और पाताल
त्रिखो (२०८) तृषा
त्रिभंगिय (२७८) १ ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय त्रिपुटी २ श्रीकृष्ण ३ त्रिभंगी मुद्रा में खड़े बंसी बजाते हुए श्रीकृष्ण
त्रिभुवन्न (५८) तीन लोक—स्वर्ग पृथ्वी और पाताल
त्रिभूवण-चंद (८७) त्रिभुवन चंद्र
त्रिविस्टप (३१) स्वर्ग त्रिविष्टप
त्रीक्रम (१ ७ २११) त्रिविक्रम वामन
त्रीगुण-ईस (२१६) त्रिगुणात्मक सृष्टि का ईश्वर।

थ

थंभ (९१) खंभ
थंभावण (९१) स्थिर रखने वाला
थइ (२०१) होकर
थकी (५२) है
थप्पी (२८) स्थापित किया
थळेसर (१७४) थलचर
थांन (२८) स्थान
थांभा विण थंभण (१२४) आधार के बिना ठहराने वाला
थापण (१६०) १ स्थापना २ स्थापना करके
थाय (२०५, २८२) हो सकता, हो जाय
थारा (६ १११) तेरे, तेरा तुम्हारा
थारी (१०१) तुम्हारी, तेरी
थावर (२२७) स्थावर
थावै (१५२) हो जाती है
था सूं (१२१) तेरे से आपसे
थियै (११८) हो जाता है
थीय (२७६) हुए
थीर (१६०) स्थिर
थूल (१७४ २२२) स्थूल

द

दडवत (११०) साष्टाग प्रणाम
दइता-दम (१०६) दैत्यो का दमन करने वाला
दइता-दव (११०) दैत्यों का दमन करने वाला
दईत (२४, २७) दैत्य
दईत (४२) रावण
दईता (२१) दैत्यो से
दईव (३०१) देव
दढा (२२) १. दातों से २ दृढ़ता से
दतदेव (८८) दत्तात्रेय
दतात्रय (५६) दत्तात्रेय
दतार (१४४) दानी
दव (४१, ४३) उदधि, समुद्र
दधी (२८३) उदधि
दधी घण (१५३) ससार रूपी महा समुद्र
दमै (१०६) दमन करके
दमोदर (१२,) दामोदर, श्रीकृष्ण
दम्म (१५७) १ प्राण २ नाश
दम्मै (१६१) दमन करते हैं
दरवेस (२५२) साधु
दळै (४३) मार दिये
दळ्या (२७) नाश किया
दसण (१०४) दात
दसै दिगपाळ (१३६) दशो दिक्पाल, दस दिशाओ के रक्षक दस देवता
दहै (२१४) जला देता है
दांण (३०, १६७) दान
दाणव (१८, २०,३०) दानव
दाख (२६४) दिखाओ
दाखव (१७, २७१, २७५, २८३) देखकर, दिखाकर, देखू, दिखाते हैं।
दाखवै (२०८)१कहता है,२ कह कर, ३ कहता हुआ
दाखै (१२६, २००) कहता है
दाखो (३४२) कहा
दागियो (३३८) दाग दिया
दाब्यो (३०) दवाया
दारु (२६६) काष्ठ
दाळद्र (२२२) दारिद्र्य
दिगमूढ (१७) दिङ्मूढ, जिसे दिग्भ्रम हो गया हो
दिखाड़िय (२६०) दिखा सकते हैं
दिखावउ (१२७) दिखाइये
दिठो (२६४, २८३) देख लिया
दिधा (१७६) दिया
दिधी (४२, २५४) दी

दिनेस (३७) सूर्य दिनेश
दिपन्त (३४) प्रकाशमय
दियण (२) देने वाली
दियौ (८) देऊ ?
दियै (२२१) करते हैं देते हैं
दिल-कूटल (३४१) दिल के कुटिल
दिषाड़ (१०६) समझा कर
दिस्ट (६२) दृष्टि
दी (१ , ३०४ ३३४ ३४५) दिन
दीठउ (२६८, २७७) देखा
दीठौ (२७१) देखा
दीठोय (१६२) दर्शन किये
दीध (२६ ११ ३ ५) दिया
दीधउ (२७) दिया
दीधस (२५४) दिया
दीधा (३०१) दिया
दीधौ (२७ ३४६) दिया
दीरघ (८१) दीर्घ
दीह (११६) दिन
दुमाल (१८५) जगद्‍याल
दुई (१७५ ३ २) दो
दु करोड़ (४) दो करोड़
दुख भंजण (१४ १ ५) दुखों का नाश करने वाला
दुज (१६, १६१) द्विज
दुज पंख (७६) पक्ष
दुसरांम (८१) परशुराम
दुसरांम (१३) परशुराम
दुद्दिव (२११) दिनेश सूर्य
दुवादस (२३४) द्वादश
दुसटां-दलण (६४) दुष्टों का दलन करने वाला
दुस्ट-भंजण (१८१) दुष्टों का नाश करने वाला
दूजा (३११) दूसरे
दूजो (८) दूसरा
दूणागिर (२२१) द्रोणागिरि
देवण-मोख (८८) मोक्ष देने वाला
देवण देस (८५) नाश करने वाला
देवत (२६६) देवताओं में
देव (४३ ५४ १६८) देव
दोख (८८) १ दोष २ मिलाप
दौ (२) दीजिये
द्रवीड़ (४२) द्रविड़
द्रजोण (४६) दुर्योधन
द्रढ़ (१५६) दृढ़
द्रवै (२३०) द्रवता है

ध

धंख (१४२) ईर्ष्या
धकती (२१८) धधकती हुई
धन्ख (७२) ध्यान
धणी (१३०,१३१) प्रभु

वनतर (१२, ५७) धन्वन्तरि
धनूस (३५) धनुष्य
धनेस (३७) कुबेर
धमळ (१८६) १ धवल, उज्वल
२ धवल रागिनी
धर (५,६,१५६,१८८,१८६)१ पृथ्वी
२ ससार
धरणीधर (६३, १०१, ३४२)
धरणीधर भगवान्
धरत (१८६) धरते हैं
धरिया (१४) धारण किया
धरी (४१) बनाई
धरेस (१४६) धरते हैं
धरें (३४, ४४, ४८, १४६, १६०,
१७६, २३५) धारण करते हैं
धरचा (३२७) धारण करने का
धरयो (३६) धारण किया
धात (१८५) धातु
धायें (३७) आये
धार (४१) रखकर
धारण-धीर (६२) धीरज धारण
करने वाला
धारें (१०१) धारण करके
धारें तो (१३०) यदि चाहे तो,
यदि धार ले तो
धियावत (१५१,२३५)ध्यान धरते हैं

धीणूं (२१३) धेनु
धीस (१४२) अधीश्वर
धुताइय (२७१) धूर्तता
धुप्प (१६६) धूप
धुर (३०७) आदि में
धुरू (२२१) ध्रुव
धूत (२७१) धूर्त
ध्यावे (१८५) ध्यान धरते हैं
ध्रम (५८, ३२५) धर्म
ध्रम्म (१७१, २३५) १ धर्म
२ धर्मराज

न

नकळक (२२१) निष्कलक
न को (३०६) नही, न तो
न कोय (१३१) कोई नही
नछत्री (६३) क्षत्रियो मे रहित
नजीक (२८१) निकट
न पातरो (३४२) भूल मत
न पार पडोय (१३६) पार न पा
सके
न पीडे (३३०) कष्ट नहीं पहुँचाये,
नाश नही करे
न बूझव (२६०) समझ में नहीं
आता

न भूसव (२६६) मत भुलाइये
नमां (१) नमन करता हूँ
न मेल्हु ह (२५७) नहीं छोड़
नमि (१०६) नमस्कार करके
नयणां (११२) नेत्रों से
नर (६६) मनुष्य
नर तसु (२५०) मनुष्य शरीर
नर-नारयण (६०) नर-नारायण
नर लोय (१५६) १ नर लोक
२ स्त्री-पुरुष
नर-संघरण-हाकिणहार(६६) श्रीकृष्ण
नरसिंघ (८२) नृसिंह अवतार
न लाधै (११२) नहीं मिल सकता
नव (२२० २८८) नहीं
नव मुक्ये (१४६) मत छोड़िये
नवि (१६१) नौ ही
नवी निध (२११) नौ निधि
न व्यापै (१२६) नहीं होता
नसंक (१४१) भय रहित
न संभरै (११४) स्मरण न कर सके
नह (१२०, १३०) नहीं
नह पाईयो (१४६) नहीं पाया
नह बंधवी (१५०) नहीं बँधे
नहीं को तोसी (११८) कोई तुलना
करने वाला नहीं है
नहीं सहवाय (२०५) सहा नहीं जाता

नां (१८६, ३०८) का, की (कर्म
और सम्प्रदान की विभक्ति)
नांख परो (२७६) दूर कर दीजिये
नांमि (२०८) नाम से, नाम का जप
करते हैं
नांय (१६१) नहीं
नामां (२६६) नामों में
नाची (१०६) नाच करके
नृत्य करके
नाथ अनाथांह(२५६)अनाथों के नाथ
नाद (८६२) नाद सहि
नामै (१८४) नमन करते हैं
नारसिंघ (१३) नृसिंह
नारीयण (१८८) नारायण
नास (१६६) नासिका
नासही (२०६) १ नाश हो जाता है,
२ नाश हो जायगा
नासारंभ (१ २) नाश किया
नासै (२०६) नाश हो जाता है
नाह (१६६) १ पुरुष २ नाथ
निकंद (५४) नाश करके
निकंदन (६४) संहार करने वाला
निकलंक (८५, २३१) १ कल्कि
अवतार २ निष्कलंक
निकलंकिय (६६) कल्कि अवतार
निकाम (१४२) काम रहित

निकूल (२४६) नकुल
निखात (८४, ८६) खान, खानि
निगम (६, ७, १३५, १६१, २११) १ वेद, २. परमात्मा
निगम्म (५५, ६५, ७८, ८६, १३६, २८६) वेद
निगेम (७४) स्रोत, निर्गम
निद्ध (२०१) निधि
निपाप (१००, १०१, १०२, ११०) निष्पाप
निपाय (२५५) उत्पन्न करते हैं
निपाविय (१५६, १७५) उत्पन्न किया
निमूळ (१४५) मूल रहित
निमेख (३४२) निमिष
नियारो (२३०) अलग
निरकार (६४) निराकार
निरखा (२७१) देखू
निरगात (२४२) निराकार
निरग्गुण (६४) निर्गुण
निरणाह (२०३) खाये पिये विना, निरान्न
निरधार (६१, ६४, ३४६) निश्चय, अन्य आधार से रहित, निराधार
निरभ्भय (४०) निर्भय
निरमै (१२५) निर्माण कर
निरम्मळ (७४) निर्मल
निरळ ग (६७) कारण रहित
निरलेप (१८४) निस्पृह
निरसक (८५) नि शक
निराळ (१४२) निराले
निरोहर (२०) समुद्र
निवाण-जग (१२५) ससार समुद्र
निवारण (५७) निवारण करनेवाला
निसक (३५) निर्भय
निस-प्रहर (१८६) अहर्निश
निस-अहो (१६०) अहर्निश
निसाख (१४५) शाखा रहित
निसाळगै (३५०) नहीं जला सकती
नीगमण (१२४) निगम, वेद
नीभावण (१२४) नाश करने वाला
नीरावण (१२४) उत्पन्न करने वाला
नीर (३२६) प्रतिष्ठा
नील (१४०) श्याम
नूर (८५, २६५) प्रकाश, तेज, अस्तित्व
नेत (७) नेति, अत नही
नेस (२७५) स्थान
नैडो (२३०) समीप
नकासुर (५०) नरकासुर
नग्ग (२५७) नरक
न्हायो (३४६) स्नान क्रिया

प

पंच प्रन्न (७) पांच रंग
पंचामिठय (४१) द्रौपदी की
पखाळ (१८) धो करके
पखाळत (२३१) प्रक्षालन करते हैं
परवाळो (१२१) प्रक्षालन कर
परवाळ (११) प्रक्षालन करती है।
पखें (२६६) बिना
पग (२३७ २३८, २३१, २४०
  २४१, २४२ २४३, २४४
  २४१ २४७, २४१, २५०
  २५१ २५६ २५३ २५६)
  पांव, चरण
पगरस्स (२३१) चरणामृत
पगरैण (२४६) चरण रज
पग-वास (२४७) चरण-शरण
पगाँ (१८ २३४ २४८) १ पैरों से
  २ चरण-युगल
पग्ग (२३६ २४७) पांव
पटंतर (३०७) १ सूक्ष्म २ भेद
पटोळ (३११) रेशमी वस्त्र में
पङ्हो (२६८ २७३) पड़ी
पङ्होय (२७१) पड़ी
पड्यो (४१, ४४) पड़ा
पड़ै (१४८) पड़ता है
पतंग (२६६) सूर्य

पत-मत (३३६) १ पति में बुद्धि
  २ पति भक्ति
पताक (२३४) ध्वजा पताका
पतीत उधारण (८२) पतितोद्धारक
पत्त (४०) १ प्रतिष्ठा २ प्रतिज्ञा
पदम्म (४१ ७०, २३४) १ गणित
  में सोलहवें स्थान की संख्या
  १०० नील, २ पद्म नामक
  चिह्न जो भाग्यशाली के पांव
  में होता है, ३ पद्म कमल
पन्नंगह (२५८) पन्नग, सर्प
पन्न (२७४) पत्र
पमाड़ (११६) प्राप्त कराइये
पमै (३१) १ प्राप्त किया २ प्राप्त
  करवाया
पयपत (१२७, १२०) कहते हैं
  पाते हैं
पयपै (२८२) कहता है
पयाळ (२२) पाताल
परठ्ठिया (३००) बनाया, रचना का
परपंच (३ ४) १ प्रपंच, २ विस्तार
परब्ब (२६१) प्रभु
परम्म (२७२) प्रभु
परम्म (१६, ७ ८२, ८६) परम
परम्म-निवास(२ २३) मोक्ष स्थान

परम्म-प्रवीत (२४८) परम पवित्र
परहर (३३७, ३३८,३३९) छोडकर
परा (४) निकटस्थ निश्चय-सूचक 'अरो' अथवा 'उरो' अव्ययो के विरुद्ध प्रयोग में आने वाला दूरस्थ निश्चय-सूचक 'परो' अव्यय। 'परी' इसका स्त्रीलिंग और 'परा' इसका बहुवचन, रूप है। उदा०— उरो आ = आजा। परो जा = चला जा।
परि (२२२) समान
परिधान (५१) वस्त्र
परीखत (४९) परीक्षित
पवन्न (२७२) पवन
पसाय (३) प्रसाद, कृपा
पह (६५) प्रभु
पहिलोय (१५५) १ पहला २ आदि में
पाण (१२७, २४३, २६६) हाथ
पाण (१५४) १ भी, भाँति-भाँति
पाणिय (२७२) पानी
पाणिया (२१०) पानी से
पामत (१२२, १३८) पाता है
पामीजे (२०१) प्राप्त होती है, प्राप्त की जा सकती है

पामै (१३५, ३६१) पाता है, पा सकता है
पाईयो (३४९) पाया, प्राप्त किया।
पाखे (३४७) विना, रहित
पाज (४१, ७९) १ पुल २ किनारा
पाटलो (५) पाटी, तख्ती
पाथर (२२०) पत्थर
पाथर चे (३०७) पत्थर के
पाप करतो (११७) पाप करने वाला
पाय (३, ४१) पैर
पार (१२२) अंत, पार
पारिजात (१२३) कल्पवृक्ष
पाळ (१७१) पाल, वृक्षों आदि की रक्षा का साधन
पाले (२१४) रोकता है
पाळ्या (२८) पालन किया
पावत (१३६) पाते हैं
पाहि (२७४) पास
पाही (१९२) पाते हैं
पिंड (३०, १६४, ३४०) देह, शरीर
पियारो (३५१) प्यारा
पियाळ (१५०, २४१, २७२) पाताल
पियाळ-पुरेस (१५०) पाताल निवासी
पीठ-धरण (५) धरणी की पीठ, पृथ्वी तल

पोड़वा (२८२) युक्त देने के लिए
पीवाँ (२४७) पीने से
पीय (२७६) प्रीतम
पुछावत (२७६) पुछा करता रहा है
पुछे (२३५) पूछती है
पुणेवाँ (२७२) पूरे
पुणत (१२८) कहते हुए
पुणि (३६०) कथन कर
पुणां (२) कहूं वर्णन कर
पुणै (१२, ४८, ३१०) कहता है
पुन (६१) और, पुनि
पुप्त (१६५) पुष्प
पुरंदर (८१, ११८) इन्द्र
पुरक्स (१७०) पुरुष
पुरक्स पुराण (२६२) पुराण पुरुष
पुरक्स रतन (७३) पुरुष-रत्न
पुरे (५१) पूर्ति की
पुहप (१ ३ १८८, २६६) पुष्प
पुगे (१८६) पहुँचेगी
पूगो (३०६) पहुँचा सफल हुआ
पूछां (३१०) पूछता है
पूर (६१) पूर्ण करने वाला
पूरक्स प्रीत (२८४) प्राण पुरुष
पूरवे ३१६) पूरा करता है
पख (१ २) देखकर
पेखण (११६) देखने के लिये
पेखां (२७४ २७८) देखू
पेस (३१ ३३७) १ के बी २ प्रवेश
पैठ (८२) प्रवेश करके
पैठो (१४६) प्रवेश किया
पो (३६१) प्रभात
पोकार (२१२) पुकार
पोम (३०७) पिरोदे
पोहकर मम (१०६)पुष्कर मय
प्रकर्त (२१४) प्रकृति, माया
प्रकर्त राषाल (२८७) मायापति
प्रकासण (२६३) प्रकाश करने वाला
प्रकासत (१६१) कहते है
प्रकासे (१०३) वाकर.
प्रकाशित कर
प्रगट्टत (२६४) प्रगट हो जाता है
प्रगट्टिस (२८४) प्रगट होगा
प्रजाळहु (१७८) मिटाइये जलाइये
प्रत (२८) प्रत्येक
प्रतक्स (८६ २७३ २६५) प्रत्यक्ष
प्रतखेत (७) १ क्षेत्र के प्रति
२ प्रति क्षेत्र
प्रतपाळ (६४ ६५) प्रतिपालन
करने वाला
प्रथमिय (१३, २६४)पृथ्वी
प्रथी (१७२) पृथ्वी
प्रथू, मिथू (१२, ८६) पृथु, विष्णु

प्रद्मन (८४) प्रद्युम्न
प्रद्मन-तात (८५) श्रीकृष्ण
प्रपोटाय (२७८) बुदबुदे
प्रभ (२६४) प्रभु
प्रभ्भ (१८२, २६३, २६४) प्रभु
प्रम (६४, ७४) परम
प्रमेस (१६६) परमेश्वर
प्रमेसर (१६) परमेश्वर
प्रमोदघण (२३३) आनन्दघन
प्रम्म (५६, २२५, २३५, २७८ २८७) परम
प्रलोक (१५६) परलोक
प्रवीत (३८) पवित्र
प्रसण (३३०) शत्रु
प्रसनीग्रभ (१२) पृश्निगर्भ, श्रीकृष्ण
प्रसन्नियग्रभ्भ (८३) पृश्निगर्भ
प्राणियां (३६०) प्राणी
प्राक्रत (१६२) साधारण
प्राक्रम (१८४) पराक्रम
प्राग (१६१, ३४६) प्रयाग
प्राण-पुरक्ख (१७३) प्राण-पुरुष
प्रित्थु (६१) पृथु राजा

फ

फर मती (३१७) भटक मत
फरसूधर (२३३) परशुराम
फरस्सउ (३२) परशु
फेरा (४४) बार, मर्तबा

ब

बग (६८) १ ढग २ रहस्य
बध (४३) बधन
बधाड (४०) बाधा
बंध्यो (४३) बाधा
बगस (१२८) क्षमा कीजिये
बभीखण (६३, २००) विभीषण
बळता (३२२) जलते हुए
बळवट (३६) शक्तिशाली
बळवुद्ध (२०) महाबली
बळि (३३) बलवान
बळि उद्धार (११२) बलि का उद्धार करने वाला
बळि-बंधण (१४) १ बलि को बांधने वाला २ बल बंधाने वाला
बळोभद्र (७७) बलभद्र, बलराम
बहुनामिय (७१) बहु नाम वाला
बहो (६६, १६०) बहुत
बहोडिय (४२) वापस ले आये, लौटा लाये
बहोनामी (१३४) बहुनामी
बाधण (५८) बांधने के लिये
बाध्यो (३०) बांधा

बाव (२०) बाहुपाश
बाधा (११२) बाँध दिया बाँध लिया
बापजी (१२८) पिताजी
बाल (१६४) बालक
बालापण (२०५) बचपन
बाला (२) १ बालस्वरूप
२ प्रधान स्वरूप ३ देवी
बावम (५८) बावनाक्षर
बाहुन-जुद्ध (२०) बाहु युद्ध
बिइच (१८४) बिरुद
बियां, बिया (२१७, ११८) दूसरा,
अतिरिक्त
बिहुंसू (२०) दोनों से
बिहुं (२) दोनों
बिहुं-राह (२४८) १ निवृत्ति और
प्रवृत्तिमार्ग २ भक्ति और
ज्ञान ३ मार्ग और अमार्ग
४ हिंदु और मुसलमान
बीअर्मन (२) १ गायत्री २ विद्युत्शक्ति
बुंद (२१२) बिन्दु सृष्टि
बुझण (१२४) १ बतलाइये,
२ पूछता है
बुझे (२११) पूछता है
बुझे (५८) ज्ञान समझे समझ सकी
बुध (३२६) बुद्धि
बुध-बाहुरा (२०४) बुद्धि हीन

बुधी (२४०) १ बुद्धि, २ सरस्वती
बूझत (१३८) जानते हैं
बूड़ला (२०४) डूबेंगे
बे (१०७, ११४, ३४८) १ दो
२ दोनों
बेहु (२४०) दोनों
बैसीय (२८०) बैठकर
बोध (६५) बुद्ध अवतार
बोह (५८, ३२८) १ फिर भी, तो भी
२ अनेक, बहुत
बोहु बार (४४) बहुत बार
ब्रवे (३१) कहते हैं
ब्रहमंड (५० २८८) ब्रह्माण्ड
ब्रहम्म (१२ ४३ २६१) ब्रह्मा
ब्रहमाणी (२) १ सरस्वती, ब्रह्माणी
२ दुर्गा
ब्रहम्मगिमान (२६२) ब्रह्मज्ञान
ब्रहम्मसपूत (२६६) ब्रह्मा के पुत्र,
सनकादिक
ब्रहम्माय (१६, १५, १७७, १८३)
ब्रह्मा

भ

भंगयो (३५) तोड़ा
भंजन-भीर (५२) दुखों का ना
करने वाला

भजै (२५५) नाश करके
भक्त-परायण (१०२) भक्तों को आश्रय देने वाला, विष्णु भगवान
भक्ख (८७) भक्ष्य
भगताकज (१८४) भक्तो के लिए
भगता वस (७४) भक्ताधीन
भगत्त (१७८, २६१) भक्त
भगै (२२३) भग जाते हैं
भजना (३२४) भजने मे, भजते हुए
भजै (१८) भाग गये
भणंता (२०१, २३०) बोलने से, जपने से
भणीं (१२०) गाकर, कहकर
भणाय (३१८) उच्चारण करवाकर, बोलने को प्रेरित कर
भणि (२४१) निमित्त, लिये, की
भणी (३४४) को, प्रति (विभक्ति)
भणै (१०४, १२४, १७६, २६६) १ वर्णन करके, २ कहता है, कथन करता है
भणे भण (२१८, ३१६) बारबार बोल कर, बारम्बार उच्चारण कर
भमतो (२५८) भटकते हुए
भयो (३१) हुआ
भर बाथा (३२२) बाहुपाश में आये जितना, बाथ भर करके
भरम्म (२८६) भ्रम
भल (१६७) भला
भळावै (३०४) सुपुर्द करता है
भव (६५) ससार
भव-तारण (६२) ससार रूपी समुद्र से पार लगाने वाला
भसम्म (८७) १ भस्म, २ नाश
भाग्योह (२५४) तोडा
भाज घडं (१८३) नाश करके पुन बनाने वाला
भाजण (८१, ८४, १७८, २५५) मिटाने वाला, काटने वाला, तोडने वाला २ नाश करने के लिये
भाजण-घडण (१८५) नाश और रचना करने वाला
भाज परा (४) १ मिटाकर २ दूर कर दीजिये
भाण (१६२, २५३) भानु, सूर्य
भाख (२६४) कहा
भाजै (३००) भागता है, दूर होता है
भार-अड्ढार (१८६) अठारह भार वनस्पति

मथ्यौ (२५, २६) मथन किया
मदन्न (६८) कामदेव
मद्द (७२, ७३) मद, नशा
मध (२८६) मध्य
मधु (२६८) मधुर
मधु कीट (२०) मधु और कैटभ
मधु कीटभ (८७) मधु कैटभ
मधु-मारण (१०३) मधु दैत्य को मारने वाला
मनछा (११५) वासना, इच्छा
मनसा (६१) इच्छा, वासना
मनाविय (४३) मनाया
मनिछा (१७४) मन की इच्छा
मन्न (१८०) मन
मन्न (२१०) मान ले, समझ ले
मम्मत (२२४) ममता
मयक (८५) चन्द्र
मरजाद (७८) मर्यादा
मरद्द (२७०) पौरुष
मरद्दण (७३) मदन करने वाला
मरद्द-महेळिय (२७०) नर नारियो मे
म राख (२७१) मत रखिये
म राच (३११) मत कर, प्रवत्त न हो
मळी (२८८) मिली

म सनाय (२७३) मत छिपिये
महणमथ (११३) समुद्र का मथन करने वाला
महत (१३३) बडेरा, प्रधान
महमहण (१८६, २६६, ३१६, ३४७, १ महार्णव २. महामहनीय, परब्रह्म
महम्नग्ग (१३) १ महार्णव, महा समुद्र २ परब्रह्म
महम्माया (३९) महामाया, सीता
महराण (२५ २६) महार्णव, समुद्र
महा गिड (७२) महा वाराह
महा जळ (२१, २२) अथाह समुद्र
महा जोध (३६) बडा योद्धा
महा तत (८४, १४०) महातत्त्व
महा दत (१६०) महा दान
महा नग (४१) बडा पर्वत
महारउ (२७६) मेरा
महारिख (३५) महाऋषि, महर्षि
महारिय (१८०) मेरी
मही (१६५) मे
मही-साह (५४) पृथ्वी को धारण करने वाला
महोरत (१३०) मुहूर्त्त
मा (२७७) मे

मांगां (१२१) मांगता हूँ
मांग्यो (१६२) मांगा
मांझ (४४, २२५, २६५) म, मध्य
मांझम (११६) में
मांड (११३ ११४) प्रतिष्ठित करके
स्थापित करके
मांण (१६७) मान
मांणसां (६) मनुष्यों का
मांणसां (६६) मनुष्यों में
मांम (११०) माना जाता है
मांहळा (२१७) मेरा
माधा (११२) माधव
माय (४६) माता देवकी
मार उपावै (१९) नष्ट करके
उत्पन्न करके
मार जिवाड़ (१२५) मारने और
जिलाने वाला
मारण (५६, ६१) मारने वाला
२ मारने को
माव (२१) बहुत
माह (१८०) महान्
माहर (१३२) मेरा
माहरा (११) मेरा
माहरैं (११५) मेरे
माहरो (२७६) मेरा
माहव (२६५) माधव

मिटइ (१५६) मिटने पर
मिळाविय (२८)मिला दिया
मिळे (६८) मिल गये
मिळै (२३१) मिलती है
मुकम (२१७) मुकुन्द
मुखन (३२) मुख से
मुखां (१४७) मुख से
मुखांमुख (२७८) प्रत्यक्ष
मुगट्ट (६६) मुकुट
मुगत (२३१) मोक्ष
मुगत्त (६) मुक्ति
मुगति (२६१) मुक्ति
मुणो (१ ० २६५) वर्णन करता हूँ
कहता हूँ
मुणाळ (२६६) कहा
मुताहळ माळ (२४१) मोतियों की
माला मुक्ता माल
मुनेस (१४३) मुनियों के ईश
मुरत (२६३) मूर्ति
मुर लोक (१२५) तीनों लोक
मुस्कै (१ ३) मुस्कान करके मंद
मुस्कान द्वारा
मूक परी (२७१) छोड़दे
मूझ तणा (४) मेरे
मेट (६१) मिटाने वाला
मेटण (६६) मिटाने वाला

मेटण-व्याध (८७) व्याधियों को मिटाने वाला
मेटवा (५, ११,) मिटाने के लिये
मेर (३११) मेरु पर्वत
मेलहु (२२३) छोड़ूगा
मल्हा (१२३) धरू
मेल्है (२४१) रखते हैं
मा (४, ११७, २६६, ३०६) १ मुझे २ मेरा
मोचही (३५७) नाश हो जाता है
मोरो (१०७) मेरा
म्रगकासव (५६) हिरण्यकशिपु
म्रगला (११५) मृग समूह
म्रम्म (५६, २३६, २८३) मर्म
म्रिणाल (१४३) पद्मनाभ
म्हारा (१२८) मेरे
म्होटा (१६४) बडे

य

यसा (२०, २४१) . जैसे, ऐसे, २ समान

र

रग (३३) इज्जत, प्रतिष्ठा
रच (१४६) किंचित्
र (२७) और
रक्ख (२४०) ऋषि
रखावण (३३) रखने के लिये
रखाविस (१११, ११३) १ रखूगा, २ रखवाऊगा
रखी (४६) रक्षा की
रखे (२१६, २८२) १ कही २ कही ऐसा न हो
रच्यो (८६) स्थापित किया
रजा (१२५) आज्ञा
रज्जियो (१९६) स्वामी
रटता २२१) रटते-रटते
रटता थका (२००) रटते हुए
रत (१८८) लीन
रतन्न (२६) रत्न
रता (२२६) रत, अनुरक्त
रथी-अरण (२५७) सूर्य
रमाड म (२७०) मत भुलाइये
रम्मणहार (१७६) रमने वाला
रम्यो (१५३) रमता रहा
रव्वियो (११६) इधर उधर भटका
रव (३६) शब्द
रसण (२२१, ३१३) १ रसना २ रसना द्वारा
रसणा (३३२) जीभ से
रसणाह (१२२) जीभ से
रस्स (६३) रस

रहंसिम (४०) मार वाला
रहमाण (२२१) ईश्वर, रहमान
रहस (१६२) रहस्य
रहस्स (५१) रहस्य
रहत (२११) रहता है
रहै (१५४) रह जाय
रांमण (६३) रावण
रांमेस (३१६) रामेश्वर
रा (१२५ २ ४ २०५,२०६ २०७ २०८, २४३) का, के (विभक्ति)
राउर (२५३) आपके
राख (११६) रखा कर
राक्षस (८० २२२) राक्षस
राखिम (५०) रख लिया
राखिस (१११) रख गा
राख्यो (२६) रखा को
राम-बिकु ठ (१२) वैकुण्ठपति विष्णु
रावण रिपु (२१६) राम
राहु (२५८) राहु
रिक्खम (१२) ऋषभावतार
रिखम (६२) ऋषभावतार
रिख (३४ ३६, ६२ ६३ १५१ २३७) ऋषि
रिखभ्भ (८३) ऋषभावतार
रिझवै (१८६) रिझाये प्रसन्न करे
रिणायर (२६ ७७) रत्नाकर,समुद्र
रिवा (८८१, ३६३ ३०३) हुवा
रिवै (११३) हुवा में
रिवो (१ ८ हुवा
रिय (२३५) की (विभक्ति)
रिव (८० १४६ १५३) रवि
रीझ (२२८) प्रेम
रीझवाँ (१८३) प्रसन्न कर
रीय (२४) (री विभक्ति) की
रीस (१४६) क्रोध
रुखे (२११) रखता है रवि रखता है
रुवत (३४०) रोता हुआ
रुवाहु (११५) हुवा
रुद्र (५२,५३) महादेव
रूप-अतीत (६) रूप से रहित
रेण (२३५) रेणु धूलि
रेर (३२६) ध्वनि
रेस (८५,)१ नाश, २ हानि
रेस (२२) १ रसातल २ नाश होती हुई, ३ हुई को ४ रही को
रै (३४३) के (विभक्ति)
रो (१६६ १६८ २०३ १४, ९२ ३३८ ३५६) का (विभक्ति)
रोर (१२६) रौरव
रोळ'र (२६) नष्ट कर
रोळण (७१) नाश करने वाला

ल

लई (२६) लेकर
लग (६८) लिग, चिन्ह
लखन्न-अग्रज्ज (७६) श्रीराम
लखमीवर (१३४) लक्ष्मीपति
लखम्मरण-वीर (८२०) लक्ष्मरण के भाई श्रीराम
लखम्मिय (१३६, २४०) लक्ष्मी
लखम्मिय-कत (४७) लक्ष्मीपति
लखम्मिय-नाह (८२) लक्ष्मीपति
लख्यो (२७६, २९०) पहिचान लिया, लख लिया
लगाड (२७५) लगाइये
लगाडिय (२७७) लगाकर
लगाय (४१) लगा लिया
लद्धोहि (२६३) प्राप्त हुए हैं
लवो (२६८) पाया
लब्भै, लम्भै (५) मिलता है
लकै (३) झुक कर
लवलेस (१५२) किंचित्
लहत (२५२) १. पाते हैं २ करते है
लहा (१२०, २६०) पाऊँ
लहि (१५) प्राप्त कर
लहै (५३, ६७, १३८ १५२) पाते हैं
लाखाग्रह (४५) लाक्षागृह
लागा (२, ३) लगता हूँ
लागै (१२३) स्पर्श करती है, लगती हैं
लावो (२८१, ३१४, ३१५) मिला, प्राप्त हुआ
लार (३०२) पीछे
लावरग (६८) लावण्य
लिगार (१७९) किंचित्, थोडा
लिघा (२६, ४३) लिया
लिघो (४१) लिया
लियत (१९७) लेते रहते हैं
लियता (२११) लेने से
लिरोजै (२१६) लिया जाय
लिवरावो (२१९) लेने दें, लेने की शक्ति दें
लिवै (२३६) लेते हैं
लीघ (१७७, २००) लिया, धारण किया
लीघा (३०२) लिये, लगा दिये
लीघो (३०, २०३) लिया
लील-विलास (६८) लीला विलास करने वाला
लेख (१३९) लेश, किञ्चित
लेखा नही (१३४) दिखाई नही देता, देखता नही
लोकालोक महा-ब्रहमड (१५४) छोटे वडे अनन्त ब्रह्माड, लोकालोक और महा ब्रह्माण्ड

लावण (१२८) लावन
लोपत (२२१) १ उल्लंघन करता है
२ विनाश करता है
लोह खड्ग (३१८) ताना लपका वे

व

वँभारण (२६३) पढ़ने में माता है
वर्मं (२१७) चाहते हैं
वंद (१०) नमस्कार करके
वस (४४) बाँसुरी बंसी
वडरान्‌ (१७३) विराट
वखांण (६४, १२६ २४३)
व्याख्यान, कीर्ति, स्तुति
वखोविय (३) नाश किया
वखोडिय (३- ४२) मार डाले
वखांड्डि (४४) बखाना
व (१३१) बड़ा
वड पात (१८) वट वृक्ष के पत्र पर
वटपत्र
वडम्म (१३६) बड़े
वड बात (८३) गुण कीर्ति
बड़ाई यश
वडाळ (२७ १४१) बड़े
वडाहि (२६७) बड़ा
वणाय (२४) बना कर
वणाविय (१६ १७७ २६७)
बना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसळ भगतां (१०७) भक्तवत्सल
वदन्न (६१) मुख
वदे (८६, १४६ १५१ १५२,
१६१ २१० २४३, २६८)
कहते हैं गाते हैं बखान करते
हैं उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७४) बढ़ाने के लिये
वन (३८) १ वर्ण स्वरूप २ वरन
वन (१६४) १ वन २ वर्ण
वप (८१ ६० २१५) शरीर
वपू (६१) शरीर
वप्प (१६३) शरीर
वयं (१८२) १ वय २ अवस्था
वयण (२ ७) वचन वाणी
वयण (१८८) विनती पुकार
वयणां (२३१) वचनों से
वरखा (७४) वर्षा
वरताविय (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-लाछ (८६, ६५) लक्ष्मीपति
वर-सीत (८७) सीतापति
वरियांम (८ ४१) म ह
वलमीक (२५४) वाल्मीकि

वळै (२२८) और, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२९९) रहती है
वसत्र (६६) वस्त्र
वसाविय (७३) १ वसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२९९) वसा हुआ
वसोकर (२७४) वश मे करने वाला
वसै (७, ११५, १७९) बसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारबार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१९८) मुंह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १९, २५, २६, २७, २८
२९, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ६) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विंधै (६) वीध डाला
विख (७२) विष
विखमो वार (२१०) विषम वेला
विखम्मिय (५१) विषम
विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (६१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (६) बिछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटबतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (६१,१३३,१८५,२१०,२९६,
३०८, ३५३) विना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २ गाय बैल
आदि पशु
विथार (२९५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियों से
प्राप्त होने वाला
विधूसण (७९, ७३, ८०) १ विध्वंश
करने वाला,, नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

वळै (२२८) मोर, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२६६) रहती है
वसत्र (६६) वस्त्र
वसाविय (२३) १ वसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२६६) बसा हुआ
वसोकर (२७४) वश मे करने वाला
वसै (७, ११५, १७६) वसता है
वहवार (१६) व्यवहार, व्यापार, कारबार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१६८) मुँह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १६, २५, २६, २७, २८ २६, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१) समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ६) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विधै (६) वीध डाला
विख (७२) विष
विखमी वार (२१०) विषम वेला
विखम्मिय (५१) विषम
विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (६१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (६) बिछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटवतो (३०८) भटकाया जारहा है भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (६१, १३३, १८५, २१०, २६६, ३०८, ३५३) बिना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २. गाय बैल आदि पशु
विथार (२६५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियो से प्राप्त होने वाला
विधू सण (१६, ७३, ८०) १ विध्वंश करने वाला, नाश करने वाला, २ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

सावण (३२८) सोवन
सोवइ (२२१) १ शयन करता है
२ विवाह करता है
साहु वड्डाव (३१८) धारा समया है

व

वंचएणा (६३) ठगने में आता है
वंछं (२१७) चाहते हैं
वंदि (१००) नमस्कार करके
वंस (४४) बांसुरी वंशी
वइराड (१७०) विराट
वक्खाण (६४, १२६ २८३)
व्याख्यान, कीर्ति, स्तुति
वगोविय (३०) नाश किया
वच्चोडिय (१८ ४०) मार डाला
वज्जाइ (४४) बजाया
व (२११) बड़ा
वड-पाय (१८) वट वृक्ष के पत्र पर
शयन
वड्डम्म (१३६) बड़े
वड्ड माण (८१) बुध कीर्ति
महान यश
वड्डाल (२७ १४१) बड़े
वड्डाहि (२६७) बड़ा
वणाय (२४) बना कर

वणाविय (१६ १७७ २६७)
बना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसल समर्दा (१०७) भक्तवत्सल
वदन्न (६१) मुख
वदे (८६, १४१ १५१ १५२,
१६१ २६० २४३, २६८)
कहते हैं गाते हैं, वर्णन करते
हैं उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७४) बढ़ाने के लिये
वन (३८) १ वर्ण स्वरूप २ वरण
वन्न (१६५) १ वन २ वर्ण
वप (८१ ६०, ६५) शरीर
वपू (६६) शरीर
वप्प (१६३) शरीर
वयं (१८७) १ वय २ अवस्था
वयण (२ ७) वचन वाणी
वयण (१८८) विनती पुकार
वयणां (१३२) वचनों से
वरसा (७४) वर्षा
वरताविय (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-नाथ (८६, ६२) लक्ष्मीपति
वर-सीत (८७) सीतापति
वरियाम (८ ४१) श्रेष्ठ
वल्मीक (२४४) वाल्मीकि

वळै (२२८) और, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२६६) रहती है
वसत्र (६६) वस्त्र
वसाविय (२३) १ बसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२६६) वसा हुआ
वसोकर (२७४) वश में करने वाला
वसै (७, ११५, १७६) बसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारबार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१६८) मुंह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १६, २५, २६, २७, २८
२६, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ६) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विधै (.६) वीध डाला
विख (७२) विष
विखमी वार (२१२) विषम वेला
विखम्मिय (४१) विषम
विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (६१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (६) विछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटबतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (६१,१३३,१८५,२१०,२६६,
३०८, ३५३) विना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २. गाय बैल
आदि पशु
विथार (२६५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियो मे
प्राप्त होने वाला
विधूसण (१६, ७३, ८०) १ विध्वंश
करने वाला, नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपूर्वक

सोभण (३२८) सोभन
सोपम (३२६) १ उत्पन्न करता है
२ विवाह करता है
साई कहाव (३१८) वारा कहता है

व

बँधाणा (२६३) पढ़ने में आता है
वखे (२२७) चाहते हैं
वंदे (१००) नमस्कार करके
वस (४४) बांसुरी बंसी
वइराट (१७३) विराट
वखाण (६४, १२६ २४३) व्याख्यान, कीर्ति, स्तुति
वगाविय (१) नाश किया
वखोड़िय (३- ४२) मार डाले
वजाड़ि (४४) बजाया
व (१३१) बड़ा
वड़-पान (१८) वट वृक्ष के पत्र पर वटपत्र
वड्डम्म (१३६) बड़े
वड नाव (८१) बड़ा कीर्ति महान यश
वडाळ (२७ १४३) बड़े
वडाहि (२६७) बड़ा
वणाय (२४) बना कर
वणाविय (१६ १७७ २६९) बना दिया
वणियो (२०६) बना हुआ है
वतसळ भगतां (३०७) भक्तवत्सल
वदन (६१) मुख
वदे (८६, १४१ १२१ १२२, १६१ २३० २४३, २६८) कहते हैं माने हैं, वर्णन करते हैं उच्चारण करते हैं
वधारिवा (१७४) बढ़ाने के लिये
वन्न (३८) १ वर्ण स्वरूप २ वर्ण
वन्न (१६४) १ वन २ वर्ण
वप (८१ ६०, २६३) शरीर
वपु (६६) शरीर
वप्प (१६२) शरीर
वयं (१८२) १ वय २ अवस्था
वयण (७) वचन वाणी
वयण (१८८) विनती पुकार
वयणां (*३२) वचनों से
वरखा (७४) वर्षा
वरतावण (६६) प्रवर्त करने वाला
वर-लाछ (८६, ६४) लक्ष्मीपति
वर-सीत (८७) सीतापति
वरियाम (८ २४१) श्रेष्ठ
वममाक (२८४) वाल्मीकि

वळै (२२८) और, फिर
वसती (३१०) रहने वाली
वसत (२६६) रहती है
वसत्र (६६) वस्त्र
वसाविय (२३) १ वसादिया
२ उत्पन्न किया ३ रक्षा की
वसियो (२६६) वसा हुआ
वसोकर (२७४) वश मे करने वाला
वसै (७, ११५, १७६) वसता है
वहवार (१६) व्यवहार,
व्यापार, कारवार
वहेलो (२७५) शीघ्र
वाचै (३३६) पढते हैं
वाण (१६८) मुँह से, वाणी द्वारा
वामण, वामन (८१) वामन अवतार
वाचण (२११) पढने से
वार (१६, १६, २५, २६, २७, २८
२६, ३०, ३१, ३२, ३३, ५१)
समय, अवसर, वार
वालखिला (२४५) वालखिल्य ऋषि
वास (२ ६) सुगन्धि
वासिठ (२४४) वसिष्ठ ऋषि
विधै (१६) वीध डाला
विख (७२) विष
विखमी वार (२१०) विपम वेला
विखम्मिय (५१) विपम
विखै (११२, २३२) विषय
विखै तो (११२) तेरे साथ, तेरे में
विखो (४४) सङ्कट
विगनान (६१) विज्ञान
विचार (१३५) भ्रम
विचार (१६२) समझ कर
विचारत (१३६) विचार करते हैं
विछूटा (६) विछुडे हुए
विछुटो (२१२) छूट गया
विटवतो (३०८) भटकाया जारहा है
भटकता हुआ
विडारण (८८) नाश करने वाला
विण (६१,१२३,१८५,२१०,२६६,
३०८, ३५३) विना, रहित
वित्त (१७०) १ धन २ गाय बैल
आदि पशु
विथार (२६५) विस्तार
विध (५५) विधान, विधि-विधान
विध (५६) ब्रह्मा
विध-लाधण (८७) विधियों से
प्राप्त होने वाला
विधू सण (५६, ७३, ८०) १ विध्वंश
करने वाला,,नाश करने वाला,
२ नाश करने के लिये
विधो-विध (२७१) विधिपर्वक

वुग्रो (३७) हुग्रा
वुछाव (३७) उत्सव
वेरिण (१००) शिखा, चोटी
वेर-अवेर (३२९) समय-कुसमय
वेळा (२६६) तरग, लहर
वेस (२७५) वेष, रूप
वेह (३२७) वेष, मानव-शरीर
वैद (२११) वैद्य
वैस (१६१, १६८) वैश्य
व्यापत (२२५) व्याप्त होता है
व्रक्ख (१७५) वृक्ष
व्रख (१८३) वृक्ष
व्रखभ (१२) १ वृषभ २ ऋषभ
व्रखा (१३२) वर्षा
व्रखे (५३) वर्षा की
व्रज्ज (७५) व्रज
व्रथा (३५३) वृथा
व्रद्ध (१६४, १८२) वृद्ध
व्रिदावन (७४) वृदावन
व्हारण (१७०) वाहन रथ, गाडी आदि
व्हार (२४) १ रक्षार्थ धावन २ पीछा करते हुए चोर आदि को पकडने की दौड-धूप अनुधावन ३ रक्षा, सम्हाल, वाहर
व्है (१०८) हो जाता है

स

सक (४३, २२०, २२१, २३३, ३५०) धाक, भय, डर
सकट-मेटरणहार (८८) सकट को मिटाने वाला
सकटा (३५०) सकट
सगराम (२३) सग्राम
सगाथ (३४५) साथ
सघार (२४, ३२, ३५, १८८) सहार, नाश
सघारिय (४२, ४३) नाश करके
सच (१०८) सचय करके
सतत (१८७) निरन्तर
सदरण-हाकरणहार (६६) रथ हाँकने वाला श्रीकृष्ण
सभरै (२३३) सुमिरण करले
सभार (३२४, ३३७, ३४४) सुमिरण कर, याद कर
सभारता (२०१) सुमिरण करने से
सभारिस (११, ६६, ११२) याद करूँगा
ससार-दवन्न (१८०) ससार रूपी दावाग्नि
स (२६३, २७५) १ सो, २ वह
स (२५) पदापूरक अव्यय

सग्गस (६८,१४६) गति माया
सकति (२६८) शक्ति
सर्का (६) सकता हूँ
मक्क (२४२ २५५) इन्द्र
सक्क (८७) इन्द्र
सकाज (८१) सहेतुक
सकाम (४०) काम के लिये
सकाय (५७) १ दीर्घकाय
२ दृढ़ शरीर
सके न बियाप (२३२) व्याप नहीं सकता।
मगळो (१२६) सब मुख, सब
सघ (६२) सघर राजा
सजीवरण-मंत्र (३३१) संजीवन मंत्र
सज्ज (११) तैयार
सन (३६) मन
सत (२३७) सौ
सतक्यण (७८) सत्पुरुष
सत्त प्रणव-सवेत (२८६) कपिलवार्णव
सद्रूपा (१६२) सतरूपा
सधायण (२६३) स्थापन
सधीरण (८८६) स्थिर
सदगत (१६ २३६) सद्गति
सद्बुध (१) सद्बुद्धि
सदामद (४८) निरन्तर
सम्मक (२५७) सम्यक
सपत्त पियाल (१२१) सातों पाताल
सात प्रयोलोक
सपन्नो (सुपन्नो)(१८१) उत्पन्न हुए
सबद (२११) शब्द
सबद् (१३७ २७० २८७) शब्द
सबै (१६ १४७ २८०) सर्व, सब
समद (८५) समुद्र
समंदो (३१०) समुद्र
समंध (१७२) संबन्ध
समराथ (६ ६.८) समर्थ
समवड (१३४) सरीखा
समांणउ (२८२ २८४ २८६) १ सम गया २ मिल गया
समांणोय (२७६) समा गया
समाम-समंद (१८) प्रलय की समाधि प्रलय काल की समग्र समाधि
समापण (४५ १६०) समर्पण
समाय (१२६) १ समा देते है २ समा जाता है
समी (३५४) सरीखी
समोवड (२०६) समान
समथ्राथ (१४१, २४५) समर्थ
समभुव (१६२) स्वायम्भुव मनु, स्वयंभुव
समांण (२४८) समाना जानी

सरगुण (६४) सगुण
सरजणा (१४५, २५५) बनाने के लिये
सरज्जिय (१७६) बनाया
सरज्या (८) रचना की
सरण-असरण (१८८) अशरण शरण
सरव (३५४) सर्व
सरब्ब-निवास (२६१) सर्व भूतों में निवास करने वाला
सरब्बस (२६७) सारे, सर्वस्व
सरस्रति (१) सरस्वती
सराप-उतारण (८७) शाप को मिटाने वाला
सरीख (५२) सदृश
सरोज (१५७) ब्रह्मा
सलभ्भो (१६६) सुलभ
सल्ल (७३) शल्य
सवळो (३४८) अनुकूल
सस (६५, १६०, १६२) शशि
ससिहर (१८६) १ चन्द्र, २ महादेव
सह (४, ६, ८, ५४, १७७, १६१, २८४, ३०१, ३१३, ३२६, ३५४, ३५७) समस्त
सह कोय (८, १३३) सभी कोई
सह ठाम (३१३) सर्वत्र
सहण (२६६) क्षमा
सहस्सरबाहुव (३२) सहस्रबाहु
सहाय (३५१) सहायक
सहियो (२५०) सहन किया
सहेन (५५) सहित
साई (१२६, १३१) प्रभु, स्वामी
सापरत (३३५) १ साप्रति २ प्रत्यक्ष ३ निश्चय ही
साभळ (१६, ५१, १२४, १८८) १ सुनिये, २ सुनकर
साभळिये (३५२) सुनिये
सामिय-जग्ग (२३४) जगत का स्वामी
सामी (११) स्वामी, प्रभु
सामुहा (३०६) सम्मुख
सावट (१८) समेट कर
सासो (२२६) सशय
सायुज्य (२६०) सायुज्य, मुक्ति का एक भेद
साख (१७२) साक्षी
साचा (३५१) सच्चे को
साचे (२१०) सत्य
सातु-रिख (२४१) सप्त ऋषि
साद (२८, २१३) १ शब्द २ पुकार
सादविया (२१३) पुकारा
साध (७१, ८५) सत
साधव (१८१) सज्जन

साघवाँ (३४१) साधुओं से
सामीप (८६) सामीप्य मुक्ति का एक भेद
सारंग (७०) धनुष
सार (११८) सुधि
सारखा (८३६) सरीखे
सारण (४६) सिद्ध करने के लिये
सालोक (२६०) सालोक्य मुक्ति का एक प्रकार
सावित्रि (८७) सावित्री
सावेब (२४६) सारूप्य, मुक्ति का एक भेद
सास (१४२) स्वास
सास उसास (३१२) स्वास प्रति स्वास २ स्वासोस्वास
सासत्र (१३३ ३ ८) शास्त्र
सासोसास (११ ३४४) स्वासोस्वास
साहब-दक्खिनद्र (३३) श्रीकृष्ण
सिगाळ (६२ १४३) श्रेष्ठ
सिंघासण (१८६) सिंहासन
सिंधुव (२४१) समुद्र
सिता (२८८) मिसरी
सितासित (७) श्वेत और कृष्ण रंग सित और असित
सिदज्ज (२६६) स्वेदज, पसीने से उत्पन्न होने वाले जीव
सिद्ध (४५) पूर्ण
सिद्ध (२३१) सिद्धि
सिध (४५) पूरा सिद्धि
सिध जोगिय (७५) सिद्ध योगी
सिधि (२४०) सिद्धि
सिधेस (३७) मये
सिर ऊमरै (१२४) सिरोधार्य
सिरि (८४, १ ४) १ श्री, २धाप
सिरि रंग (२२८) श्री रंग
सिरीखी (१२३) श्रीजी लक्ष्मीजी
सिसपाळ (८५) शिशुपाल
सीत (४२, २४८) १ सीता २ लक्ष्मी
सीव (६८) शिव
सु (२२७) से
सु म (२२६) से
सुक्ख (१७२) सुख
सुक्रियथ (११३) सुकृत्यार्थ
सुष्षम (१७४) सूक्ष्म
सुख्म (२२२) सूक्ष्म
सुथि (३३१) उसकी
सुणावण (४६) सुनने के लिये
सुणि (३४७) सुन कर
सुणे (१०१) सुनकर

सुतो (१८) सो गया
सुत्रा (२६३) धागे
सुध (३५६) पवित्र, शुद्ध
सुधारण (६०) सुधारने के लिए
सुन्न (१६६ १७३) शून्य, शून्याकाश
सुपणेखाय (३८) सूर्पणखा
सुपायण (१४) १ निमित्त, २ प्राप्त कराने वाला
सुपीत (६६) पीला
सुभग (३४६) सुंदर
सुमिरणौं (३४६) सुमिरण करने से
सुरभ (२३६) सुगंधि
सुरभत (२५०) सुरभित
सुरग (३४५) स्वर्ग
सुरत्त (७०) रक्तवर्ण
सुरसत्ता (१६०) सरस्वती
सुरा (२६) देवताओं को
सुरीस (६३) देवताओं के ईश
सुवै (३३५) सो जाता है
सुहि (२८१) वही
सुहै (२४१) शोभा पा रहे हैं
२ सू (२०४, ३४०, ३४१, ३५८) से (अपादान और करण कारक)
सूझै (३५४) दिखाई देता है
सूता (३२५) सोते हुए
सूर (१४५) देवता
सूळ (८४) १ त्रिशूल २ पाशुपत्य अस्त्र
सेवक्क (२४६) सेवक
सेवग्ग (२८२) सेवक
सेवता (१८६) सेवा करने से
सेविस (११४) सेवा करूंगा
सेस (६७, १४६, ३११) शेष भगवान शेषनाग
सेस-अधार (८६) शेष के आधार
सोज (१५५) वही
सोण (३५०) शोणित
सोध (३५५) शोधन करके
सोळ-कळा (१६०) चन्द्रमा की सोलह कलाएँ
सोळ भात (६६) पूजन के षोडशोपचार
सोहै (२६६) शोभा पाता है
सोहो (२६७, २६४, २६६) सब
स्नेहे (१) स्नेहपूर्वक
स्याम (५३) श्याम
स्रग (५४) सींग
स्रप (३५१) सर्प
स्रब (१८, ५७, ६३, २०५, २५७, २६८, २६६, २८६, ३५८) सर्व

सब-कारण (७२, ११६) सृष्टि का
कारण सर्व कारण
सर्वे (०६८) सर्व
सकल (२६०, ६३) सर्व
सकल विभाप (२६७) सर्व व्यापक
सवण (७, १ १) कान
सवणां (२११) कानो में
सवणेहु (३४१) कानों में
सवे (१८६) करता है, बरसाता है
सव्व (१३४ ३१४ २७५) सर्व
साप (५९) पाप
सु ति (१८४) वेद

ह

हस (५६) हंसावतार
हणमउ (२३८) हनुमान
हणू (२२१) हनुमान
हण्या (९७) नाश किया
हण्या (२६) नाश किया
हत (१८४) नाश करके
हत्थ (५४) हाथ
हत्यो (५४) मारा
हद् (२९७) कमाल
हमत्स (५) सेना
हयानन (५५) १ हयग्रीव नाम का
एक दैत्य २ हयग्रीवावतार
हर (४८) महादेव
हर उत (५) महेश
हरख कर (३१४) हर्षित हो
हर-सर (३१७) परब्रह्म रूपी सरोवर
हर हार (२८०) शेष नाग सर्प
हरी (१६) हरण कर लिया
हरीत (७०) हरित वर्ण
हलकार (१२) आक्रमण
हलाविय (२५) चला दिया
हव (१२४) हव्य
हव-कव्व (१९४) देवताओं और
पितरों को दी जाने वाली आहुतिए
हांणी (२०७) हानि
हाजरा-हजूर (३४१) प्रत्यक्ष
हाथ (३६) वेद
हियाह (१३६) हृदय से
हिक (२०८) एक
हिया (११२ ३४०) हृदय
हिरणक्ष (२७) हिरण्याक्ष
हिरणांह (२०३) हरिण की भांति
हिरणाक्ष (२३ ५४) हिरण्याक्ष
हिरदै (३४२) हृदय में
हिव (२६८ २७० २७१,२७४, २७६-
२८२, २८५, २६१) अब
हिवै (२१६ २५६ २७३) अब

हुंत (७५) से (अपादान कारक की विभक्ति)

हुआ (१८) हो गये

हुओ (१७, ३६) हो गया

हुतोज (१५४, १५५, १५६, १५७, १५८, १५९, १६०, १६१ १६२) था, था ही

हुलासत (६९) प्रफुल्लित

हुवै (३४८, ३५२) हो जाय

हुवो (२८५) हो गया

हुवो (३४८) होजाओ, होने पर भी

हूत (४५, ४९, ६०) से (अपादान कारक की विभक्ति)

हू-तूं (२५९) मैं-तू, मेरे और तेरे की भावना

हूता (३०२, ३०५) थे

हूसी (३४५) होगा

हेक (१८५, २४५, २७८, २८३, २८५, २९२, २९५, ३५३) एक

हेकट (२७६) अभिन्न, इकट्ठा

हेकरा (२०, २५, १३०) एक ही

हेकरा मल्ल (२५) अनेको से इकल्ला युद्ध करने वाला

हो (१, ३, ६, ११, १०६, १०९ ११२, १२०, १२१, १९३, १९४, २१९, २६२, २६९, २७७, ३०८, ३१०) १ मैं, २ मैंने

होय (३५४) हो जाता है ।

हरिरस की कतिपय प्रतियो के विशिष्ट पाठांतर और कुछ प्रक्षिप्त-पाठ

परिशिष्ट २

परिशिष्ट-परिचय

जो काव्य अधिक जन-प्रिय हो जाता है, उस पर लोक का अपना अधिकार हो जाता है। उसमे सहज ही लोक-मनोवृत्ति क अनुसार परिवर्त्तन होने लग जाता है। मीरां, चद्रसखी, संतसखी और दयासखी आदि भक्तजनो के काव्यो मे भी ऐसा होता रहा है। प्रतिलिपिको की असावधानी और अज्ञानता भी इस परिवर्त्तन का प्रवतक-कारण कहा जा सकता है। हरिरस मे भी ऐसा ही हुआ है। उत्तर-गुजरात, सोराष्ट्र, घाट (थरपारकर-सिंध) और राजस्थान के मारवाड और बीकानेर इत्यादि प्रदेशो मे इसकी शताधिक हस्त-लिखित प्रतियो को देखने का सुअवसर मिला। उन सभी प्रतियो में छद-सख्या, छद-क्रम और छद-रूप एक समान नहीं। मुद्रित प्रतियों के सस्करणों का भी यही हाल। उल्लिखित तीनों बातें मुद्रित प्रतियों में भी हस्तलिखित प्रतियो के समान ही पाई जाती हैं। पाठ साम्य पाठ-क्रम और छदों की सख्या किसी मे भी एक समान नही। मुद्रित प्रतियो का यह अनेक प्रकार अतर यही प्रगट करता है कि शुद्ध प्रतियो की खोज कर मूल पाठ के निकट आने का किसी ने प्रयत्न नही किया। कवि की जन्म-भूमि मारवाड का मालानी प्रान्त और प्रवास-भूमि सौराष्ट्र प्रान्त एव उत्तर-गुजरात से प्राप्त प्रतियो से पाठ-चयन करके हम यह विषय-विभाजित अद्वितीय सस्करण पाठकों को भेंट कर रहे हैं। तथापि अनेक प्रतियो मे प्राप्त कुछ आवश्यक पाठान्तर (१) और प्रक्षिप्त छद (२) पाठकों और भक्तजनो की सेवा

में इस परिशिष्ट में प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे काव्य में निरंतर होते रहने वाले विविध परिवर्तन-परिवर्द्धनों के कारण उसकी लोक प्रियता और उसके महत्व का समुचित अनुमान लगाया जा सके।

पाठान्तरों के छंदों के आगे लिखी गई संख्यायें प्रस्तुत हरिरस के छंदों की हैं।

प्रक्षिप्त छंद अनेक प्रतियों के हैं। उनका क्रम भी तितर बितर और विषय वार नहीं होने से विषय युक्त नहीं किये जा सके हैं और इसीलिये उनके आगे छंदों की क्रम-संख्या नहीं दी जा सकी है।

पाठान्तर और प्रक्षिप्त-पाठ में मूल प्रतियों के अनुसार 'ख' के स्थान सर्वत्र 'ष' ही लिखा गया है।

—सम्पादक

१ पाठान्तर

लागा हू पहलो लळी, पीतावर गुरु पाद
वेद पदारथ भागवत, पायो जेण प्रसाद (३)
लागू हू पहली लुळै, (३)
लागू म्हू पहला लळै (३)

पूठि धरणि सिर सावतो हरि तू चितवणि हार
तुझ ही तुज्झ करतडा, परम न लाभै पार (५)
पीठ धरणि धर पट्टडी, हरितिय चित्रण हार
तोइ तोरा चरिता तणो, परम न लाभै पार (५)
पीठ धरण कर पोटडी, हर थिय लेपणहार
तोई तारा चिरता तणो, परम न लाभो पार (५)

तोरा हू पूरा तवै, सकू केम ससमाथ
चत्रभुज सहु थारा चरित्त, निगम न जाणू नाथ (६)

पइट्ठा माण तुहाळी पूठ, उवार विसन कहै सुर ऊठ (१७)
पईठा मावि तुहारी पूठि, उवारि वृसन्न कहै सुर ऊठि (१७)

जटाधर मघ दइत्त जळाय, विमोहै रूप मनूप वणाय (२४)

एकलमल्ल । एकणमल (२५)
महणारभ । महराणव (२५)

पई पपवाय किता पहिराम मीपउ त सेवक सारम काम (२८)
पइछाय। पहिमाम (२८)

किता है फेरा वीठो कालिम पुमोपुम कीमा कैता पंग (४४ ४८)

नमो परब्रह्म परम्म पवीत सुधांम सुनीम सुमत्र सुप्रीत (७)

सधांम। सधांम (७२)

नमो प्रम हंस सरोवर मम्म निकेवळ गोरखनाथ सुगम्म
महा वो मूरख गोप मतार नमो वनमाळी मीस विहार (७४)
नमो प्रम हंस सरवर प्रमेव निकेवळ गोरखनाथ नवेम (७४)

नमो ब्रम बाळ नमो नटवेस नमो सत नाम सर्व कुळ सेस (७२)

नमो पुरुषोतम वीकम प्रम्म, नमो मंत्र गोप प्रगम निकम्म (७८)
नमो मंत्र गोप प्रगम निगम (७८)

नमो बळ पावर बावन वाम नमो प्रतपाळण मारण राम (७६)

नमो ईपीम निगम निवास महा कवि हंस प्रहम निवास (८१)

नमो पमतार पै काम पचीस नमो पुनराम नमो बपदीस
नमो निरलेप नमो निरकार, नमो निरदोष नमो निरधार (८६)

नमो निरलेप नमो निरधार धिव पुरस रूप नमो साकार (६४)
नमो निरलेप नमो निराकार, नमो निरदोष नमो निराधार (६४)
निरंजण नाम नमो साकार (६४)

बम कंठ पवित्र करिव हुं नरहर (१ २)

मुणी म्हैं नार असार्ग मत्ति, गोविंद नहइ कुण तोरी गति (१२०)

आपै इम ईसर ब्रह्म अपार, अरी भव तारण नाह् पियार (१२६)

करणीगर रहा करै, करता विलम न काय (१३०)

केम हुओ ईसर कहै, के जायो किरतार
ब्रह्मा रुद्र विचार भ्रम, नह जाणै निरकार (१३५)

अनेसर तोरा पार अनोय (१३६)

'विरचिय' के स्थान 'विचिओ' (१३८)

वडा तत तोर लहै न विचार (१३८)

द्रगपाळ । दिगपाळ (१३९)

अलीलो लील करत आदेस (१४०)

अलाह अगाह अवाह अजीत (१४१)

कपाळ विसाळ सिघोळ किसन्न, वडाळ भुजाळ उजाळ विसन्न
मुणाळ भुजाळ छयाळ महेस, आदेस आदेस आदेस आदेस (१४३)

रहै रत ध्यान इठ्यासी रिष, लहै नही पार विरची ज लिप (१५१)

नही तो अम नही तो सास, नही तो भ्रम्म नहीं तो भास (१६५-१६६)

ससार समद तिसाया सुष (१७९)

प्रवट आये आतमा, चत्रभुज आवै चीत (२०६)

छुधा न भाजै पीर सूं, त्रिपा न भाजइ अग्नि
मुगति न लाभइ राम विरा, मानो माचो मग्नि (२१०)

न दै साद काइ नारीयरा, साद दिया ज्या सत (२१३)

पेलै पाप प्रचड (२१४)

जीहा तो रेहा लागा ज्याह त्रिलोइ नही भो लोकां त्याह (२२६)

सोह हस भूत वियापत सम्भ, दुवादस आगुळ गांठ दुलम्भ
जादव दुलम्भ दु प्रामी जग्ग, पदम्म पताक अलक्खित पग्ग (२३४)

पगा विदिया सह जोडै पारा, चळै पग तो पट भाख वपारा (२४३)

. . .

नवै पग दिस गोतम नारद, वदै पग कपिल करग्ग विहद (२४३)

'सन्नक' के स्थान 'छन्नक' (२४७)

जादव, जादव्व, जादम, जादुव (२४७)

भावै पग छाह अनेक अनाज, लियै पग छांह तणा फळ लाज
ओळगों पग परम्म अलख्ख, रहै पग छांह रमै गोरख्ख (२५१-२५२)

अधिक अदे नप कोट अरक्क, समत्थ सिरज्जरा एक सरक्क (२५५)
अधक पाये नप कोटि अरक्क, समाथ सिरज्जरा भाजरा सक्क (२५५)
एकै विरा माह भाजै घर आभ, निपावै अधिकां केवळ नाभ (२५५)

दातार मुगत दुन्है जैदेव (२६०)

राज विलोचन जुद्ध ना धरे रग, श्रीरग अनत कुसेन की सेव
भगत्ति दयाळ दईता सेव, सथापण सर्ग प्रकासण स्रव्व (२९३)

मुनेस महेस कोइल्या मज्झ
प्रसिद्ध मह्रा व्रळ तेज प्रयज्झ (२९६)
मनेस महेस कौमतळ मझि
प्रसिद्धि मह्रा वळ तेज पयझि (२९६)

तिलह तेल पुहप हि फुलेल ऊझळत सायर
अगनि काठ जोवन्न घट भगवद्द त कायर
ईष रस पोसति कस अरथ सासत्रि उर ठाहै
पान चग माजीठ रग उछरग विमाहै
पग नीर धीर घर अतरै, मद सरीर कुंजर मयण
मन वसै जेम तन मझली त्यौ मो मन वसियो महमहण (२९९)

आद तूझ थी ऊपना, जंगजीवण महु जीव
ऊच नीच घर अवतरण, दौ के दोस दईव (३०१)
आदु तुझ थी ऊपन्या, जग जीवन स्रव जीव
ऊच नीच घर अवतरण, दै तूं वस दईव (३०१)

आपोपै हुता अनत, आप्यो तैं अवतार
पाप धरम चा पाहरू, लाया जीवा लार (३०२)

दीह घणा माझल दुनी, रळियौ देखै रूप
माधव हमैं प्रकास मुहि, सिव ताहरो सरूप (३०३)

रहस निरालब अेकलो, तज काया मझ वास
साथी तिण दिन सखघर, सुरग तणेँ पथ सास (३४५)

आतम पिया अजांण ही (३४७)

उण रस मे सब रस कियो, हरिरस समो न कोय
रति इक तन मे सचरै, सब तन हरि मय होय (३५४)
सरब रसायण मे रसी, हरिरस समी न काय
टुक इक घट मे सचरै, सोह घट कचन थाय (३५४)

इण अवसर मत आळसैं, ईसर आखै अेम
प्राणी हरिरस प्रामियां, जनम सफळ थिय जेम (३६०)

कवि ईसर हरिरस कियो, दिहा तीन सो साठ
महा दुस्ट पामै मुगत, जो कीजै नित पाठ (३६१)
उठ नित करिया पाठ (३६१)
नित उठ कीजै पाठ (३६१)
नित प्रत करिजै पाठ (३६१)
पहला कीधा पाठ (३६१)

नारायण न निदरै, निदै तो दुरमत्ति
जे नारायण सिर हणै, तोइ नारायण गत्ति ।

नारायण नैटो वसै, देव म जाणै दूरि
जिण दिन आ जग छडिजे, आवै परवत चूरि ।

चदा सो चलणा गया, सूरिज मडळ सोय
जीव ! हरीरस वाच रे, हरि सूं नातो होय ।

वाय चलण लागै करण, सूरिज ससि प लग्ग
ईम जिका सूं वाहरो, जनि को जाणै मग्ग ।

राम नणै पालवणै, मन पच्छी [पपो] तन रप्प
फालै कमण न गजियो, को अजरामर अप्प ।

नारायण भजियो नहीं, भजिया अवर भजन्न
ज्या तजिया मानव जनम, आया तन अन-अन्न ।

नारायण भजियो नही, भजिया अवर भजन्न
ज्यां तजिया मानव जनम, सफ्रिया तन्न असन्न ।

दीवांण तू दईवाण तू सभाण तूं सुरताण
सुभियाण थारो नाम समथ, सोह विध सप्रमाण ।
रहमांण तू वापाण राजै, गयण तु फुरमाण गाजै
प्रांण पुरुष पुराण, प्रिथिवी जाण तू परमाण ।

विश्व थारो थू विसभर, घणी थूं थारी सहो घर
पुह परठुण थू हि पेलै, कळ न सकियो कोय
कई जिवाडै केई मारै, केई बोडै केई तारै
ठालवै भरिया भरै ठाला, थू करै त्यु होय ।

भणता सुणता लील विलास
पामै नर मोक्ष तणा आवास।
अकळ सकळ जळि थळि अनत, सब रूप ज मगळि
वदन कमळ मुप समळ, पवित्र जळ गग पळाहळि
अवळ उधारण अचळ, वसै रोम रोम ब्रहमडळ
तारण गिर जळ प्रघळि नांम थारो जन मगळि
चित हूंत चपळि जुगलि करि, नर नारायण तूझ निरमळ
आदेस विसन अवगत अलप, वहै जुग जायै अेक पळ।

पसै तै केता पाफर पान, जिको जगनाथ रचायो ज्यांन
जिता तैं आलम साह अलाह, वन थळ मांहि किया वीमाह।
नमो जप जाप पिता जोगिंद, राजा श्रीराम नमो राजिंद
नमो सब व्यापक अग अनग, नमो निसिवासर रेण निहग।
नमो परब्रह्म नमो पर पत्ति, नमो पर देव नमो परकत्ति
नमो परमेस नमो परग्यान, नमो परजोति नमो परध्यान।
नमो निरनांम नमो वहो नाम, नमो अवधूत नमो श्रीरांम
नमो जग-लोप नमो जग-थाप, नमो जग बध नमो जग बाप।
नमो निरपेत नमो निरकाम, नमो निरजीत नमो निरियांम
नमो निरभूप नमो निरभेष, नमो निररूप नमो निररेप।
नमो निरअत्त नमो निरदेह, नमो निरदत्त नमो निरनेह
नमो अणरेह अनेह अनत, नमो अणदेही व्यापक अत।
नमो निरनाम नमो निरदेह, नमो निरगाम नमो निरगेह
नमो निरपच्छ नमो निरप्रेह नमो निरदच्छ नमो निरदेह।

अचाळ अग्रद्ध अकाळ अक्रम्म, अपाळ अलद्ध अभाळ अभ्रम्म
अचाळ अरद्ध अनाळ अनेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अमात अतात अजात अजेव, अदीह अगात अअत्त अभेव
अगात अमाम अवात अवेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अलेह् अदेह अनेह अनाम, अरेह् अछेह अग्रेह् अगाम
अक्रेह् अग्रेह् अपेह् अपेन, आदेस आदेस आदेस आदेस[२] ।

अगम्म अथाह् अनत अनूप, सदन्न मदन्न वदन्न सरूप
निमाळ निकाळ निताळ निवेम, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

अनग अथाह् अप्रेय अरूप, छद्दोह् वदन्न मदन्न सरूप
मुर्पा नह् मेल्है मेस महेस, आदेस आदेस आदेस आदेस ।

सुजळ गिनान मजन तन मारिस
भ्रम क्रम जप तप नेम वधारिस ।

राज तणी इछा रघुराया
अखिल चराचर जीव उपाया
राज अग्न्या म्हारै सिर राखिस
भूधर तूझ तणा गुण भाखिस ।

पस्यो तै साहि विना कथ पेख
वचाडिय देवां आदू वेष ।

दुनी चा काळ भुजाळ दईत
जिके दळ साझ रमै द्रह जीत ।

२- अक्रेत अप्रेत अनेत अवेश, आदेश आदेश आदेश आदेश

भागी भम राम पळाकर सयय
गरज्ज भमां रच म्होटा पिड।
पमां मिव पूजै पांडव पच
छेवै पच मन्न हेसै पुम संच।
भगां पुम्न पूम करै प्रहलाद
नमै पम छोड़ मडा भर नाद
हमा पच तेज ठत्ता संभार
सिकै पग छेदै ईसर तार।

छोटा हरिरस

परिशिष्ट ४

परिचय

सप्त श्लोकी भागवत और गीता की भाँति भक्तवर ईसरदासजी ने भी भक्तजनों के हितार्थ इस सप्तपदी हरिरस को बनाया है इसे 'छोटा हरिरस' कहते हैं। इस छोटे हरिरस के नित्य-पाठ और श्रवण-मनन का महात्म्य भी बड़े हरिरस के समान ही माना जाता है।

हमें इसके कई पाठ देखने को मिले हैं, उनमें से दो यहाँ दे रहे हैं।

—सम्पादक

॥ ॐ शिव ॥

अथ छोटा हरिरस

(१)

हरि गुण गाय हरि गुण गाय
हरि गुण गाय वहो गुण थाय
प्रगट हुई गंगा हरि पाय
ध्रुवजी अटळ हुआ हरि ध्याय

(२)

ध्रुव हरि मेरु तणै सिर धरियो
हरि पांडव पांचूं ऊधरिया
वीसारै हरि ते वीसरिया
हरि रै नाम घणा नर तरिया

(३)

पांच क्रोड हूता प्रहळाद
सात क्रोड हरचंद परसाद
नव जुजिठळ बारह बळिराज
अमरापुरा तेडीजै आज

एक अन्य प्रति मे छोटे हरिरस का इस प्रकार पाठ-भेद पाया गया है। इसमे केवल ६ छद है-

(१)

हरि गुण गाय घणो गुण थाय
प्रीत कर गग तणो जळ पाय
हरि सुमिरै तो वैकुंठ जाय
घूजी अटळ हुओ हरि ध्याय

(२)

प्रभु सुमरयो जन पांडव पाँच
वा भव-सिधु न लागी आँच
तरयो प्रहळाद कोटि पंच ताज
तरयो हरिचद कोटि सत काज

(३)

तरया नव कोटि जूजीठळ राय
बारह कोटि तरया बळिराय
हरि जन तार लियो गजराज
अमरापुर राखीजै आज

(४)

हरि अविनास कियो अमरीख
रह्यो रुकमांगद जे अंत रीख
भीष्म प्रतिज्ञा कीधी न भंग
हरि महेस्या दीधी भंग

५)

सरीर कुबज्जा कीध सुधंग
सदा भभीखण राख्यो संग
हरि ध्रुव संत करो सतसंग
हिरदै धार विसेस उमंग

(६)

धरो न कदी हिरदै मद भेस
करो नह मानव देह कलेस
ममता तणी री कीजिय नास
वदै कवि ईसर एक विमास

———

हरिरस

कथा-कोश

[अतर्कथाए और परिभाषाए]

परिशिष्ट ५

॥ श्रीशिव ॥

परिशिष्ट-परिचय

हरिरस में जिन अनेक भक्तों और तीर्थों आदि के नाम तथा राजस्थान और राजस्थानी-भाषा के विशिष्ट अप्रचलित व पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग हुआ है उनके सम्बन्ध में यथा-स्थान और प्रसंगानुसार संक्षिप्त वर्णन इस परिशिष्ट में किया गया है जिससे भक्तजनों और पाठकों को हरिरस का पाठ करते समय उनके सम्बन्ध में यथावश्यक कुछ जानकारी मिल सके।

नामों के आगे की संख्याएं प्रस्तुत हरिरस के छन्दों की संख्याएं हैं और कोष्ठकों में अंकित उनके शास्त्रीय नाम हैं।

विशिष्ट महापुरुषों के नाम-धाम भी यथा-संभव यथा-प्रसंग देने का प्रयत्न किया गया है।

—सम्पादक

अकरूर [अक्रूर] २४७

अक्रूर श्रीकृष्ण के चचा और वसुदेव के भाई थे। कस की राज सभा मे अपमानित होकर रहने वालो में ये भी एक थे। कम ने श्रीकृष्ण और वलराम को मारने के लिए एक यज्ञ करने का ढोंग रचकर अक्रूर को इन्हे बुलाने के लिए भेजा था। अक्रूर कस के अत्याचारो से दुखी था अत उसने इस षड्यन्त्र की सूचना श्रीकृष्ण को करदी। श्रीकृष्ण और वलराम इनके साथ मथुरा आए और वहाँ उन्होने कस और उसके कई साथी-वीरो को मार दिया। स्यमतक मणि भी अक्रूर के पास थी, जिसके प्रभाव से द्वारिका में अनावृष्टि और प्रजा में धनाभाव नही होने पाता था। ये श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे।

भक्त-वाणी

ममाद्यामङ्गल नष्ट फलवांश्चैव मे भव।
यन्नमस्ये भगवतो योगिध्येयाङ्घ्रि पङ्कजम्॥

(भक्त अक्रूर। श्रीमद्भागवत)

आज मेरे समस्त अमगल नष्ट होगये। मेरा जन्म आज सफल हुआ। आज मैं भगवान् श्रीकृष्ण के उन चरण-कमलो में प्रत्यक्ष नमस्कार करूंगा, जो वडे-वडे योगियों के लिये भी मात्र ध्यान करने की ही वस्तु है।

अजामेळ [अजामिल] २१२

अजामिल एक अनाचारी ब्राह्मण था। उसने अपने माता-पिता और स्त्री को त्याग कर एक शूद्रा से प्रेम कर लिया था जिससे उसको दस पुत्र हुए थे। इनमें से एक का नाम नारायण था जिसके ऊपर इसका सबसे अधिक प्रेम था। बार बार नारायण कहते-कहते अजामिल की वृत्तियों में अंतर पड़ने लगा और उसे ज्ञान होने लगा। उसने सोचा, अन्य अभिप्राय से उसका नाम लेने का यह फल है तो भक्ति पूर्वक नारायण की सेवा करने का कितना फल होगा। यह सोच कर वह हरिद्वार चला गया और वहां गंगा के किनारे बैठ कर अनन्य चित्त से भगवद्भजन में अपनी शेष आयु को बिताया जिससे अजामिल को वैकुण्ठ की प्राप्ति हुई।

अठासी हजार रिख [अठासी हजार ऋषि] १५१

अठासी सहस्र ऋषियों का समूह जो नैमिषारण्य तीर्थ में निवास करता था। सूत मुनि ने यहीं इन ऋषियों को महाभारत की कथा सुनाई थी। ऋग्वेद प्रातिशाख्य के रचयिता शौनक ऋषि इस पुण्याश्रम के कुलपति थे।

अठार पुराण [अठारह पुराण] ६५

वेदव्यास प्रणीत अठारह पुराण ये हैं– (१) विष्णु (२) पद्म (३) ब्रह्म (४) शिव (५) भागवत (६) नारद, (७) मार्कण्डेय, (८) अग्नि (९) ब्रह्मवैवर्त (१) लिंग (११) वराह (१२) स्कन्द (१३) वामन (१४) कूर्म (१५) मत्स्य (१६) गरुड़ (१७) ब्रह्माण्ड और (१८) भविष्य।

अत्रि २४४

अत्रि महर्षि ब्रह्मा के मानस पुत्रों और सप्तर्षियों मे से एक हैं। कर्दम प्रजापति की कन्या अनसूया इनकी पत्नी थी। महर्षि दुर्वासा और चन्द्रमा इनके पुत्र थे। दत्तात्रेय भी इन्ही के पुत्र थे। ये अनेक वैदिक ऋचाओं के कर्त्ता और धर्मशास्त्र प्रवर्तक हैं। इनका बनाया हुआ धर्मशास्त्र ग्रथ 'अत्रि सहिता' के नाम से प्रसिद्ध है।

आर्ष-वाणी

> आनृशंस्य क्षमा सत्यमहिंसा दानमार्जवम्।
> प्रीति प्रसादो माधुर्यं मार्दवं च यमा दश॥
> शौचमिज्या तपो दान स्वाध्यायोपस्थनिग्रहः।
> व्रतमौनोपवास च स्नान च नियमा दश॥

(अत्रिस्मृति ४८, ४९)

दया, क्षमा, सत्य, अहिंसा, दान, नम्रता, प्रीति, कृपा, मधुर वाणी और कोमलता— ये दश यम कहलाते हैं।

पवित्रता, यज्ञ, तप, दान, स्वाध्याय, जननेन्द्रिय का निग्रह, व्रत, मौन, उपवास और स्नान— ये दश नियम कहलाते हैं।

अमरीस [अम्बरीष] ५२

वंश के प्रवर्तक महाराज भगीरथ के प्रपौत्र अंबरीष बड़े पराक्रमी और उच्च कोटि के विष्णु भक्त थे। राज्य का सारा भार अपने सेवकों को सौंपकर वे अपना अधिकांश समय हरि भजन में ही व्यतीत करते थे।

व्रत का पारण द्वादशी समाप्त होने के पूर्व कर लेने के कारण विशेष धार्मिक कृत्य में लगे हुए आमंत्रित महर्षि दुर्वासा ने क्रोधित होकर अंबरीष को मारने के लिये अपनी जटा में से कृत्या नाम की राक्षसी को उत्पन्न किया। अंबरीष को मार देने के पूर्व ही भगवान के सुदर्शनचक्र ने राक्षसी को मार दिया। अकारण अपने भक्त को सताने के कारण वह चक्र महर्षि के पीछे पड़ा। महर्षि भाग कर भगवान् विष्णु की शरण में गये। महर्षि का उग्र क्रोध सदैव के लिये शांत कर देने की इच्छा से भगवान् ने इन्हें अंबरीष से ही क्षमा याचना करके इस आपत्ति से निवृत्ति पाने का एक मात्र उपाय बतलाया। भयभीत ऋषि तब अंबरीष की शरण आये। भक्तराज ने भगवान् और चक्र से निवेदन करके महर्षि को संकट-मुक्त किया।

भक्त-वाणी

विप्रस्य चास्मत्कुलदैवहेतवे।
विधेहि भद्रं तदनुग्रहो हि नः॥

(अम्बरीष श्रीमद्भागवत)

प्रभो! हमारे कुल के हित के लिये ही आप महर्षि दुर्वासाजी का कल्याण करने की कृपा कर दीजिये। हमारे ऊपर आपका यह महान् अनुग्रह होगा।

भक्त-महिमा

> अहो अनन्त दासान महत्व दृष्टमद्य मे ।
> कृतागसोऽपि यद्राजन् मङ्गलानि समीहते ॥
>
> (महर्षि दुर्वासा : श्री मद्भागवत ।)

महर्षि दुर्वासा भक्त अम्बरीष के प्रति कह रहे हैं—

आज मैं धन्य हूं । भगवान् के प्रेमी भक्तो के महत्त्व को आज मैंने देखा । राजन् ! मैंने आपका अपराध किया, फिर भी आप मेरे लिये मगल-कामना ही कर रहे हैं । राजन् ! तुम धन्य हो ।

अरज्जुण [अर्जुन] २४६ दे० पाडव

धर्म-वीर की वाणी

> यज्जीवित चाचिरांशुसमान क्षणभगुरम् ।
> तच्चेद्धर्मकृते याति यातु दोषोऽस्ति को ननु ॥
> जीवित च धन दारा पुत्राः क्षेत्र गृहाणि च ।
> याति येषां धर्मकृते त एव भुवि मानवाः ॥

अर्जुन कहते हैं—

जीवन बिजली के प्रकाश के समान क्षण भगुर है । वह यदि धर्म-पालन के लिये नष्ट हो जाता है, तो हो जाय, इसमे क्या दोष है ? जिनके जीवन, धन, स्त्री, पुत्र, पशु और घर धर्म के काम में चले जाते हैं ... रे के अधिकारी हैं ।

अवतार ८६,८७

जिसका शरीर अपने अदृष्ट से बंधा हुआ नहीं होता है और न वह पंच भूतों से ही बना हुआ होता है तथापि वह साधुजनों के लिये सुख का हेतु और असाधुजनों के लिये दुख का हेतु होता है इस प्रकार का शरीर धारण करना अवतार कहा जाता है।

स्वादृष्टानधीनत्वे सत्य भौतिक शरीरत्वे
सति साध्वसाधु सुख दुःख हेतुत्वम्।

अस्टावक्र [अष्टावक्र] २४५

महर्षि उद्दालक ने अपने शिष्य कहोड़ को अपनी कन्या सुजाता ब्याही थी। सुजाता जब गर्भवती थी तो गर्भस्थ बालक ने समस्त वेद और शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। एक दिन पिता जब वेद-पाठ कर रहा था तब गर्भस्थ बालक ने कहा कि मैंने आपकी कृपा से गर्भ में ही चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया है और प्राप्त ज्ञान के आधार से मैं देखता हूं कि आप वेद-पाठ अशुद्ध कर रहे हैं। महर्षि कहोड़ को अपने शिष्यों के सामने इस प्रकार अपमानित होने की बात सुनकर क्रोध आ गया और गर्भस्थ शिशु को शाप दे दिया कि तुमने मेरा अपमान किया है इसलिये तुम्हारा शरीर टेढ़ा-मेढ़ा हो जायेगा। बालक का जब जन्म हुआ तो वह आठ जगह से टेढ़ा था। अतः उसका नाम अष्टावक्र रखा गया।

अष्टावक्र बहुत तीक्ष्ण-बुद्धि ज्ञानी और पण्डित थे। बाल्यावस्था में ही इन्होंने जनक की सभा के राजपंडित को शास्त्रार्थ में

हराकर अपने पिता का जीवनोद्धार किया था, जो उक्त पद्धति से शास्त्रार्थ में पराजित होजाने के कारण जल में डुबा दिये गये थे। अपार सम्पत्ति के साथ जब अष्टावक्र अपने पिता को लेकर घर आरहे थे तो मार्ग में उन्होंने अपने पिता की आज्ञा से समगा नदी में ज्यों ही स्नान किया तो उनके शरीर की वक्रता मिट गई।

'अष्टावक्र सहिता' में इसी शास्त्रार्थ के प्रश्नोत्तर सगृहीत हैं।

आर्ष-वाणी

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत्त्यजे।
क्षमार्जवदयाशौच सत्य पीयूषवत् पिबे.॥

(अष्टावक्र गीता)

मनुष्य ! यदि तुझे मुक्ति की इच्छा है तो विषयों को विष के समान त्याग दे और क्षमा, सरलता, दया, पवित्रता और सत्य को अमृत के समान ग्रहण कर।

अहल्या २५४

अहल्या ब्रह्मा की मानस पुत्री और गौतम ऋषि की पत्नी थी। पंच महासतियों में ये सर्वोच्च महासती मानी जाती है। ब्रह्मा ने अहल्या की सृष्टि त्रिलोक की सुन्दरतम वस्तुओं का सार लेकर की थी। देवराज इन्द्र ने इस पर आसक्त होकर चन्द्रमा की सहायता से गौतम के कपट वेश से इनके साथ सभोग किया। महर्षि गौतम को जब यह भेद मालूम हुआ तो उन्होने दोनों को शाप दिया, जिससे इन्द्र का शरीर नपुसक और सहस्र-योनि होगया और अहल्या

पाषाणमयी होगई। इसीलिये इसका एक नाम पाषाणी भी प्रसिद्ध है। देवताओं के अनुनय से इन्द्र के शाप का निराकरण हुआ जिससे इन्द्र की सहस्र योनियां सहस्र नेत्रों में परिवर्तित होगईं और मेष का पुंसत्व प्राप्त हुआ। तभी से इन्द्र को सहस्राक्ष और मेषवृषण भी कहा जाता है। अहल्या के बहुत पश्चाताप करने पर ऋषि ने यह निराकरण किया कि त्रेता में भगवान राम के चरणों का स्पर्श होने पर इसका उद्धार होगा। समय आने पर जब राम विश्वामित्र के साथ जनकपुर जा रहे थे उन्होंने अपनी चरणरज के स्पर्श से अहल्या का उद्धार किया। अहल्या अपना पूर्व रूप पाकर पतिलोक को चली गई।

पश्चाताप-वाणी

मुनि श्राप जो दीन्हा अति भल कीन्हा
परम अनुग्रह मैं माना।
देखेउँ भरि लोचन हरि भव मोचन
इहइ लाभ संकर जाना॥

(रामचरित मानस)

अहि-चारण १०३

गरुड़ के भय से रमणद्वीप से आकर यमुना के एक ह्रद में रहने वाला भयंकर विषधर। इसके विष से आसपास का वातावरण और यमुना का जल विषमय होगया था जिसके कारण कोई प्राणी उधर जा नहीं सकता था। एक बार एक ग्वाला और उसकी गायें भूल से उधर चली गई और वहां पानी पी लिया जिससे वे तत्काल ही

मर गईं। भगवान् श्रीकृष्ण उस समय अपने ग्वाल-सखाओ के साथ गेंद खेल रहे थे। गेंद जमुना में पड गई। गायो के प्राण रक्षाथ गेंद के मिस से भगवान् श्रीकृष्ण उस विषमय जल में कूद पड़े और उस द्रह मे इतने गहरे नीचे उतर गये जहा कालिय-नाग छिप रहा था। अपनी अद्भुत शक्ति से उसको पकड कर उसे चारों ओर घुमाकर खूब हैरान किया। तब इसकी स्त्रियो ने आकर नाग के जीवनदान की प्रार्थना की। भगवान् ने दया करके इस शर्त पर उसे जीवित रखना स्वीकार किया कि (१) मृत गायो और ग्वालो को अपना विष हरण करके जीवित करदे, (२) यमुना का जल शुद्ध करदे और (३) यहाँ से पुन रमण द्वीप को चला जाय। कालिय के यह सब मान लेने पर श्रीकृष्ण ने उसे अपने स्थान जीवित जाने दिया।

राजस्थानी साहित्य मे भी 'नाग-दमण' बहुत उच्च कोटि की रचना साया झूला द्वारा निर्मित है।[1]

अहीस [अहीश] १३७

कश्यप ऋषि की स्त्री कद्रू के पेट से उत्पन्न शेषनाग। शेषनाग के सहस्र फण हैं और निरतर पाताल मे रहकर अपने फणो पर पृथ्वी को थामे हुए हैं। ये ज्ञान के अधिष्ठाता हैं और गर्ग ऋषि को ज्योतिष विद्या की शिक्षा दी थी। इनकी एक कला और एक रूप क्षीर-सागर मे स्थित है। जिस पर विष्णु भगवान एक कला रूप अवतार से सदा शयन किये रहते हैं।

लक्ष्मण और बलराम दोनों शेष के अवतार हैं।

---

१ इस ग्रथ का सम्पादन भी मेरे सम्पादनाधीन है और शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है।

आलमराम, आलम, आतमा [आत्माराम, आत्मा] २७९, २८१, ३२४, ३२५

यह जो नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव और ब्रह्म का रूप है। सत्य है चेतन है और आनन्द स्वरूप है एवं अहं (मैं) से सर्वविदित ज्ञान का विषय है।

सर्व देहेषु पूर्ण आत्मा।
अहं प्रत्यय विषय आत्मा।

आलम, अलम्म [आलम] १३२, १५४, २८३

'आलम' शब्द का अर्थ साधारणतया 'संसार' या 'जनसमूह' होता है। पर हरिरस में यह शब्द 'ईश्वर' और 'संसार' दोनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। ईश्वर का 'आलम' पर्याय राजस्थानी (डिंगल) भक्त-साहित्य की एक विशेष बात है और इस अर्थ में प्राय: रूढ़ होगया है। ईसरदासजी के अतिरिक्त राजस्थान के अनेक भक्त-कवियों ने अपने ग्रंथों में इस शब्द को ईश्वर अर्थ में प्रयुक्त किया है। पीरदान लालस द्वारा रचित परमेसर-पुराण गुण अलख-आराध, गुण ग्यान चरित और गुण पातिस-पहार आदि अनेक डिंगल भक्त साहित्य के भक्ति-परक ग्रंथों में इस शब्द का 'ईश्वर' के अर्थ में यत्र-तत्र व्यवहार हुआ है[1]।

---

१ डिंगल-साहित्य में आलम शब्द का अर्थ— बादशाह या नवाब भी होता है। वचनिका-चौपाई आदि कई राजस्थानी ग्रंथों में इस अर्थ में भी इसका प्रयोग हुआ है।

'आलम' वा 'आलमजी' मारवाड के मालानी प्रान्त के एक प्रसिद्ध लोक-देवता हैं। इनके संबध में कई प्रकार की दन्त-कथाएँ प्रचलित हैं। मालानी प्रान्त के धोरीमना[२] गाँव के पास 'आलमजी रो भाखर' गुडा (गुढा = राडधरा) गाँव के पास 'आलमजी रो धोरो', नामक टीबा और 'आलमपुरा' गाव आलमजी के नाम पर इस प्रान्त मे प्रसिद्ध हैं। इन स्थानो पर आलमजी के मदिर, मढ़ी (मठ) और थान बने हुए हैं। आलमजी जैतमालोत राठोड राजपूत कहे जाते हैं। वे अलख परब्रह्म की निर्गुण उपासना करने वाले बडे शूर-वीर और भक्त राजपूत थे। प्रति भादो शु० २ और माघ शु० २ को उक्त स्थानो पर इनके नाम से बडे मेले लगते हैं। आलमजी के बाद भी इन स्थानो पर कई सिद्ध-महात्मा होगये हैं। आलमजी के समय मे यहा दूर-दूर के भक्त और साधुजन इनके दर्शनार्थ आया करते थे। कहा जाता है कि रावळ मल्लीनाथजी और उनकी रानी रूपादेजी भी यहां आया करते थे[3]। रूपादेजी के दांतुनो से धोरे पर

२- धोरीमना गुडा से २४ मील और गुडा, बालोतरा से ३६ मील दूर है। आलमपुरा गुडा से डेढ मील और आलमजी रो धोरो एक मील आलमपुरा के मार्ग में पडता है।

३- रावल मल्लीनाथ और उनकी रानी रूपांदे दोनो बडे सिद्ध-पुरुष हुए हैं। मल्लीनाथ के नाम से ही मारवाड के इस प्रान्त का नाम 'मालानी' प्रसिद्ध हुआ। बालोतरा से १० मील पश्चिम में लूनी नदी पर तिलवाडा गाव के सामने के तट पर थान गाव के पास मल्लीनाथ का बडा समाधि-मदिर बना हुआ है। थोडी दूर मालाजाल गाव मे रूपादे का समाधि-मदिर भी बना हुआ है। प्रति चैत्र कृ० ११ से चैत्र शु० ११ तक मल्लीनाथजी के नाम पर 'चैत्री रो मेळो' नामक बहुत प्रसिद्ध व्यापारी मेला लगता है। भक्तवर ईसरदासजी का भादरेस गाव भी इसी मालानी प्रान्त मे

खड़े हुए दो जाल-वृक्ष यहाँ खूब प्रसिद्ध हैं और उन्हें पवित्र माना जाकर उनकी पूजा की जाती है। मालमजी के परिचय-प्रभाव से इन स्थानों के कूँओं का पानी मीठा बना रहता है जब कि आस पास का पानी मीठा नहीं है। घोड़ों की नसल-सुधार के लिये यह 'डांगी' नामक धोरा तो जगत् प्रसिद्ध है और इसीके कारण मालानी के घोड़े प्रसिद्ध हैं। ऐसी मान्यता है कि इस धोरे पर पैदा हुए घोड़े बढ़िया नसल के होते हैं। घोड़ी के ठाण देने के समय[४] उसे उस धोरे पर ले जाते हैं और बछड़ा पैदा होने पर उसके तमाम शरीर में धोरे की रेती मल दी जाती है। घोड़ी को धोरे पर ले जाना संभव नहीं होने पर यहाँ की रेती लाकर घुड़साला में बिछा दी जाती है। इस पर ये घोड़ों की इस नसल का नाम भी 'डांगी नसल रो घोड़ो' कहा जाता है। मालमजी और इस धोरे के महात्म्य के सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है—

धर डांगी मालम धणी परगट लूणी पास
लिखियो ज्यांनै लाभसी राडधरी रहवास

(जहां की धरा पर डांगी नामक धोरा स्थित है मालमजी जहां के स्वामी हैं और जिसके पास में होकर प्रवाह लूनी नदी वेग से बह रही है ऐसा राडधरा प्रदेश जिनके भाग्य में लिखा होता है उन्हीं भाग्यशालियों का वहां निवास होता है।)

यहाँ भक्तवर ईसरदासजी के संबंध में भी एक लोक-कथा प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि एक समय यहाँ ईसरदासजी भी आये

---

४ 'ठाण देणो' राजस्थानी का एक मुहावरा है जिसका अर्थ 'घोड़ी द्वारा बछेरे को जन्म देना' होता है।

थे । वहां पथिकों को पीने के लिये पानी का बहुत कष्ट था । उन्होंने भगवान से इस कष्ट के निवारणार्थ प्रार्थना की। भगवान ने उन्हें स्वप्न मे कहा कि तुम उस स्थान पर एक कुंआ खुदवा दो, और तुम ही वहा रहकर पथिको को पानी पिलाने की सेवा करना स्वीकार करो तो उसमें मीठा पानी निकल आयेगा। वहां आलमजी की सत्सग भी तुम्हे मिलती रहेगी । ईसरदासजी ने ऐसा ही किया । वहा एक झोंपडी मे भगवान् का सुमिरण करते हुए रहने लगे और उसीसे सलग्न एक प्याऊ लगवा दी और राहगीरो को पानी पिलाने की निर्लोभ सेवा करने लगे । पानी के साथ थकान दूर करने के लिये आश्रय और भगवान के प्रसाद के रूप में एक खोपरा (सूखे नारियल का गोला) प्रत्येक पथिक को देने की ईसरदासजी सेवा करने लगे । इस प्रकार ईसरदासजी वहां कई वर्ष तक पथिक सेवा करते रहे । एक दिन वहा के राजपूतों आदि ने निर्लोभ सेवा करने की बात को निरा ढोंग समझ कर रात के समय जब ईसरदासजी सो रहे थे, इनकी झोपडी में घुसकर खोपरो के थेलों को उठाकर ले आने की घृणित चेष्टा की । अदर जाकर वे खोपरों के बोरों को उठा लाये । प्रात काल होते ही उन्होने थेलो को खोला तो सभी मे खोपरो की जगह उन्हें कंडे मिले । उन्हे बडा आश्चय हुआ और भक्त के साथ दुर्व्यवहार करने के कारण पश्चाताप हुआ । इधर प्रात काल होते ही रात को विश्राम किये हुए पथिकगण जब जाने लगे तो ईसरदासजी उन्हें खोपरे बांटने के लिये बोरों में से खोपरे लेने गये, तो वहां बोरे ही नदारद। ईसरदासजी को उस समय बडा क्रोध आया और वे यह कहकर—

लगे हुए दो ताल-वृक्ष यहाँ खूब प्रसिद्ध हैं और उन्हें पवित्र माना जाकर उनकी पूजा की जाती है। मामाजी के परिचय-प्रभाव से इन स्थानों के कुँओं का पानी मीठा बना रहता है जब कि आस-पास का पानी मीठा नहीं है। घोड़ों की नसल-सुधार के लिये यह डांगी नामक धोरा तो जगत्-प्रसिद्ध है और इसीके कारण मामाजी के घोड़े प्रसिद्ध हैं। ऐसी मान्यता है कि इस धोरे पर पैदा हुए घोड़े बढ़िया नसल के होते हैं। घोड़ी के ठाण देने के समय[४] उसे इस धोरे पर ले जाते हैं और बछेरा पैदा होने पर उसके तमाम शरीर में धोरे की रेती मल दी जाती है। घोड़ी को धोरे पर ले जाना संभव नहीं होने पर वहाँ की रेती लाकर घुड़साला में बिछा दी जाती है। इस पर से घोड़ों की इस नसल का नाम भी 'डांगी नसल रो घोड़ो' कहा जाता है। मामाजी और इस धोरे के महात्म्य के सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है—

धर डांगी मामम बसी परवाह लूणी पास
लिखियो ज्यांनै लाभसी राड़धरो रहवास

(जहाँ की धरा पर डांगी नामक धोरा स्थित है मामाजी जहाँ के स्वामी हैं और जिसके पास में होकर प्रवाह लूनी नदी वेग से बह रही है ऐसा राड़धरा प्रदेश जिनके भाग्य में लिखा होता है उन्हीं भाग्यशालियों का वहाँ निवास होता है।)

यहाँ भक्तवर ईसरदासजी के संबंध में भी एक लोक-कथा प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि एक समय यहाँ ईसरदासजी भी आये

४ 'ठाण देणो' राजस्थानी का एक मुहावरा है जिसका अर्थ 'घोड़ी द्वारा बछेरे को जन्म देना' होता है।

इँडज्ज [अंडज] २६९

जीवों की उत्पत्ति के (अंडज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज) चार भेदों में से एक । पक्षी, साँप, मछली, छिपकली, गोह, गिरगट और बिसखपरा आदि जीव अण्डे से उत्पन्न होते हैं अतः ये अण्डज कहलाते हैं ।

उग्रसेन ४५

उग्रसेन यदुवंशी राजा आहुक के पुत्र और कंस के पिता थे। इनके नौ पुत्र तथा पांच कन्याएँ थीं । सबसे ज्येष्ठ पुत्र कंस ने अपने श्वसुर जरासंध की सहायता से उग्रसेन को राज-च्युत कर कारागार मे डाल दिया और स्वयं राजा बन बैठा। श्रीकृष्ण ने कंस को मार कर उग्रसेन को पुनः राजा बना दिया था ।

उत्तरा ४९

यह राजा विराट की पुत्री और महारथी अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु की पत्नी थी । महाभारत के युद्ध में अभिमन्यु की मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। युद्ध के अंत में अर्जुन ने अश्वत्थामा के सिर की मणि काट ली थी । अश्वत्थामा ने क्रुद्ध होकर अर्जुन का वंश-लोप करने के लिये उत्तरा के गर्भ पर इषिकास्त्र का प्रयोग किया जिससे गर्भस्थ बालक परीक्षित मृतावस्था में उत्पन्न हुआ। श्रीकृष्ण ने संजीवनी मंत्र के प्रभाव से परीक्षित को जीवित कर दिया। महाभारत के बाद परीक्षित चक्रवर्ती सम्राट् हुए ।

राजा भोला परजा पोची छाडू भोलां रो साथ
मवरै मत देखाडजै राडधरो यूं नाथ

यहाँ से रुष्ट होकर रवाना होगये। पनिहारी ने झोंपड़ी सूनी देखकर अपने हाथों से ही पानी खींच कर निकाला परन्तु अब तो वह पानी इतना खारा होगया था कि प्राणी-मात्र के पीने योग्य नहीं रह गया था। अब सर्वत्र खलबली मच गई। अपराधी और अन्य बहुत से लोग इकट्ठे होकर महाराज का पता लगाकर उनके पास पहुँचे और अपनी भूल के लिये क्षमायाचना चाहते हुए वापिस लौटने की प्रार्थना की। महाराज ने कहा कि यहां मैं अब रमाई और से तो नहीं रह सकूंगा। कुँए के आस पास का अमुक क्षेत्र सदा के लिये गोचर भूमि के लिये छोड़ दो। उसमें किसी का स्वामीत्व न रहे। उसमें से लकड़ी घास न काटा जाय और न उसमें खेती की जाय। इतना कर देने पर कुँए का पानी मीठा हो जायेगा और उस पर प्याऊ का प्रबन्ध तुम्हें करना होगा। इस शर्त पर ईसरदासजी वापिस लौट आये और कुछ समय वहां रहकर अपने स्थान को चले गये[१]।

---

१ भालणजी और भक्तवर ईसरदासजी के संबंध में उपरोक्त सूचनाएँ श्री रामकर्ण पुत्र श्री कोम एम-एम श्री एडवोकेट बालोतरा श्री भींवडमल रामचन्दजी बडोल (मालाणी) और हमारे अनुज श्री जगन्नाथप्रसाद पारीक जोधपुर से हमें प्राप्त हुई हैं। अतः हम इनके बड़े आभारी हैं।

—सम्पादक

इंडज्ज [अंडज] २६९

जीवो की उत्पत्ति के (अंडज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) चार भेदो में से एक। पक्षी, सांप, मछली, छिपकली, गोह, गिरगट और विसखपरा आदि जीव अण्डे से उत्पन्न होते हैं अतः ये अण्डज कहलाते हैं।

उग्रसेन ४५

उग्रसेन यदुवशी राजा आहुक के पुत्र और कंस के पिता थे। इनके नौ पुत्र तथा पांच कन्याएँ थी। सबसे ज्येष्ठ पुत्र कंस ने अपने श्वसुर जरासंध की सहायता से उग्रसेन को राज-च्युत कर कारागार मे डाल दिया और स्वयं राजा बन बैठा। श्रीकृष्ण ने कंस को मार कर उग्रसेन को पुनः राजा बना दिया था।

उत्तरा ४९

यह राजा विराट की पुत्री और महारथी अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु की पत्नी थी। महाभारत के युद्ध में अभिमन्यु की मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। युद्ध के अंत में अर्जुन ने अश्वत्थामा के सिर की मणि काट ली थी। अश्वत्थामा ने क्रुद्ध होकर अर्जुन का वंश-लोप करने के लिये उत्तरा के गर्भ पर इषिकास्त्र का प्रयोग किया जिससे गर्भस्थ बालक परीक्षित मृतावस्था में उत्पन्न हुआ। श्रीकृष्ण ने संजीवनी मंत्र के प्रभाव से परीक्षित को जीवित कर दिया। महाभारत के बाद परीक्षित चक्रवर्ती सम्राट हुए।

अज्ञातवास के समय मत्स्य देशाधिपति विराट् के यहाँ बृहन्नला (बृहन्नटा) स्त्री के वेष में अर्जुन ने उत्तरा को गान और नृत्य सिखाया था। पांडव जब प्रकट हो गये तो विराट् ने उत्तरा को अर्जुन से ब्याह देने की इच्छा प्रकट की। किन्तु अर्जुन ने इसे स्वीकार नहीं किया और कहा कि मैंने इसे शिक्षा दी है मेरे लिये तो यह पुत्री के समान है। तब विराट ने उसे अभिमन्यु के साथ ब्याह दी।

उद्भिज्ज [उद्भिज्ज] २६९

जीवों की उत्पत्ति के (अण्डज स्वेदज जरायुज और उद्भिज) चार भेदों में से एक। भूमि को भेदन कर निकलने वाले वृक्ष लता, पौधे आदि उद्भिज्ज कहलाते हैं।

ओंकार ८९, १८७

प्रार्थना वैदिक-मंत्र धार्मिक क्रिया तथा ग्रन्थ के प्रारम्भ में उच्चारण करने तथा लिखा जाने वाला 'अ' 'उ' और 'म्' इन तीनों अक्षरों से बना हुआ 'ॐ' शब्द। ये तीनों अक्षर ऋक् यजु और साम इन तीनों वेदों के सूचक हैं। उपनिषदों में इसे अध्यात्म शक्तिवान्, सर्व-श्रेष्ठ और मनन करने योग्य बताया है। ॐ का 'अ' विष्णु 'उ' शिव और 'म्' ब्रह्मा— इस प्रकार इन तीनों देवों की त्रिपुटी इस प्रणव-मंत्र में समावेश है।

ग्रोधव [उद्धव] २४७

उद्धव श्रीकृष्ण के सखा, परामर्शदाता ग्रौर परम भक्त थे। ये सदैव श्रीकृष्ण के समागम मे ही रहते, ग्रत. दोनो मे ग्रत्यन्त प्रेम था। श्रीकृष्ण गोकुल से मथुरा ग्रागये तो नद यशोदा इनके वियोग से बहुत दुखी रहने लगे, उनको सान्त्वना देने ग्रौर ज्ञान द्वारा वियोग-कष्ट का समाधान करने के लिये उद्धव को भेजा था। वियोग से दुखी गोपियों को भी ग्रपने स्वरूप का बोध कराने के लिये उन्हें ज्ञानोपदेश करने का भगवान् ने उद्धवजी को ग्रादेश दिया था। परन्तु गोपियो की ग्रनन्य भक्ति के कारण उनसे परास्त होकर, परमात्म-स्वरूप मे लीन रहने वाले उद्धवजी साकार ब्रह्म श्रीकृष्ण की भक्ति मे रग जाते हैं ग्रौर उनकी ग्रतुल प्रेमाभक्ति के शिष्य बन जाते हैं।

भगवान ग्रब शीघ्र ही निजधाम पधारने वाले हैं, ऐसा सुनकर उद्धवजी ने श्रीकृष्ण से प्रार्थना की कि मुझे ग्राप ग्रपने साथ लेते पधारें। श्रीकृष्ण ने उद्धव मे ग्रनन्य भक्ति ग्रौर ज्ञानाधिकार देखकर ग्रात्मतत्व ग्रौर ब्रह्मज्ञान का उपदेश देकर इन्हे शान्ति दी ग्रौर बदरिकाश्रम मे जाकर रहने का ग्रादेश दिया।

भक्त-वाणी

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णश ।
यासां हरिकथोद्गीत पुनाति भुवनत्रयम् ॥

(श्रीमद्भागवत)

भक्तराज उद्धव कह रहे हैं—

नन्द बाबा के व्रज मे रहने वाली गोपाङ्गनाग्रो की चरण-रज

को मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ उसे सिर पर चढ़ाता हूँ। अहा! इस गोपियों ने भगवान् श्रीकृष्ण की लीला-कथा के संबंध में जो कुछ गान किया है वह तीनों लोकों को पवित्र कर रहा है और सर्वदा करता रहेगा।

कंस ६४

यह मथुरा के राजा उग्रसेन का क्षेत्रज तथा दानवराज द्रुमिल का औरस पुत्र था। बड़े होकर कंस ने मगधराज जरासंध की अस्ति तथा प्राप्ति नाम की दो कन्याओं से विवाह किया था। अपने पितृव्य की पुत्री देवकी का विवाह उन्होंने वसुदेव के साथ किया था। जब वसुदेव देवकी से विवाह कर अपने घर जा रहे थे तो आकाश वाणी हुई कि देवकी के गर्भ से उत्पन्न होने वाला आठवां पुत्र तुम्हारा वध करेगा। कंस ने यह सुनकर वसुदेव-देवकी को कारागार में बंद कर दिया। इसके बाद देवकी की जितनी संतानें हुईं उन सभी को उसने मार डाला। आठवें गर्भ से भगवान् कृष्ण प्रकट हुए किन्तु वसुदेव उन्हें भगवान की माया से गोकुल में गोपराज नन्द के यहाँ रख आये। आगे बड़े होकर भगवान श्रीकृष्ण ने ही इसका वध किया।

कच्छप १३

भगवान् विष्णु का दूसरा अवतार। देवासुर संग्राम में जो वस्तुएं खो गई थी उनकी प्राप्ति के लिए समुद्र-मंथन का आयोजन हुआ तो मथनी बनाये गये मंदराचल पर्वत को क्षीर सागर में धारण करने के लिए भगवान् विष्णु ने कच्छप का रूप धारण किया[1]।

---

१ सामुद्रिक जीव-विज्ञान का आविष्कार सर्वप्रथम भारत के आर्यों ने किया और उसका अनेक रूपों से अलंकृत वर्णन भी भारतीय आर्ष-ग्रन्थों में पाया जाना माना जाता है।

कणाद २४३

षड्-दर्शन के अन्तर्गत वैशेषिक दर्शन के निर्माता कणाद एक प्रसिद्ध और प्राचीन ऋषियो मे से हैं। दर्शन में परमाणुवाद का प्रचार सर्व प्रथम इन्होने ही किया है।

कन्ह, कान्ह, किसन, क्रिसन, क्रिसन्न [कृष्ण] १३, २६, ४७, ६३, २१८, २५६, २६१, ३१६, ३४३

विश्व-धर्म के रूप मे कर्म और ज्ञान की महान् गूढ गुत्थियों को सुलझाकर एक मात्र ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता के रूप मे अपूर्व, अद्वितीय और सर्वोपरि ज्ञान को ससार के सम्मुख सर्व प्रथम प्रस्तुत करने वाले और अनेक अद्‌भुत लीलाओं के लीलावतार वसुदेव और देवकी के आठवें पुत्र भगवान् श्रीकृष्ण।

कौरव पाण्डवों के महाभारत युद्ध में श्रीकृष्ण महारथी अर्जुन के सारथी बने और भीष्म, द्रोण और कर्ण आदि महारथियो के सम्मुख पाण्डवो की विजय के रूप में अपूर्व राजनीति और कुशलता के साथ युद्ध का सम्पादन किया। प्रजा को अनेक-विध कष्ट पहुँचाने वाले अनेक राजाओं और दुष्टों का नाश करके ससार में शान्ति स्थापित की। श्रीकृष्ण के ऐसे अनेक सुकृत्य और अद्‌भुत और अलौकिक कृत्य हैं जिनका भागवत आदि पुराण ग्रथो मे विस्तार से वर्णन किया हुआ है।

राजस्थानी साहित्य मे भी भक्त-कवियों द्वारा रचे हुए 'नागदमण, गजमोख, किसनजी री वेल और क्रिसन रुकमणी री वेलि एव गीता की राजस्थानी टीकाएँ आदि अनेक उच्च कोटि के ग्रन्थ श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में प्राप्त हैं।

कपिल, कपिल्ल, कपिलेसर [कपिल, कपिलेश्वर]

१२, ६२, २४१

सांख्य-दर्शन का प्रवर्तक विष्णु का पाँचवाँ अवतार। भगवान् विष्णु ने कर्दम मुनि की पत्नी देवहूती की तपस्या से प्रसन्न होकर उसकी इच्छानुसार स्वयं उसके गर्भ में आकर अवतार लिया था।

आर्ष-वाणी :—

> अथैवाहि खलस्य श्रीः सैव लोक विनाशिनी।
> यथा दवाग्नेः पवनः पन्नगस्य पयो यथा॥
>
> (भगवान् कपिलदेव)

दुष्ट के पास लक्ष्मी हो तो वह लोक का नाश करने वाली ही होती है। जैसे वायु अग्नि की ज्वाला को बढ़ाने में सहायक होता है और दूध साँप के विष को बढ़ाने में कारण होता है वैसे ही दुष्ट की लक्ष्मी उसकी दुष्टता को बढ़ा देती है।

कण्ण, करण्ण [कर्ण] ८१, ३९८

यह कुन्ती के गर्भ से उत्पन्न सूर्य के पुत्र हैं। कुन्ती जब कुंवारी थी तब उसने ऋषि दुर्वासा द्वारा बताये गये मंत्र द्वारा सूर्य का आह्वान किया। फल स्वरूप अनुप बाण कुण्डल और कवच सहित कर्ण का जन्म हुआ। कुन्ती ने लोक-लाज के भय से इन्हें गंगा नदी में बहा दिया। धृतराष्ट्र के सूत अधिरथ ने उठा कर अपनी स्त्री राधा को पालन-पोषणार्थ सौंप दिया। इसीसे यह सूतपुत्र तथा राधेय कहलाये। कर्ण को शस्त्र-विद्या की शिक्षा द्रोणाचार्य ने ही दी।

किन्तु इनकी उत्पत्ति के विषय मे सन्देह होने के कारण उन्होने इन्हें ब्रह्मास्त्र का प्रयोग नही सिखाया था। तब ये भगवान् परशुराम के पास गये और अपने को ब्राह्मण बतलाकर शस्त्र-विद्या सीखने लगे। परन्तु परशुराम को ज्ञात होगया कि यह ब्राह्मण नही हैं तो उन्होने श्राप दे दिया कि 'जिस समय तुम्हे इस विद्या की विशेष आवश्यकता होगी उसी समय तुम इसे भूल जाओगे।" इनकी दुर्योधन से बचपन ही मे विशेष मित्रता होगई थी। दुर्योधन ने इन्हें अग देश का अधिपति बना दिया था। मत्स्य-वेध कर देने पर भी द्रौपदी ने सूतपुत्र होने के कारण इनके साथ व्याह करना अस्वीकार कर दिया। सूतपुत्र होने ही के कारण अर्जुन इन्हे हेय दृष्टि से देखते थे। भीष्म भी इसी कारण इन्हे सूत ही समझते थे।

कुन्ती के द्वारा अपने जन्म का वृत्तान्त जानकर तथा पाण्डव पक्ष मे आजाने की उसकी प्रार्थना को इन्होंने अस्वीकार कर दिया। इतना वचन दे दिया कि तुम्हारे पाचो पुत्र कायम रहेगे। मेरा वैर अर्जुन मे है अत हम दोनो में से कोई जीवित रह सकेगा। भीष्म तथा द्रोण के अनन्तर कर्ण ही महाभारत युद्ध के सेनापति बने थे। तीन दिन युद्ध का सचालन करने के बाद अर्जुन के हाथों इनका वध हुआ। कर्ण दानियो मे सर्वाग्रणी कहे जाते हैं। कोई भी याचक उनसे जो कुछ भी मांगता था, कर्ण वही उसे दे देता था। इन्द्र के याचना करने पर अपने शरीर से लगे कवच और कुण्डल तोड कर उन्हें दान में दे दिया था। तभी से इनका नाम कर्ण पडा। पहले इनका नाम वसुषेण था। एक बार भगवान् कृष्ण ने ब्राह्मण वेश में

अर्जुन के पुत्र के मांस की याचना की। कर्ण ने प्रसन्नता से उसकी इच्छा पूर्ण की परन्तु श्रीकृष्ण ने संजीवनी-मंत्र द्वारा उसे जीवित कर दिया। कर्ण महा-दानी था। नित्य प्रातःकाल एक प्रहर तक किसी भी याचक को मनवांछित दान देते रहने की अपनी प्रतिज्ञा अनेक कष्टों को सहते हुए भी दृढ़ता से निभाते रहने के कारण उस प्रातःकाल की एक प्रहर का नाम 'कर्ण की बेला' के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान् श्रीकृष्ण कर्ण की दानशीलता और भक्ति से अत्यन्त प्रसन्न थे। इसीलिये इनका दाह-संस्कार भगवान् श्रीकृष्ण ने इन्हें अपने हाथों में रख कर किया था। अनन्य भक्ति और अतुलनीय दानशीलता के कारण पांचों पांडवों से भी अधिक भगवान् की कृपा और स्नेह को भक्त गिरदासजी ने 'कर दानियो करन्न (११८)' अपने उक्त पद की एक पंक्ति में प्रकट किया है।

करम, करम्म कम कम्म [कर्म] ४, ११, ५२, १२१, १५७, १७१, २२५, २६२, ३००, ३०३, ३०५, ३०६, ३०८ ३०९ ३११, ३२०

१ शुभ अथवा अशुभ क्रिया से उत्पन्न अदृष्ट। शुभाशुभ सूचक कर्म-जन्य अदृष्ट।

पूर्व जन्मों के कर्मों द्वारा संचित पुण्य-पाप जो इस जन्म के सुख-दुःख के कारण माने जाते हैं संचित-कर्म।

२ शुभ अथवा अशुभ अदृष्ट को उत्पन्न करने वाला व्यापार। यह व्यापार– नित्य नैमित्तिक काम्य प्रायश्चित्त और निषिद्ध पांच प्रकार का होता है और इसी कारण कर्म के भी ये ही पांच प्रकार कहे गये हैं।

कर्म प्रधान विश्व करि राखा,

जो जस करहिं सो तस फल चाखा।

(गो० तुलसीदासजी)

कलकी, कळंकी [कल्कि] १३, ७१

कलियुग और उसके अत्याचारियो को नाश करके सतयुग का पुन आरम्भ करने के लिये भविष्य मे होने वाला भगवान् विष्णु का चौबीसवा अवतार।

कल्प १३३

वेद के प्रधान छ अगो में से एक जिसमे यज्ञो, सस्कारों आदि धार्मिक कर्त्तव्यो की विधिया बताई गई हैं। यज्ञ में काम आनेवाले पात्रो को बनाने की विधियो का भी इसमें विधान है। श्रौत, आश्व लायन, कात्यायन, आपस्तव और गृह्यसूत्र आदि इसीके अन्तर्गत हैं। यह यजुर्वेद का श्राद्धकल्पात्मक परिशिष्ट भाग है।

कागभुसड [काकभुशुंडि] १४८

भगवान् राम के बालरूप के एक अनन्य भक्त जो कौवे के रूप में रहते हैं। ये अमर हैं। पूर्व जन्म के ये ब्राह्मण थे, परन्तु लोमश ऋषि के शाप से कौवे की योनि प्राप्त हुई। ये प्रकाण्ड ज्ञानी हैं।

भक्त-वाणी

पर उपकार बचन मन काया, सत सुभाउ सहज खगराया।

सत सहहिं दुख परहित लागी, परदुख हेतु असत अभागी।

संत उदय सतत सुखकारी, विस्व सुखद जिमि इन्दु तमारी।

परम धर्म श्रुति विदित अहिंसा, परनिंदा सम अघ न गरीसा.

(काकभुशुण्डि : रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड)

कातकसांम [कार्तिकस्वामि] २३८

स्वामिकार्तिक महादेव के एक पुत्र हैं। छः कृत्तिकाओं से उत्पन्न होने के कारण इनका नाम कार्तिकेय प्रसिद्ध हुआ। इनके छः मुख और बारह हाथ होने के कारण इन्हें षण्मुख और षडानन भी कहते हैं। स्कन्द गांगेय और अग्निभू भी इनके नाम हैं। ये देव-सेनापति हैं। इन्होंने तारकासुर का वध किया था।

काळयवन [कालयवन] ४७

यह महर्षि गार्ग्य का पुत्र था। बाल्यावस्था में अपुत्रक यवन राज ने इसका पालन किया था। उसके मरने पर यही उसका अधिकारी हुआ था। यह बहुत ही तीव्र पराक्रमी राजाओं में गिना जाने लगा। जरासंध के साथ मिलकर इसने मथुरा पर चढ़ाई की। इससे यादव घबरा गये और श्रीकृष्ण की सलाह से मथुरा छोड़कर द्वारका चले गये। श्रीकृष्ण और कालयवन से युद्ध होने लगा। श्रीकृष्ण युद्ध क्षेत्र से भागकर हिमालय की गुफा में जहाँ मान्धाता का पुत्र मुचुकुन्द सोया हुआ था चले गये और चुपचाप उसके ऊपर अपना पीताम्बर डालकर उसकी खाट के पीछे छिप गये। कालयवन भी उनके पीछे २ वहाँ पहुँचा। उसने निद्रित मुचुकुन्द को श्रीकृष्ण समझा और पैर से ठोकर मारकर उठाने लगा। मुचुकुन्द उठा और ज्योंही उसने कालयवन की ओर दृष्टि की त्योंही वह भस्म हो गया।

कासप [कश्यप] ३४५

विख्यात प्रजापति महर्षि कश्यप ब्रह्मा के पौत्र और मरीचि के मानस पुत्र थे। ये सप्तर्षियो मे से एक हैं।

आर्ष-वाणी

पुण्यस्य लोको मधुमान्घृतार्चि-
हिरण्यज्योतिरमृतस्य नाभि ।
तत्र प्रेत्य मोदते ब्रह्मचारी
न तत्र मृत्युर्न जरा नोत दु खम् ॥

(महाभारत, शान्तिपर्व अ० ७३)

पुण्यात्माओं को प्राप्त होने वाला लोक मधुर सुख की खान और अमृत (मोक्ष) का केन्द्र होता है। वहा नित्य घृत के दीपक प्रकाश कर रहे हैं। उसमें सुवर्ण के समान प्रकाश फैला रहता है। वहां न तो वृद्धावस्था का प्रवेश है और न मृत्यु का। वहा किसी को किसी प्रकार का दु ख नही होता। ब्रह्मचारी लोग मृत्यु के पश्चात् ऐसे ही लोकों मे जाकर आनन्द को प्राप्त होते हैं।

किकेई [कैकेयी] ३७

कैकेयी महाराज कैकय की पुत्री तथा महाराज दशरथ की तृतीय रानी थी। यह अपने समय की अद्वितीय सुन्दरी थी। इन्हीं के गर्भ से भरत की उत्पत्ति हुई थी। एक बार देवासुर सग्राम में आहत हुए महाराज दशरथ की इन्होंने बडी सेवा-सुश्रूषा की थी जिससे प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें दो वरदान देने का वचन दिया था। राम का

राज्याभिषेक का अवसर निकट आने पर इन्होंने अपनी मंथरा नामक दासी के बहकावे में आकर राम के लिए चौदह वर्ष का वनवास और भरत के लिए अयोध्या का राज्य ये दोनों वरदान रूप में मांग लिये। पिता के वचनों का पालन करने के लिये राम वन को चले गये। दशरथ ने उनके वियोग में प्राण त्याग दिये। भरत ने राज्य अंगीकार नहीं किया। कैकेयी को सभी प्रकार कुफल मिला।

कीट कीटभ [कैटभ] २०, ८७

मधु नामक दैत्य का भाई कैटभ। भगवान् विष्णु ने जब इन्हें मारा तो इनके शरीर के मेद से संपूर्ण पृथ्वी भर गई। तभी से पृथ्वी का नाम मेदिनी पड़ा।

कुँभ, कुँसेरा [कुम्भकरण] ४२,८०

विशालकाय कुंभकर्ण रावण का छोटा भाई था। उत्पन्न होते ही यह हजारों लोगों को खा गया। लोगों का हाहाकार सुनकर इन्द्र ने इस पर वज्र चलाया किन्तु इसने घोर गर्जना करके ऐरावत का ही दांत उखाड़ लिया और उसको इन्द्र के ऊपर दे मारा। देवता और लोगों की प्रार्थना पर ब्रह्माजी ने शाप दे दिया कि यह सदा सोता ही रहे किन्तु रावण के प्रार्थना करने पर ब्रह्माजी ने यह कृपा की कि छः महीनों में एक दिन के लिये नींद खुल जायगी। राम रावण युद्ध के समय इसको जगाने के लिये इसके गले में बंधी रस्सी को एक हजार हाथियों से खिंचवाना पड़ा था एवं कर्णरंध्र और नासारंध्रों में पानी के नाले बहाये गये थे। जगने पर जब इसे मालूम हुआ कि रावण

ने सीता का हरण किया है तो इसे बड़ा क्षोभ हुआ और रावण को फटकारा तथा सीता को वापिस लौटा देने का आग्रह किया। किन्तु रावण की दलीलो ने इसे युद्ध के लिये उत्तेजित कर दिया। इसने बड़ा भयकर युद्ध किया। अत में श्रीराम के हाथो से इसका वध हुआ।

कुंभज २४३

अगस्त्य ऋषि का ही दूसरा नाम कुभज है। ये ऋग्वेद की कई ऋचाओ के रचियता हैं। जन्म के समय अगूठे के बराबर लम्बे थे। देवासुर सग्राम के समय जब दानव सागर में जाकर छिप गये, तो ये सागर को ही पी गये। वनवास के समय राम अगस्त्य आश्रम मे गये थे। मुनिने राम को धनुष बाण आदि शस्त्र दिये थे।

आर्ष-वाणी

सत्य तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रह ।
सर्वभूत दया तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च ॥
दान तीर्थं दमस्तीर्थं सतोपस्तीर्थमुच्यते ।
ब्रह्मचर्यं पर तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता ॥
ज्ञान तीर्थं धृतिस्तीर्थं तपस्तीर्थमुदाहृतम् ।
तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनस परा ॥

(महर्षि अगस्त्य : स्कन्दपुराण)

कुब्ज्जा [कुब्जा] २५४

कंस की माल्यानुलेपन-वाहिनी एक दासी। श्री कृष्ण और बलराम अक्रूर के साथ कस के यहाँ यज्ञ मे आमन्त्रित होकर मथुरा आये, जब

कुब्जा को इन्होंने मार्ग में देखा जो कंस के यहां सुगन्ध-अनुलेपन ले जा रही थी। श्रीकृष्ण ने कुब्जा से अनुलेपन मांगा। कुब्जा ने बड़ी प्रसन्नता से उन्हें अनुलेपन दिया। श्री कृष्ण ने प्रसन्न होकर उसका कुबड़ापन दूर करके उसको एक सुन्दर युवती बना दिया। इसे कुबड़ी भी कहा जाता है।

कुरखेत कुरछेत [कुरुक्षेत्र] ४६, ३४६

एक अति प्राचीन तीर्थ। कुरु ने इस स्थान को सबसे पहले आविष्कृत किया था और इसी स्थान पर यज्ञ करके इसकी उन्नति की थी। कुरुक्षेत्र की सीमा के विषय में महाभारत में लिखा है कि दृषद्वती नदी के उत्तर और सरस्वती के दक्षिण में कुरुक्षेत्र है। इस तीर्थ का परिमाण बारह योजन है इसमें ३६६ तीर्थ विद्यमान हैं। महाभारत का युद्ध यहीं हुआ था। यह अम्बाला और दिल्ली के बीच में स्थित है। महाभारत में तरंतुक से अरंतुक और रामहृद से मच कुक इनके बीच में आये हुए प्रदेश को कुरुक्षेत्र कहा गया है।

केदार ३४६

हिमालय में स्थित हिन्दुओं का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ स्थान। यहां भगवान शंकर का लिंगस्वरूप स्थापित है जो द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। केदारनाथ तीर्थ सागर तल से ११७५१ फीट ऊंची हिमालय की चोटी पर स्थित है। केदारनाथ पर्वत का सर्वोपरि दुर्गम भाग 'महापथ' तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है। यह सदा बर्फ से ढका रहता है। वैशाख से कार्तिक मास तक भारत के सभी भागों से अनेकों यात्री केदारनाथ के दर्शनों को आते हैं।

केसि [केसी] ७३

यह एक राक्षस था। कंस की आज्ञा से यह एक घोडे का रूप धारण करके श्रीकृष्ण भगवान् का वध करने के लिए वृन्दावन गया परन्तु वहां वह भगवान् द्वारा मारा डाला गया।

कोयलाराणी [कोकिलारोहिणी] २

'कोयलाराणी' कोकिलारोहिणी का विकृत लोक-शब्द है। कोइलाराणी और कोहलाराणी पाठ भी कई प्रतियों में मिलता है। सौराष्ट्र में राजकोट से द्वारका जाने वाली पश्चिम रेलवे लाइन पर भाटिया स्टेशन से २१ मील पर 'श्री हर्षदमाता' का एक प्राचीन मंदिर कोयल नामक मनोहर पहाडी पर बना हुआ है। पहाडी के नीचे तक समुद्र की एक पतली शाखा आ जाने से इसकी रमणीयता और भी बढ गई है। इस स्थान की एक बहुत प्रसिद्ध पौराणिक कथा है कि शंखासुर नामक दैत्य के वध के निमित्त भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी कुलदेवी महाशक्ति जगदम्बा से सहायता की प्रार्थना की। महाशक्ति ने कोयल के रूप में उनके शस्त्र पर बैठकर साथ में चलने का वचन दिया। महामाया की कृपा से समस्त यादवी-सेना बिना किसी नौका इत्यादि की सहायता के समुद्र को पार करती हुई इस स्थान पर आ पहुची। स्थान की रमणीयता पर मुग्ध होकर भगवान् श्रीकृष्ण ने पर्वत शिखर पर महाशक्ति का एक सुन्दर मंदिर निर्माण करवाया और अपनी आराधना के लिये महामाया की एक भव्य मूर्ति स्थापित की।

भगवती महामाया ने कोयल का रूप धारण किया था अतः पहाड़ी का नाम कोयल और भगवान् के नाम को सिद्ध कर देने के कारण देवी का नाम 'हरिसिद्धि' प्रसिद्ध हुआ। कालान्तर में हरिसिद्धि का 'हर्षद' और फिर कोयल पर्वत पर अवस्थित होने के कारण कोकलारानी (कोयलारानी) के नाम से प्रसिद्ध हो गया। यह स्थान सिद्ध-पीठ माना जाता है। श्री मद्भागवत में एक कथा है जिसमें लक्ष्मी का वाहन कोयल भी लिखा है।

महामाया आदिशक्ति के उपासक कोहल नाम के एक प्रख्यात ऋषि भी हुए हैं जिन्होंने सोमेश्वर से संगीत शास्त्र का अध्ययन किया था। कहा जाता है कि इन्होंने अपनी संगीत विद्या से भगवती को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त किया था। ऋषि की अनन्य उपासना के कारण देवी का नाम कोहल रानी के नामसे प्रसिद्ध होगया।

एक दूसरा स्थान जिला इन्दौर के भानुपुरा परगने में भानुपुरा से छः मील दूर 'कोहला' ग्राम प्राचीन अवशेषों के लिये प्रसिद्ध है। कोहला में अनेक प्राचीन बड़े-बड़े और सुन्दर मन्दिर बने हुए हैं जिनमें कई देवी मन्दिर भी कहे जाते हैं। ऐसा सुना गया है कि कोहला रानी नाम के प्रसिद्ध मन्दिर के कारण गांव का नाम भी 'कोहला' प्रसिद्ध हुआ। डा० डी० सी० सोमा के भारतीय अनुशीलन' नामक ग्रन्थ में और प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑफ दी ए. स मध्य भारत १९२० में इस स्थान का उल्लेख हुआ है।

हम्मीररासो की अनेक हस्तलिखित प्रतियों में 'कोहलारानी' पाठ भी मिलता है। संभव है यह कोहल ऋषि अथवा कोहला ग्राम से

सबंधित हो। पर हमारी अपनी मान्यता अनुसार शुद्ध पाठ 'कोयला-राणी' है और यह सौराष्ट्र के कोयल पर्वत से ही संबंधित है। सौराष्ट्र, गुजरात, कच्छ और राजस्थान के पश्चिम और दक्षिणी प्रदेशों में अब भी इस देवी की बहुत मान्यता है। भक्तवर ईसरदासजी की आयु का अधिक काल सौराष्ट्र में ही बीता है और उन्होंने इसी देवी की आराधना में यह छंद कहा है।

पीरदान लालस कृत हिंगळाज रासौ' में—

"कोयलागिर पाया घघ घमाया, मघ कीटग ते माराया।"

इसी देवी की आराधना में आया है।

इसी देवी के महिमा-परक प्राचीन पदों में 'माताजी री चरचा' नामक यह पद भी बहुत प्रसिद्ध है—

कोइलो परबत पू घळो रे लोय
जठै रमं सुरां री राय रे, जाश्रीडा
ऊपर अब गाजियो रे लोय
बरसण द्यो म्हारी राय रे, जाशीडा।

कोरम [कूर्म] ३११

दे० 'कच्छ'

कौरव ९६

चन्द्रवंशी राजा कुरु के वंशज धृतराष्ट्र के एक सौ पुत्र कौरव नाम से प्रसिद्ध हुए। पांडवों और कौरवों के महाभारत युद्ध में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन के रथ के सारथी बने थे। भगवान् श्री कृष्ण के परामर्शानुसार युद्ध करके कौरवों के ऊपर पांडवों ने विजय प्राप्त की थी।

खर दूषण [खर, दूषण] ३८

खर और दूषण दोनों भाई थे। रावण का राज्य गोदावरी तीरस्थ दण्डकारण्य तक विस्तृत था। राज्य के प्रान्त भाग की रक्षा करने के लिए खर और दूषण १४ हजार सेना लेकर दण्डकारण्य में रहा करते थे। शूर्पनखा की नाक लक्ष्मण द्वारा काट लिए जाने पर खर और दूषण ने राम पर आक्रमण किया। इस युद्ध में ये दोनों भाई श्रीराम द्वारा मारे गये।

गंगा १६०

भारत की एक अति पुण्यसलिला प्रसिद्ध नदी। प्राचीन काल से ही ऋषियों ने इस नदी की महिमा गायी है। ऋग्वेद में भी इसका उल्लेख मिलता है। इसकी उत्पत्ति युगानुसार पुराणों में अनेक प्रकार से वर्णित है। भगीरथ द्वारा लाई जाने के कारण भागीरथी राजर्षि जह्नु द्वारा पी जाने के कारण जाह्नवी और विष्णु के चरणों से निःसृत होने के कारण विष्णुपदी आदि गंगा के अनेक नाम हैं। हरिद्वार में हरि की पैड़ी पर गंगा में स्नान करने का महान् पुण्य शास्त्रों में वर्णित है। दीर्घ काल तक संगृहीत गंगा-जल में कीटोत्पत्ति होकर कोई विकार उत्पन्न नहीं होता।

गांगेय [गांगेय] ४६

सोमवंशी पुरुकुलोत्पन्न महाराज शान्तनु के देवव्रत नामक पुत्र। गंगा से उत्पन्न होने के कारण इन्हें गांगेय भी कहा जाता है। इनके पिता ने सत्यवती नामक धीवर द्वारा पोषित कन्या से विवाह करने की इच्छा प्रकट की। धीवर ने इस शर्त पर विवाह करना

स्वीकार किया कि सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न पुत्र ही राज्याधिकारी हो। पिता की इच्छापूर्ति के लिये आजन्म राज्य का त्याग और राज्य पर अधिकार करने वाली उनके कोई सन्तान नही हो अतः आजन्म ब्रह्मचारी रहने की भीषण प्रतिज्ञा की। इससे इनका नाम भीष्म बहु-प्रख्यात हुआ।

भीष्म महापराक्रमी, महारथी, महा विद्वान् और सत्यवक्ता थे।

भीष्म द्वारा भीषण शस्त्राग्नि वर्षा से पाडव-सेना का अपार सहार होगया। भीष्म के होते हुए विजय प्राप्त करना असम्भव जानकर रात को गुप्त रूप से श्री कृष्ण युधिष्ठिर को साथ लेकर भीष्म से यह पूछने गये कि उनकी मृत्यु रणक्षेत्र में किस प्रकार हो सकती है। शास्त्र और शस्त्र विद्या में, सत्यवक्ताओ मे और आयु इत्यादि बातो में कौरव-पाडव दोनों पक्षो में वृद्ध और पितामह होने के कारण इन्होंने जाकर इनके चरणों मे प्रणाम किया और अपनी दुख-गाथा सुनाई। भीष्म-पितामह ने अपनी मृत्यु का जो कारण बतलाया, वह जगत्-प्रसिद्ध है। दूसरे ही दिन अर्जुन ने शिखडी रूप स्त्री को महारथी बनाकर उसकी ओट मे बाणो की वर्षा करके भीष्मपितामह को धराशायी कर दिया। भीष्म सत्य वक्ता, अखड ब्रह्मचारी और परमात्मनिष्ठ थे अत इन्हें इच्छा-मृत्यु का वरदान प्राप्त था। सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायन में आने तक अप्रतिम वीरोचित कर्त्तव्य का पालन करते हुए इन्होने ऊर्ध्व बाणो की शय्या पर शयन किया और तब तक अपने प्राणों का विसर्जन नहीं होने दिया।

अर्जुन के बाणों से आहत शरशय्या पर सोते हुए भीष्म पितामह के पास उपदेश श्रवण करने के लिये अनेकों महर्षि राजर्षि और ब्रह्मर्षियों का समाज इकट्ठा होगया था। कृष्ण के अनेक-विध समझाने पर भी युद्ध में कुल-हत्या के सम्बन्ध में युधिष्ठिर को शान्ति नहीं मिल सकी तब श्रीकृष्ण उन्हें भीष्मपितामह के पास लेकर आये। भीष्मपितामह के जिस उपदेश द्वारा युधिष्ठिर को शान्ति प्राप्त हुई वह महाभारत में अनुशासन-पर्व और शान्ति-पर्व के नामों से प्रसिद्ध है।

भीष्म-वाणी

नास्ति सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम्।
स्थितिर्हि सत्यं धर्मस्य तस्मात् सत्यं न लोपयेत्॥

(शान्तिपर्व १६२। २४)

सत्य से बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं और असत्य से बढ़कर कोई पाप नहीं। सत्य ही धर्म का आधार है अतः सत्य का लोप कभी नहीं होने दें।

गजराज २१

पाण्ड्य देश का अधिपति इन्द्रद्युम्न अगस्त्य ऋषि के शाप से गज-योनि को प्राप्त हो गया था। चौथे तामस मन्वन्तर में भगवान विष्णु ने हरि अवतार धारण करके गजेन्द्र और ग्राह दोनों का उद्धार किया था। गज पानी में क्रीड़ा कर रहा था। ग्राह ने उसका पांव पकड़ लिया और उसे पानी में खींचने। इसमें भी बहुत बल

लगाया, किन्तु अंत मे हार जाने पर श्री हरि का सुमिरण किया। हरि ने प्रगट होकर ग्राह से गज को छुडाकर पशुयोनि से उसकी मुक्ति की।

तत्रापि जज्ञे भगवान् हरिण्यां हरिमेधस
हरिरित्याहृतो येन गजेन्द्रो मोचितो ग्रहात् ॥

(भागवत स्क० ८)

गणेस [गणेश] २३७

भगवान् शिव के गणो के अधिपति होने के कारण इन्हें गणेश कहा जाता है। इनके जन्म के समय अन्य देवताओं के साथ शनि भी देखने आये थे। शनि के देखते ही गणेश का सिर धड से अलग होगया। विष्णु के कहने से इन्द्र के एक हाथी का सिर काट कर गणेश को लगा दिया गया। तब से यह गजानन भी कहलाने लगे। हस्ति-मुख देख कर कोई इनका तिरस्कार न करे, सभी देवताओं ने उस समय यह प्रतिज्ञा की कि बिना गणेश की पूजा किये हम लोग किसी की पूजा ग्रहण नही करेंगे। तभी से गणेश की पूजा प्रथम की जाती है। यह भी एक कथा है कि एक बार देवताओं में सबसे प्रथम पूजनीय देवता कौन है का, विवाद उपस्थित हुआ, तब निर्णय हुआ कि जो पृथ्वी की परिक्रमा पहले कर आयेगा वही प्रथम पूजनीय समझा जायेगा। गणेश ने सर्वव्यापी 'राम' के नाम को लिख कर उसकी परिक्रमा कर डाली, जिससे देवताओं में सर्व प्रथम इन्ही की पूजा होती है।

गया ३४९

हिन्दुओं का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ-स्थान। चन्द्रवंशी अमूर्तरयस के पुत्र राजर्षि गय ने यहाँ के गय शिखर पर्वत पर ब्रह्मसर नाम का बड़ा तालाब बनवाकर एक बृहद् यज्ञ करके अपार अन्न और धन दक्षिणा में दिया था; इसी कारण इस क्षेत्र का नाम गया पड़ा। गया फल्गु नदी के किनारे पर बसा हुआ है। फल्गु तीर्थ नाग कूट गृध्र कूट पाण्डु-शिला गय शिला स्वर्ग-द्वार आदि यहाँ अनेक तीर्थ विद्यमान हैं। यहाँ पर श्राद्ध और पिण्डदान आदि करने का माहात्म्य है। गया में पिण्डदान किये बिना पितरों की मुक्ति नहीं होती। इसे पितृ-गया भी कहते हैं।

वायु पुराण में लिखा है कि विष्णु का परम भक्त और धार्मिक गय नाम का एक विशालकाय असुर कोलाहल नामक पर्वत पर कठोर तपस्या करता था। विष्णु आदि सभी देवताओं से निरंतर इस पर्वत पर स्थिर रहने का वरदान प्राप्त कर गय वहाँ निश्चल हो गया। इसीसे इस क्षेत्र का नाम गया होगया। सभी देवताओं का निवास होने के कारण यह परम पावन तीर्थ-क्षेत्र बन गया।

गरुड़ २४५

गरुड़ पक्षियों के राजा और भगवान विष्णु के भक्त और वाहन माने जाते हैं। ये विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र हैं।

कश्यपजी ने एक बार पुत्र-प्राप्ति के लिये यज्ञ का अनुष्ठान किया था। इंद्र बालखिल्य आदि देवता और ऋषिगण समिधा

आदि यज्ञ सामग्री इकट्ठी करने लगे। अंगुष्ठ भर के वालखिल्य ऋषियों को पलाश की एक छोटी-सी टहनी घसीटते देख कर इंद्र को हँसी आगई। वालखिल्यगण कुपित होगये और कश्यप का पुत्र दूसरा इंद्र उत्पन्न करने लगे। पर कश्यप ने उन्हें समझा कर शान्त कर दिया और कहा कि तुम जिसे उत्पन्न करना चाहते हो, वह तो पक्षियों का इन्द्र होगा। अंत मे विनता के गर्भ से कश्यप ने अग्नि और सूर्य के समान गरुड और अरुण दो पुत्र उत्पन्न किये। गरुड विष्णु के वाहन हुए और अरुण सूर्य के सारथी।

गर्ग २४३

इस नाम के कई ऋषि हुए हैं।

१- आंगिरस भारद्वाज के वंशज गर्ग ऋषि एक वैदिक ऋषि हैं। ऋग्वेद के छठे मंडल का सूक्त इनका रचा हुआ है।

२- अथर्व वेद के परिशिष्ट के अनुसार गर्ग नाम के एक बहुत बड़े ज्योतिषी होगये हैं। गर्ग-संहिता नामक प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रंथ इन्ही का निर्मित है। ज्योतिष के यह सबसे पुराने आचार्य कहे जाते हैं। भागवत मे लिखा है कि बलराम और श्रीकृष्ण का नामकरण इन्ही ने किया था।

३- ब्रह्मा के एक मानस पुत्र जिनकी सृष्टि गया मे यज्ञ करने के लिये की गई थी।

गळकासिला [गंडकीशिला] ११४

गंडकी नदी मे प्राप्त होने वाले छोटे-छोटे श्याम वर्ण गोल शिलाखंड जो सालिग्राम की मूर्ति रूप माने जाते हैं। गोमती नदी में से प्राप्त शिलाखंडो का भी ऐसा ही महत्त्व है।

गया २४३

हिन्दुओं का एक पवित्र और प्राचीन तीर्थ-स्थान। चन्द्रवंशी अमूर्तरजस के पुत्र राजर्षि गय ने यहां के गय सिखर पर्वत पर ब्रह्मसर नाम का बड़ा तालाब बनवाकर एक बृहत् यज्ञ करके अपार अन्न और धन दक्षिणा में दिया था। इसी कारण इस क्षेत्र का नाम गया पड़ा। गया फल्गु नदी के किनारे पर बसा हुआ है। फल्गु तीर्थ, नाग कूट गृध्र कूट पाण्डुशिला धर्म-शिला स्वर्ग-द्वार आदि यहां अनेक तीर्थ विद्यमान हैं। यहां पर श्राद्ध और पिंडदान आदि करने का महात्म्य है। गया में पिंडदान किये बिना पितरों की मुक्ति नहीं होती। इसे पितृ-गया भी कहते हैं।

वायु पुराण में लिखा है कि विष्णु का परम भक्त और धार्मिक गय नाम का एक विशालकाय असुर कोलाहल नामक पर्वत पर कठोर तपस्या करता था। विष्णु आदि सभी देवताओं से निरंतर उस पर्वत पर स्थिर रहने का वरदान प्राप्त कर गय वहीं निश्चल हो गया। इसीसे इस क्षेत्र का नाम गया होगया। सभी देवताओं का निवास होने के कारण यह परम पावन तीर्थ-क्षेत्र बन गया।

गरुड़ २४५

गरुड़ पक्षियों के राजा और भगवान विष्णु के भक्त और वाहन माने जाते हैं। ये विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप के पुत्र हैं।

कश्यपजी ने एक बार पुत्र-प्राप्ति के लिये यज्ञ का अनुष्ठान किया था। इंद्र बालखिल्य आदि देवता और ऋषिगण समिधा

आदि यज्ञ सामग्री इकट्ठी करने लगे। अगुंठ सर के वालखिल्य ऋषियों को पलाश की एक छोटी-सी टहनी घसीटते देख कर इन्द्र को हँसी आगई। वालखिल्यगण कुपित होगये और कश्यप का पुत्र दूसरा इन्द्र उत्पन्न करने लगे। पर कश्यप ने उन्हें समझा कर शान्त कर दिया और कहा कि तुम जिसे उत्पन्न करना चाहते हो, वह तो पक्षियों का इन्द्र होगा। अत मे विनता के गर्भ से कश्यप ने अग्नि और सूर्य के समान गरुड और अरुण दो पुत्र उत्पन्न किये। गरुड विष्णु के वाहन हुए और अरुण सूर्य के सारथी।

गर्ग २४३

इस नाम के कई ऋषि हुए हैं।

१- आगिरस भारद्वाज के वशज गर्ग ऋषि एक वैदिक ऋषि हैं। ऋग्वेद के छठे मडल का सूक्त इनका रचा हुआ है।

२- अथर्व वेद के परिशिष्ट के अनुसार गर्ग नाम के एक वहुत बडे ज्योतिषी होगये हैं। गर्ग-सहिता नामक प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रथ इन्ही का निर्मित है। ज्योतिष के यह सवसे पुराने आचार्य कहे जाते हैं। भागवत मे लिखा है कि बलराम और श्रीकृष्ण का नामकरण इन्ही ने किया था।

३- ब्रह्मा के एक मानस पुत्र जिनकी सृष्टि गया में यज्ञ करने के लिये की गई थी।

गळकासिला [गडकीशिला] ११४

गडकी नदी में प्राप्त होने वाले छोटे-छोटे श्याम वर्ण गोल शिलाखड, जो सालिग्राम की मूर्ति रूप माने जाते हैं। गोमती नदी मे से प्राप्त शिलाखडो का भी ऐसा ही महत्त्व है।

गवरि [गौरी] १६१

भगवान् शंकर की अर्द्धांगिनी पार्वती पहले श्याम वर्ण थी। एक दिन भगवान् शंकर ने उन्हें हँसी में 'काली' कह दिया जिस पर पार्वती ने तप करके गौर वर्ण प्राप्त किया, तभी से पार्वती का गौरी नाम भी प्रसिद्ध होगया।

गायत्री १६१

१ त्रिकाल-सन्ध्या वन्दनादि ईश्वर-प्रार्थना का एक प्रसिद्ध त्रिपदात्मक वेद-मंत्र। गायत्री को वेदमाता भी कहा है। यह मंत्र सबसे अधिक पुनीत है। त्रिवर्णों के लिये इसका जप प्रतिदिन करना अनिवार्य माना गया है। यज्ञोपवीत धारण करते समय वेदारम्भ संस्कार करते हुए आचार्य सर्व प्रथम इस मंत्र का उपदेश ब्रह्मचारी को करते हैं। इस मंत्र के अकार उकार और मकार (ॐ) -ये तीनों वर्ण, भूः, भुवः और स्वः – तीनों व्याहृतियां और सावित्री मंत्र के तीनों पद– ऋक यजु और साम–तीनों वेदों से यथाक्रम निःसृत हैं। ओमकार और व्याहृतियों सहित गायत्री मंत्र इस प्रकार है–

ॐ भू भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं।
भर्गो देवस्य धी महि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।

२- गायत्री सावित्री और सरस्वती– इन नामों से पहिचानी जानेवाली ब्रह्मा की ज्ञान-शक्ति।

गायत्री ब्रह्मा की स्त्री मानी जाती है। वषट्कार देवताओं की उत्पत्ति इसीसे हुई है।

ब्रह्मा की इन ज्ञान-शक्तियो की रूपक कथा बडी विचित्र और मनोरजनपूर्ण होने के साथ वैज्ञानिक और ज्ञानपूर्ण है ।

गुह ३८

शृ गवेरपुर के अधिपति निषादराज गुह महाराज दशरथ के परम मित्र और श्री राम के अनन्य भक्त थे ।

भगवान् श्रीराम के वनवास के समय इन्होने श्रीराम, सीता और लक्ष्मण को नाव मे बिठाकर गगा के पार उतारा था । गंगा के पार करने के पूर्व गुहराज ने भागवान् राम के चरणो को धोकर चरणोदक पान किया था । इस प्रेमानुरोध को स्वीकार कर लेने पर ही उन्हें अपनी नाव मे बैठने दिया था ।

श्रीराम के चित्रकूट मे निवास के समय अयोध्या की प्रजा सहित भरत जब राम को वापिस अयोध्या लौटा लाने के लिये आ रहे थे, तब इनको यह भ्रम होगया कि राज्य-शक्ति के प्राप्त हो जाने के कारण भरत भगवान् राम पर अपार सेना के साथ चढकर आ रहे हैं । भरत को वहीं रोककर यह उनसे युद्ध करने को तैयार हो गये । पर जब इन्हें यह मालूम हो गया कि भरत इस आशय से नहीं आरहे हैं, तो उन्हें भी अयोध्या की प्रजा के साथ गगा के पार उतार कर श्रीराम के पास पहुँचा आये ।

अयोध्या को त्रसित करने वाले द्रुमिदा राक्षस का वध गुहराज ने ही किया था ।

भक्त-वाणी

पद पखारि जलु पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लइ पार॥

कहेउ कृपालु लेहि उतराई, केवट चरन गहे अकुलाई।
नाथ आजु मैं काह न पावा मिटे दोष दुख दारिद दावा।
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी आजु दीन्हि बिधि बनि भलि भूरि॥

(मानस अयोध्याकाण्ड)

गोरख, गोरख ६१ ३५३

प्रख्यात सिद्ध योगी मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरखनाथ जी नाथ सम्प्रदाय के संस्थापक और प्रवर्तक एक महान योगी और सिद्ध पुरुष थे। गोरखनाथ ज्ञानाश्रयी शाखा के जन्मदाता माने जाते हैं। इस सम्प्रदाय मे जाति-पाँति का कोई विचार नहीं होता, इसीलिये इस सम्प्रदाय को मानवधर्म सम्प्रदाय भी कहते हैं। विश्वविख्यात अद्वैतमत के प्रवर्तक अद्वितीय संन्यासी शंकराचार्य के बाद गोरखनाथ ही एक ऐसे महिमावान योगी पुरुष उत्पन्न हुए हैं, जिनका मत सारे भारतवर्ष में फैला हुआ है। गोरखपुर गोरखनाथ-महादेव का मन्दिर इस सम्प्रदाय का प्रधान मठ माना जाता है।

गौतम २४२

वर्तमान मन्वन्तर के सप्त-ऋषियों में से एक ऋषि। अहल्या इनकी पत्नी और शतानन्द ऋषि इनके पुत्र थे। देखो 'अहल्या'

आप्त-वाणी

असतोष परं दुःखं संतोषः परमं सुखम् ।
सुखार्थी पुरुषस्तस्मात् संतुष्टः सततं भवेत् ॥
(पद्म सृष्टिखण्ड)

छ-सास्त्र, [षट्-शास्त्र] १५१ (खट-भाख = षट्-भाषा) २४२

सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त, इन्हे छ दर्शन या छ शास्त्र कहते हैं।

१- सांख्य-दर्शन के आद्य-संस्थापक महर्षि भगवान् कपिलाचार्य हैं। सांख्य मे तत्त्वों की संख्या बताई गई है। इस दर्शन के अनुसार पुरुष और प्रकृति इन दो वर्गों मे मूल तत्त्व विभाजित होते हैं। पुरुष चेतन पदार्थ और प्रकृति जड पदार्थ, किन्तु क्रियाशक्ति वाली और दृश्य माना है।

२- योग दर्शन के आदि-प्रणेता पतंजलि हैं। सांख्य की विचार-धारा को चित्त के निरोध द्वारा अनुभव मे लाने के लिये इस शास्त्र का निर्माण किया गया है। नित्य-सिद्ध और नित्य-मुक्त पुरुष (ईश्वर) के स्वरूप का ध्यान करके कैवल्य-मोक्ष प्राप्त करने की पद्धति इस शास्त्र मे बताई गई है। दे पतजळ

३- न्याय-दर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम हैं। इसमें जगत् के तत्त्वो का सोलह पदार्थों में समास किया गया है। और तर्क के द्वारा वस्तु निर्णय करने का प्रमाणशास्त्र इसके अन्तर्गत करने में आया है।

४ मीमांसा—दर्शन जिसे पूर्व मीमांसा भी कहते हैं। इसके सूत्रकार महर्षि जैमिनि हैं। वेद के कर्मकाण्ड के मन्त्रों और ब्राह्मण ग्रन्थों के अर्थों का निर्णय न्यायानुसार किस रीति से किया जाय वेद का प्रामाण्य किस प्रकार का है और तर्क का स्थान कितने अर्थों में है इत्यादि यज्ञ और वैदिक कर्मों से सम्बन्धित विचारों का समावेश इस शास्त्र में किया गया है। वे क्रमशः

५ वेदान्त-दर्शन जिसे उत्तर-मीमांसा भी कहते हैं। इस दर्शन के प्रवर्तक भगवान् बादरायण (वेद-व्यास) हैं। वेद के ज्ञान काण्ड से सम्बन्धित चिन्तन इस दर्शन शास्त्र में वर्णित है। वेदान्त और उपनिषदों के वाक्यों के अर्थों का निर्णय न्याय की रीति से इसमें किया गया है इसलिये इसे वेदान्त शास्त्र का न्याय प्रस्थान भी कहते हैं। तत्वज्ञान के इस महान् अद्वैत दर्शन शास्त्र पर कई मतों का आविष्कार हुआ है। द्वैत द्वैताद्वैत विशिष्टाद्वैत अविभागाद्वैत केवलाद्वैत शुद्धाद्वैत आदि-आदि।

६ वैशेषिक—दर्शन के प्रणेता महर्षि कणाद हैं। इसमें विश्व का वर्गीकरण—द्रव्य गुण कर्म सामान्य विशेष समवाय और अभाव— इन सात पदार्थों में किया गया है। प्रमाण के न्याय का अनुसरण करते हुए इस जगत् का चिन्तन इस शास्त्र की विशेषता है।

जगदीस [जगदीश] ३४६, ३५०

हिन्दुओं के प्रमुख चार धामों में से जगदीशपुरी पूर्व दिशा का प्रसिद्ध धाम है। इसे पुरी अथवा जगन्नाथपुरी भी कहते हैं जो भारत

के पूर्वी समुद्र-तट पर उडीसा प्रदेश में स्थित है। यहा श्रीजगन्नाथजी श्री सुभद्राजी और श्रीबलभद्रजी की काष्ठ निर्मित असम्पूर्ण मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं।

एकबार द्वारिका मे माता रोहिणीजी श्री कृष्णचन्द्र की पटरानियों को गोपियों के प्रेम–प्रसग की कथा सुना रही थी। उस समय सुभद्राजी को किसी को भीतर नही आने देने के लिए द्वार पर खडे रहने का रोहिणीजी ने आदेश दिया। उसी समय श्रीकृष्ण और बलभद्रजी आगये और अन्दर जाने लगे। सुभद्राजी ने दोनो के बीच में खडे होकर और अपने दोनो हाथ फैला कर उन्हें वही रोक दिया। रोहिणीजी द्वारा व्रज की गोपी-प्रेम कथा सुन कर तीनो वही खडे विह्वल हो गये। उसी समय देवर्षि नारदजी भी वहा आ गये। देवर्षि ने जब ये प्रेम-विह्वल रूप देखे तो वे भी द्रवित होगये और प्रार्थना की– 'आप तीनो इसी रूप में विराजमान हो।' उन्होने नारदजी की प्रार्थना को स्वीकार किया और कहा कि– 'कलियुग मे दारु-विग्रह के इसी रूप मे हम तीनो पुरी मे अवस्थित होगे।' दारु-विग्रह के रूप में प्राकट्य के और भी कारण कहे जाते हैं। श्री जगन्नाथ के रथोत्सव का मेला अद्वितीय होता है।

जगद्गुरु श्री शकराचार्य के चारो धामो में स्थापित पीठो मे से यहा के पीठ का नाम गोवर्धन-पीठ है। चारो पीठाधीश्वर 'अनन्त श्री जगद्गुरु शकराचाय' की उपाधि से विभूषित होते हैं।

जक्ख [यक्ष] १५१

देवताओं की एक जाति। यक्ष जाति के देवता कुबेर के सेवक माने जाते हैं और वे उसकी निधियों की रक्षा करने वाले होते हैं।

जणक जणय [जनक] ३५, २४६

यह मिथिला के राजा थे। जगज्जननि भगवती सीता इन्हीं की पुत्री थी। इनके समय में मिथिला ब्रह्म-विद्या का क्रीड़ा-क्षेत्र बनी हुई थी। बड़े-बड़े ऋषि भी ब्रह्मज्ञान का उपदेश ग्रहण करने के लिए इनके पास आते थे। इन्हीं राजर्षि की सहायता से याज्ञवल्क्य ऋषि ने यजुर्वेद का संकलन किया था। उस समय के ब्राह्मणों में भी इनका सम्मान बहुत बढ़ा-चढ़ा था। शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि ज्ञानमय उच्चकोटि के ज्ञानी होने के कारण राजर्षि जनक ने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया था। ये सदेह मुक्त थे और विदेह कहे जाते थे।

जमस [जैमिनि] २४३

महान् तत्त्ववेत्ता और शास्त्रार्थकर्ता महर्षि जैमिनि पूर्व-मीमांसा दर्शन के प्रणेता हैं 'अथातो धर्म जिज्ञासा' और 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' इन दोनों सूत्रों के सूत्रकार जैमिनि ऋषि ही हैं। वेद-व्यास की आज्ञानुसार प्रथम सूत्र का पक्ष जैमिनि और दूसरे सूत्र के पक्ष का व्यास स्वयं समर्थन करें। इन्हीं दो सूत्रों के पक्ष में पूर्व-मीमांसा और उत्तर-मीमांसा (वेदान्त दर्शन) नामक दो दर्शन-ग्रन्थों का निर्माण हुआ। व्यास ने जैमिनि के पक्ष का खंडन किया है।

१ सू-पारम सं० ४

जयदेव ५०, २४६

जयदेव सस्कृत के प्रसिद्ध भक्त-कवि और गीतगोविन्द के रचयिता थे। इनकी कविता मधुर और ललित है। गीतगोविन्द में इन्होने अपनी माता का नाम वामदेवी और पिता का नाम भोजदेव लिखा है। वगाल में अजय नदी के तट पर केदूला ग्राम इनकी जन्मभूमि कहा जाता है।

जरा [जरायुज] २६६

चतुर्विध (अडज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) जीवो मे जरायु (आवल) से लिपटे हुए उत्पन्न होने के कारण मनुष्य, पशु आदि प्राणी जरायुज कहलाते हैं। गर्भ वेष्टित चर्म को जरायु कहते हैं। पिण्डज (जरायुज) प्राणी चतुर्विध जीवो में श्रेष्ठ प्राणी हैं।

जरासंध ८५

यह मगध के राजा वृहद्रथ का पुत्र था। वृहद्रथ के जब कोई पुत्र नहीं था तो वृहद्रथ ने महर्पि चण्डकौशिक को प्रसन्न करके सतान प्राप्ति के लिये उनसे एक फल प्राप्त किया। वृहद्रथ ने उस फल के दो टुकडे करके अपनी दोनो स्त्रियो को खिला दिया, जिससे दोनों स्त्रियों के गर्भ से एक शरीर के आधे-आधे अंग के दो टुकडो के रूप में एक वालक उत्पन्न हुआ। वृहद्रथ इससे बहुत दुखी हुआ। उसने उन दोनों टुकडों को श्मशान में फिकवा दिया। वहां जरा नाम की एक राक्षसी रहती थी, उसने उन दोनों टुकडो को जोडकर और जीवित करके वृहद्रथ को सौंप दिया और कहा कि यह बडा

पराक्रमी होगा और इसकी यह संधि टूटे बिना इसकी मृत्यु नहीं होगी। राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और उसका नाम जरासंध रखा।

जरासंध ने सैकड़ों राजाओं को युद्ध में जीत-जीतकर रुद्रयाग में बलि देने को पशुओं की भांति एक दूसरे से बांधकर कैद कर रखा था। इन सबने श्रीकृष्ण को गुप्त संदेश पहुंचाया कि हमारी मृत्यु निकट आगई है। आपके अतिरिक्त हमें कोई बचाने वाला नहीं है। हमें इस भयंकर कष्ट से शीघ्र छुड़ाने की कृपा करें। श्रीकृष्ण ने दूत के साथ उत्तर दिया कि तुम्हारा शीघ्र ही छुटकारा हो जायगा। श्रीकृष्ण के आदेशानुसार भीम ने जरासंध को चीर कर दाहिने अंग को बायीं ओर और बाएँ अंग को दाहिनी ओर फेंक दिया।

ताड़ीका [ताड़का] ३५

यह सुकेतु यक्ष की कन्या तथा मारीच और सुबाहु की माता थी। यह अगस्त्य ऋषि के शाप से राक्षसी हो गई थी और सरयू के किनारे ताड़क नामक वन में निवास करती थी। उस प्रदेश में इसके उत्पात से त्राहि त्राहि मच गई थी। महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ समारंभ में भी यह नित्य बाधा डालती रहती थी। अतः इसका वध करने के लिए वे महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण को ले गये। मार्ग में ही इसने इन पर आक्रमण कर दिया। भगवान राम को स्त्री का वध अनुचित प्रतीत हुआ किन्तु माया के बल से जब यह बहुत ज़ोर की पत्थर-वृष्टि करने लगी तब विश्वामित्र की आज्ञा से राम ने इसका वध कर डाला।

तुमर, तुम्मर [तुंबुरु] १२३, १८६, १६०

प्राधाना नाम के गधर्व का तुंबुरु नामक पुत्र। यह गधर्वों में बहुत प्रसिद्ध हुआ। राजस्थानी मे यह नाम 'गधर्व' अर्थ मे रूढ हो गया मालूम होता है।

त्रीकम [त्रिविक्रम] १०७, २१६

भगवान् विष्णु के त्रिलोक व्यापी रूप का नाम। विष्णु का यह नाम वामन अवतार के लिये लिया जाता है, जिसमे उन्होने तीन पैंड से स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोक नाप लिये थे।

दत्तात्रय, दतदेव, गुरुदत्त [दत्तात्रेय] १२, ८८, ६१

भगवान् विष्णु के चौबीस अवतारो मे से एक। महर्षि अत्रि की पत्नी अनसूया के पतिव्रत-धर्म के प्रभाव से जब देवगण प्रसन्न हुए तो उन्होंने अनसूया को वर मागने को कहा। उन्होंने वर मागा कि ब्रह्मा विष्णु और महेश ये तीनो मेरे पुत्र हो। वर के प्रभाव से अनसूया के गर्भ से ब्रह्मा सोम रूप से, विष्णु दत्त रूप से और शकर दुर्वासा के रूप में उत्पन्न हुए।

सौराष्ट्र में जूनागढ के पास गिरनार पर्वत गुरु दत्तात्रेय का तपःस्थान है, जो दत्त-शिखर के नाम से प्रसिद्ध है।

आबू पर्वत का सर्वोच्च शिखर 'गुरु शिखर' के नाम से प्रसिद्ध है, जहा गुरु दत्तात्रेय के चरण-चिह्नों के दर्शन है।

दसानन [दसानन] ४२

दसानन पुलस्त्य ऋषि का पौत्र और विश्रवा ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्पोत्कटा था। मयासुर की पुत्री मंदोदरी इसकी पत्नी थी। जन्म से ही दस सिर होने से इसका नाम दसानन अथवा दसकंधर हुआ रावण नाम बाद में रखा गया। वह महान् पराक्रमी प्रकाण्ड पण्डित बुद्धिमान और अनन्य शिव भक्त था। अपनी अद्भुत तपस्या द्वारा ब्रह्मा को भी इसने प्रसन्न करके मनुष्य के अतिरिक्त किसी से भी मारा नहीं जाने का वरदान प्राप्त किया था। शक्ति और तप के प्रभाव से सभी देवता इसकी सेवामें प्रस्तुत रहते थे।

राम वनवास के समय इसने सीता का हरण कर लिया था जिसके फलस्वरूप राम रावण युद्ध हुआ और वह मारा गया। वनवास राम ने इसके भाई विभीषण को ही लंका का राज्य दे दिया था।

दिगपाळ [दिकपाल] १३६ २५१

पुराणानुसार दसों दिशाओं का पालन करने वाले देवता। कहीं कहीं अष्ट दिग्पाल भी कहे जाते हैं। पूर्व दिशा से ईशान पर्यंत क्रम से इनके नाम ये हैं— इन्द्र अग्नि, पितर, निर्ऋति वरुण वायु कुबेर या सोम (वैश्रवण) और ईशान। दिग्देवता दिगेश दिग्पति और दिगराज आदि इनके पर्याय हैं।

दीरघ-देह, [दीर्घ देह] १७०

दीर्घ-देह अर्थात् स्थूल-शरीर। जो पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश- इन पच-महाभूतों (के एक साथ मिलने से) और कर्मों द्वारा उत्पन्न है। और जो सुख-दुखादि भोगों का स्थान है।

स्थूल-शरीर छ विकारो वाला होता है- १ गर्भ २ जन्म ३ वृद्धि ४ दृढत्व, ५. वृद्धत्व (बुढापा) और ६ नाश।

पचीकृत पच महाभूतं कृत सत् कर्मजन्य,
सुख दु खादि भोगायतन शरीरम्।
अस्ति जायते वर्धते विपरिणमते अपक्षीयते विनश्यतीति,
षड विकार वदेतत्स्यूशरीरम् ।

तत्वबोध

दुज-पंख [द्विज-पक्ष] ७९

गरुड को द्विज भी कहते हैं। यह विनता के गर्भ से उत्पन्न महर्षि कश्यप क पुत्र हैं। सर्पों की माता कद्रू (जो विनता की बहिन और कश्यप की बडी पत्नी थी) से अपनी माता के दासत्व को छुडाने के लिये यह पाताल से अमृत लाने के लिये गये थे।

भगवान् के रथ की ध्वजा में यह सदा प्रतिष्ठित रहते हैं और विष्णु भगवान् के वाहन हैं। दे० गरुड़

परशुराम [द्विज राम] १३

राम, बलराम और द्विजराम ये तीन 'राम' कहे जाते हैं। इनमें से यह ब्राह्मण 'राम' भगवान् विष्णु का अंशावतार कहा जाता है। यह महर्षि जमदग्नि के पाँचवें पुत्र हैं। भगवान् शंकर से इन्होंने अमोघ-अस्त्र परशु प्राप्त किया था इसीसे यह परशुराम कहलाये। कार्तवीर्य (सहस्रार्जुन) ने इनके पिता की कामधेनु चुरा ली इस पर इन्होंने कार्तवीर्य को मार दिया। कार्तवीर्य के पुत्रों ने इनके पिता को मार डाला। परशुरामजी ने इस बात को लेकर समस्त क्षत्री जाति को नाश करने का संकल्प कर लिया और २१ बार पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन कर दिया। केवल कुछ विधवा क्षत्राणियाँ जो अपने बालकों को लेकर ऋषियों के आश्रमों में छिप गयी थीं उनके बालक बच गये। विदेह जनक ब्रह्मनिष्ठ होने के कारण मारे नहीं गये थे। सूर्यवंशी मूलक राजा स्त्री-वेष से स्त्रियों में छिपा रहा इसलिए वह भी बचा रह गया। इस प्रकार क्षत्रीवंश समूल नष्ट नहीं हो सका।

जानकीजी के स्वयंवर में राजा जनक के यहाँ भगवान राम द्वारा धनुष भंग होने पर यह वहाँ गये थे। इस धनुष के तोड़ने वाले से यह बहुत क्रुद्ध हुए। परन्तु जब इन्हें यह पता चल गया कि शंकर के इस धनुष को तोड़ने वाले विष्णु के पूर्ण अवतार भगवान् राम हैं तो इन्होंने इस संशय के निवारणार्थ अपना धनुष श्रीराम को दिया जो उन्होंने तुरन्त चढ़ा दिया। उसी समय उनका विष्णु तेज निकलकर भगवान् राम में समा गया और यह वन में तपस्या करने को चले गये।

दुसासरा, [दुःशासन] ४६

यह धृतराष्ट्र के सौ पुत्रो मे से एक था और दुर्योधन का छोटा भाई था। यह दुर्योधन जैसा ही पराक्रमी और महारथी था परन्तु था महादुष्ट। इसने दुर्योधन की आज्ञा से द्रौपदी को रजस्वला होते हुए भी, उसको वेणी पकड़कर अन्त पुर से सभा मे घसीट लाया था और निर्लज्जि बनकर उसे वहा नग्न करने का प्रयत्न किया था। परन्तु भगवान् श्रीकृष्ण ने द्रौपदी का चीर अनन्त बना दिया जिससे वह नग्न होने से बच गई। भीमसेन ने इसका वध किया था।

दूणागिर [द्रोणगिरि] २२१

राम-रावरा युद्ध मे मेघनाद के द्वारा शक्ति-बाण के लगने से जब लक्ष्मण मूर्छित होगये तब द्रोणगिरि पर्वत पर सजीवनी लेने हनुमान भेजे गये। वहा बूटी को नही पहिचान सकने के कारण वे इस पर्वत शिखर को ही उठा ले आये थे।

द्रजीत [इन्द्रजीत] ४२

यह लकेश्वर रावण का पुत्र था। देवराज इन्द्र को युद्ध मे परास्त करने के कारण मेघनाद का एक दूसरा नाम इन्द्रजीत पड़ा। इसने राम-रावण युद्ध मे दो बार राम-लक्ष्ण को हराया था। अनन्तर भयकर युद्ध होने पर यह लक्ष्मण के हाथ से मारा गया। यह मेघ के समान भयकर गर्जन करने वाला और महा पराक्रमी था।

प्रयोग, [दुर्योधन] ४९

कुरुराज धृतराष्ट्र के गांधारी के गर्भ से उत्पन्न सौ पुत्रों में से दुर्योधन सबसे बड़ा था। यह बड़ा दुष्ट और पराक्रमी था। पांडवों से तो यह बचपन से ही द्वेष रखने लग गया था। भीम को भोजन में विष देकर नदी में डुबा दिया था। सबको एक ही साथ मार देने के लिये एक सुन्दर लाक्षागृह बनवाया और इसमें पांडवों को निवास देकर उसमें आग लगायी। अनेकों बार कई प्रकार के छल-छिद्र कर इन्हें मार देने के षड्यन्त्र-प्रयत्न किये पर भगवान की कृपा से वे बचते रहे। अन्त में महान् धूर्त शकुनि के साथ युधिष्ठिर को जुआ खेलने और उसमें राज्यादि समस्त सम्पत्ति और यहां तक कि द्रोपदी तक को दांव पर रखने को विवश किया। पांडवों का सर्वस्व हार जाना द्रौपदी को दुःशासन द्वारा पकड़ कर सभा में घसीट लाना और वहां उसे निर्लज्जता पूर्वक नंगी करने का अमानवीय अत्याचार करने का जबरदस्त प्रयत्न करना। जुआ में हार जाने की शर्त के अनुसार बारह वर्ष जंगल में रहना तेरहवें वर्ष अज्ञात रहना। और इस बीच यदि पता लग जाय तो बारह वर्ष पुनः वनवास भुगतना। वनवास और अज्ञातवास से लौट आने पर पांडवों को रहने के लिये पांच गांव जितनी भूमि भी देना स्वीकार नहीं करना। दुर्योधन की ऐसी अनेक दुष्टताओं के परिणाम-स्वरूप महाभारत जैसा भयंकर युद्ध हुआ जिसमें अन्यायी कौरव मारे गये और पांडवों की विजय हुई।

द्रोण, ४६, ८१

ये भारद्वाज ऋषि के पुत्र हैं। इन्होने धनुर्विद्या तथा आग्नेयास्त्र की शिक्षा पहले अपने पिता से और फिर भारद्वाज के शिष्य अग्निवेश से पाई थी। अस्त्र-विद्या में निपुण होने के लिए इन्होंने श्री परशुरामजी मे भी शिक्षा पायी। शरद्वान की पुत्री (कृपाचार्य की बहिन) कृपि से इनका व्याह हुआ। महान् पराक्रमी महारथी अश्वत्थामा इन्ही का पुत्र था। भीष्मपितामह ने कौरवों तथा पाण्डवो को शस्त्र-विद्या की शिक्षा देने के लिए द्रोणाचार्य को नियुक्त किया था।

राजा द्रुपद इनके बाल-सखा थे। द्रुपद कहा करते थे कि राजा होने पर भी उन दोनो मे ऐसी ही मित्रता बनी रहेगी और उसे दृढ करने के लिए वे उन्हें आधा राज दे देंगे। परन्तु राजा होने के बाद इन्होंने अपने सखा द्रोण को बिल्कुल ही भुला दिया। एक बार जब ये उनसे मिलने के लिए गये तो उन्होंने इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखा। द्रोण को इससे विशेष क्षोभ हुआ। पांडवों के द्वारा उन्होंने द्रुपद को पराजित करवाकर अपने सम्मुख बन्दी रूप में उपस्थित करवाया और उसका आधा राज छीन कर उसे मुक्त कर दिया। कौरव-पाण्डव युद्ध में द्रोण कौरवों की ओर से लडे थे। द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न द्वारा इनका वध हुआ।

धनतर [धन्वन्तरि] १२

आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान् विष्णु का अवतार जो समुद्र मथन के समय, हाथ में अमृत घट लिये हुए प्रगट हुए थे। यह आयुर्वेद के प्रथम और प्रधान आचार्य और देवताओं के वैद्य हैं।

धनेस [धनेश] १६१

यह महर्षि पुलस्त्य के पौत्र और विश्रवा के पुत्र सभी यक्षों के अधिपति हैं। इनकी नगरी का नाम अलकापुरी है। कुबेर देवताओं के धनाध्यक्ष हैं। इनके तीन पैर और आठ दांत कहे जाते हैं। कुबेर और रावण दोनों भाई हैं। कुबेर यक्षाधिपति हैं और रावण राक्षसाधिपति हैं। कुबेर उत्तर-दिग्पाल हैं।

धरणीधर, ६, ६२ १०१, ३४२

राजस्थान और गुजरात का प्राचीन काल का एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान। प्राचीन समय में इसे वाराहपुरी कहते थे। उत्तर गुजरात के पास और वराह नगरी के पास डेमा गांव में भगवान् श्री विष्णु की इस अपूर्व मनोहर मूर्ति का विशाल मंदिर बना हुआ है। मंदिर के पास मानसरोवर नाम का एक बड़ा तालाब है। यहां शिवजी लक्ष्मीजी गणेशजी और हनुमानजी आदि के मन्दिर भी हैं। प्राचीन काल में पंजाब सिंध व्रज उत्तर-प्रदेश और राजस्थान आदि देशों की ओर से द्वारका की यात्रा करने वाले यात्रियों को प्रथम धरणी धर के दर्शन करना और यहां की तप्त मुद्राओं को अपनी भुजाओं पर लगवाना आवश्यक समझा जाता था। आजकल तप्त मुद्राओं के स्थान केशर-चन्दन की मुद्राएं लगाई जाती हैं। महाभारत में इस तीर्थ का बड़ा महात्म्य लिखा है। पश्चिम रेलवे की पालनपुर-कंडला गांधीधाम शाखा पर थामर स्टेशन से धरणीधर के लिये मोटर-बसें मिलती हैं।

ऐसा माना जाता है कि भगवान् श्रीकृष्ण द्वारका जाते हुए यहां ठहरे थे अतः इस तीर्थ का निर्माण हुआ।

घुरू, ध्रुव, [ध्रुव] ६१, १४६, २२१

ध्रुव स्वयंभू मनु के पौत्र तथा महाराज उत्तानपाद के पुत्र हैं। उत्तानपाद के दो रानियां थी– सुरुचि तथा सुनीति । सुनीति के गर्भ से ध्रुव तथा सुरुचि के गर्भ से उत्तम की उत्पत्ति हुई । एक बार जब उत्तम राजा की गोद मे बैठा था तो ध्रुव भी जाकर उनकी गोद के एक भाग मे बैठ गया । सुरुचि ने ध्रुव को अवज्ञा के साथ हटा दिया । ध्रुव को यह अपमान असह्य होगया और वे उसी समय वन को चल दिये । वहां उन्होने घोर तप करके भगवान् को प्रसन्न किया और वर प्राप्त किया कि "वह समस्त लोको, ग्रहो तथा नक्षत्रो के ऊपर उनके आधार-स्वरूप होकर स्थित रहेगा, और उसके रहने से वह स्थान ध्रुवलोक के नाम से विख्यात होगा ।" पश्चात् इन्होने घर आकर अपने पिता का राज्य प्राप्त किया और अनेको वर्ष धर्म और नीतिपूर्वक राज्य करके ध्रुवलोक मे चले गये ।

नळकूबड़ [नलकूबर] २५४

कुबेर के पुत्र नल कूबर और इसका बडा भाई मणिग्रीव दोनो अपनी स्त्रियो के साथ गगा मे जल-क्रीडा कर रहे थे, इतने मे नारदजी उधर होकर निकले। मदोन्मत्त दोनो भाईयो ने नारदजी की हंसी उडाई और नमस्कार नही किया। इस पर नारदजी ने इन्हें शाप दिया कि 'तुम लोग जड-बुद्धि हो अत' वृक्ष हो जाओ ।' भूल का भान हो जाने पर इन्होंने प्रार्थना की कि हमारे अविवेक को क्षमा करें। दयालु नारदजी ने क्षमा करते हुए कहा कि भगवान् श्री कृष्ण के चरण-स्पर्श से तुम्हारा उद्धार होगा।

शाप के कारण दोनों भाई गोकुल में जुड़वां अर्जुन वृक्ष उत्पन्न हुए, जिनका यमलार्जुन नाम पड़ा । एक दिन यशोदाजी ने बालक कृष्ण को ऊखल से बाँध दिया । कृष्ण ऊखल को घसीटते हुए वृक्षों के पास पहुँच गये और ऊखल को दोनों वृक्षों के बीच में फँसाकर जोर से झटका मारा जिससे दोनों वृक्ष गिर गये और उनमें से नलकूबर और मणिग्रीव अपनी दिव्य यक्ष देह से प्रगट हो गये । श्री कृष्ण की स्तुति और वंदन करके दोनों अपने स्थान को चले गये ।

नवखंड २०१

पौराणिक भूगोल के अनुसार समस्त पृथ्वी के नौ खंड माने गये हैं और वे इस प्रकार हैं— (१) इलावृत (२) भद्राश्व (३) हरिवर्ष (४) किंपुरुष (५) केतुमाल (६) रम्यक (७) भारत (८) हिरण्यमय और (९) उत्तर कुरु । दूसरे मतानुसार इन नौ खंडों के नाम इस प्रकार हैं— (१) भरत (२) वर्त (३) राम (४) इलावता (५) केतुमाल (६) हरि (७) विविधास (८) महि और (९) सुवर्ण ।

नवग्रह २५१, २५८

मंगल, बुध चन्द्र शनि शुक्र, गुरु राहु केतु और सूर्य ये नौ ग्रह हैं ।

नव निद्ध, नवो निध [नव निधि] २०१, २३१

महा पद्म पद्म शंख मकर, कच्छप मुकुन्द कुन्द नील और खर्व, ये कुबेर की नौ निधियां हैं ।

नाग-नवै-कुळ [नव-कुल नाग] १६१

कश्यप तथा कद्रू के पुत्र नाग मेरु-कर्णिका में रहने वाले वरुण की सभा के सभापति थे। कश्यप के पुत्र नौ प्रमुख नाग नौकुली नाग कहलाते हैं[1]। त्रिलोकी भर मे इन्होने बडा भारी

---

१. राजस्थानी साहित्य मे नागो के नौ कुल माने गये हैं, अत 'नव कुळी नाग' प्रसिद्धि मे आया हुआ है। पुराणों मे केवल आठ कुल मान कर 'अष्ट कुली' अथवा 'अष्ट नाग' कहा है। वे इस प्रकार हैं—

अनत, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, शख, कुलिक, पद्म और महापद्म। यही नागों की आठ मुख्य जातिएँ हैं। इनके कई अवातर भेद और हैं जिन्हें भी नागवश या नाग कुल कहते हैं। वासुकि इन सब का अधिपति माना जाता है। इसकी स्त्री का नाम शतशीर्षा है। वासुकि ही सदैव भगवान् शकर के भूषण रूप मे उनका आश्रित रहता है। समुद्र-मथन के समय देव और दैत्यों ने इसी को मथन-रज्जु बनाया था। वासुकि के पन्द्रह नाग-कुल प्रसिद्ध हैं।

कहा जाता है कि शाप के प्रत्याहार से ये मारवाड देश में मडोर के पास सुरक्षित स्थान में चले गये थे। वहाँ इनके नाम से नागावरी (नागद्रही, वा नागह्रदिनी) नदी, नाग कुण्ड नागह्रद और भोगी-शैल (भोगवती) आदि अनेक तीर्थ-स्थान प्रसिद्ध हैं और वहाँ बड़े मेले लगते हैं। मारवाड के पू गल प्रदेश के एक गांव में इन नागों के भाट रहते हैं। जिनके पास इनकी बडी विस्तृत वशावलियाँ बताई जाती हैं। वर्ष में एक बार निश्चित तिथि पर किसी विशेष स्थान पर जाकर ये वहां उनकी वशावलियाँ पढते हैं।

उपद्रव मचाया तब ब्रह्माजी ने इन्हें शाप दे दिया कि जन्मेजय के नाग-यज्ञ में तुम सभी नष्ट हो जाओगे। पर इनकी प्रार्थना से द्रवीभूत होकर ब्रह्माजी ने शाप का प्रत्याहार कर लिया। ये सभी एक दूसरे स्थान में चले गये और वहां पर एक नाग-तीर्थ की सृष्टि की। जिस दिन ब्रह्मा के पास ये प्रार्थना करने गये थे उस दिन श्रावण शुक्ल पञ्चमी थी जो अब नाग-पंचमी के नाम से प्रसिद्ध है।

नारसिंघ [नृसिंह] १३

आधी सिंह की और आधी मनुष्य की आकृति वाला भगवान् विष्णु का एक अवतार। हिरण्यकशिपु दैत्य को मारकर उसके पुत्र भक्त प्रह्लाद की रक्षा करने के निमित्त विष्णु भगवान् को ऐसा नृसिंह रूप धारण करना पड़ा था।

नरकासुर [नरकासुर] ५०

यह भूमि का पुत्र था अतः इसे भौमासुर भी कहते हैं। भू देवी ने भगवान् विष्णु को प्रसन्न करके उनसे अपने पुत्र नरकासुर को वैष्णवास्त्र दिलवा दिया। इसको प्राप्त करके यह महा बलवान होगया।

इसने देवताओं को बहुत पीड़ित किया और उनकी तथा इन्द्र की संपत्ति हर कर अपने नगर प्राग्ज्योतिषपुर में लाया। यह बात इन्द्र ने भगवान् कृष्ण से कही। इसको वरदान था कि बिना इसकी माता की आज्ञा के इसकी मृत्यु नहीं होगी। सत्यभामा, पृथ्वी का अवतार थी अतः भगवान् श्रीकृष्ण इन्हें साथ लेकर नरकासुर का वध करने गये।

नरकासुर युद्ध मे मारागया। इसके बन्दीखाने मे सोलह हजार कन्याए बन्द थी भगवान् ने उनको मुक्त किया और उनकी प्रार्थना पर उनसे विवाह किया।

पंचाळी [पाचाली] ५१

पाचालराज द्रुपद की यज्ञ वेदी से उत्पन्न कृष्णा नाम की कन्या, जो पाण्डवो को व्याही थी। पाचाल देश की होने के कारण इसका नाम पाचाली पडा। द्रुपद की कन्या होने के कारण द्रौपदी नाम प्रसिद्ध हुआ। दुष्ट दुर्योधन की आज्ञा से द्यूत-सभा मे दु शासन ने पांचाली का चीर हरण करना शुरु किया। द्रौपदी ने अपने पति और वृद्धजनो से सहायतार्थ पुकार की पर किसीने उसकी सहायता नही की। तव उसने भगवान् श्री कृष्ण से आर्त पुकार की, जिससे उसका चीर अनन्त हो गया और उसकी लाज वच गई।

आर्त-वाणी

> कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वभावन
> प्रपन्नां पाहि गोविन्द कुरु मध्येऽवसीदतीम्

हे श्री कृष्ण ! आप महायोगी और सच्चिदानद हैं। आप ही विश्वात्मा (सर्वस्वरूप) और आप ही विश्व के प्रिय हैं। हे गोविन्द ! मैं कौरवो से घिर कर बडे सकट मे पड गई हू। अव आपकी शरण मे हू। प्रभु ! आप मेरी रक्षा कीजिये।

पतंजळ [पतंजलि] २४३

१ योग-शास्त्र के प्रणेता महर्षि पतजलि। इनके इस दर्शन मे योग-साधन द्वारा चित्त की वृत्तियों को वश मे करने के उपाय वताये गये हैं। इसे योग-सूत्र भ कहते हैं। दे० छ-सास्त्र सख्या २

आर्ष-वाणी

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः

(योगसूत्र)

अहिंसा की संपूर्ण और दृढ़ स्थिति हो जाने पर (उस योगी के निकट सिंह सर्प आदि हिंसक और विषैले) समस्त प्राणी वैर का त्याग कर देते हैं।

१. एक प्रसिद्ध महाभाष्यकार मुनि जिन्होंने पाणिनीय सूत्रों (अष्टाध्यायी व्याकरण) पर और कात्यायन कृत वार्तिक पर महाभाष्य लिखा है।

परासर [पराशर] २४५

महर्षि पराशर महर्षि वसिष्ठ के पौत्र और शक्ति ऋषि के पुत्र एक योगकार ऋषि हैं। इनके पिता शक्ति ऋषि को राक्षसों ने मार दिया था। इन्होंने इसका बदला लेने के लिए राक्षस-वध करना प्रारम्भ किया था परन्तु वसिष्ठ ऋषि के कहने से बन्द कर दिया। यह महान् तपस्वी थे। इनका 'पराशर-स्मृति' नामक धर्मशास्त्र प्रसिद्ध है। वेद-व्यास कृष्ण-द्वैपायन इन्हीं के पुत्र थे।

स्मृति-वाणी

तस्माद्दुःखात्मकं नास्ति न च किंचित् सुखात्मकम्।
मनसः परिणामोऽयं सुखदुःखादि लक्षणः॥

(महर्षि पराशर)

इसलिए कोई भी वस्तु न तो किंचित् दुःखमय है और न किंचित् सुखमय ही है यह तो केवल मन के परिणाम हैं। सुख-दुःख के लक्षण यही हैं।

परीखत, [परीक्षित्] ४६

परीक्षित् महावीर अर्जुन के पौत्र और अभिमन्यु के पुत्र थे। अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से भगवान श्रीकृष्ण ने इनकी गर्भ मे रक्षा की थी और उस समय इन्होने गर्भ मे भगवान् के दर्शन किये थे। जन्मते ही सर्वत्र भगवान् के होने की परीक्षा करने लग जाने के कारण इनका नाम परीक्षित् रखा गया। पाडवो के बाद इन्होंने बहुत ही उत्तम प्रकार से राज्य का सचालन किया।

कलियुग का आरम्भ इन्ही के समय मे हुआ माना जाता है। एकवार जगल मे इन्हे एक राज्य चिह्न धारण किया हुआ एक शूद्र मिला, जो एक गाय और बैल को निर्दयतापूर्वक मूसल से पीटता जा रहा था। परीक्षित क्रोधित होकर उसे दण्ड देने लगे। शूद्र ने अपना परिचय देते हुए कहा— "राजन्! मैं कलियुग हूं, यह गाय पृथ्वी और बैल धर्म है। आज द्वापर की समाप्ति पर मेरा प्रवेश हो रहा है। मुझे शरण और अभय देने की कृपा कीजिए। आप जैसे धर्मात्माओ के राज्यशासन मे मेरा युग प्रभु-प्राप्ति के लिए महादुष्टों को भी बडा सुलभ होगा। मेरा ऐसा रूप और कर्तव्य देख करके आप घबरायें नही। मुझे शरण दीजिए।" कहते हुए महाराज के चरणो मे गिर पडा।

महाराज परीक्षित् ने शरणागत जानकर छोड दिया और चौदह स्थानो मे रहने के लिए उसे अभय कर दिया। उन स्थानो मे एक स्वर्ण भी था। परीक्षित् के सिर पर उस समय सोने का मुकुट धारण किया हुआ था, अत कलि ने उसी समय उस पर अपना

आसन जमा दिया। घर को लौटते हुए परीक्षित् शमीक ऋषि के आश्रम में पहुँच जाते हैं वहाँ कलि की बुद्धि से प्रेरित होकर ध्यानमग्न ऋषि के गले में मरा हुआ साँप डाल देते हैं। शमीक ऋषि के पुत्र शृंगी ऋषि को जब यह बात मालूम होती है वह क्रोध में आकर राजा को यह शाप दे देते हैं कि सातवें दिन सर्प के काटने से उसकी मृत्यु हो जायगी।

परीक्षित् ने अपना मृत्युकाल निकट आया जान जन्मेजय को राज्य दे दिया और गंगा के तट पर जाकर बैठ गया। वहाँ उन्होंने अन्न-जल का त्याग कर दिया और शुकदेव मुनि से भागवत की कथा श्रवण की। आठवें दिन तक्षक के डंस से उसकी मृत्यु होगई।

परीक्षित-वाणी

> निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद्भवौषधाच्छ्रोत्रमनोऽभिरामात् ।
> क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान् विरज्यते विना पशुघ्नात् ॥
>
> (श्री मद्भागवत)

जिनकी तृष्णा सदा के लिए मिट गई है वे जीवन्मुक्त महापुरुष जिसका कभी तृप्त नहीं होकर पूर्ण प्रेम से गान किया करते हैं, मुमुक्षुओं के लिए जो भवरोग की औषधि है तथा जिसकी कानों के तान और मन को भी परम आह्लाद देनेवाला है। भगवान श्रीकृष्णचन्द्र के ऐसे उत्तम गुणानुवाद से पशुघाती अथवा आत्मघाती मनुष्य के अतिरिक्त और ऐसा कौन है जो उससे विमुख हो जाय?

पांडव ४५ ३३८

महाराज पाण्डु के पुत्र युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल और सहदेव ये पाचों पाण्डव कहलाते हैं। युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन

ये तीनो कुन्ती के गर्भ से और नकुल और सहदेव माद्री के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। ये पाचो पाण्डु के क्षेत्रज पुत्र थे। युधिष्ठिर धर्म के, भीम वायु के, अर्जुन इन्द्र के और नकुल और सहदेव अश्विनीकुमार-द्वय के औरस से उत्पन्न हुए थे। ये धर्मात्मा, नीतिज्ञ, महापराक्रमी और भक्त थे। कौरव-पाडवो के महाभारत-युद्ध में श्रीकृष्ण ने पाडवों के पक्ष मे युद्ध का सचालन किया। गीता के ज्ञान का उपदेश देकर अर्जुन के मोह और सशय दूर किये और पाडवो को विजयी बनाया।

पीताबर, ३

ईशरदासजी को भक्ति की ओर प्रवर्त करने वाले उनके गुरु प्रसिद्ध ब्रह्मनिष्ठ पीताम्बरदासजी भट्ट। यह रावल जाम की विद्वत्सभा के सर्वोपरि विद्वान, कवि, भक्त और पडित थे।

पुरांण [पुराण] १३६

जिसमे कल्प का इतिहास लिखा हुआ हो अर्थात् जिसमे पुराने समय का राजनैतिक, सामाजिक और प्राकृतिक अवस्थाओं का वर्णन किया गया हो और जो मनुष्यो के चित को धर्म की ओर आकर्षित कर दे, उसे पुराण कहते हैं। पुराणों की सख्या १८ हैं और अठारह ही उप पुराण हैं। ये हिन्दुओं के विशिष्ट और प्राचीन धर्म-ग्रन्थ हैं। इनमे सृष्टि तत्त्व, अवतारों की कथाएं और दार्शनिक तत्त्वो का समावेश है। दैनिक धर्मनुष्ठान की रीतिया, आख्यान, इतिहास के साथ इनमे हिंदू जाति की प्रतिष्ठा, गौरव, महत्त्व, वीरत्व, साहस, न्यायनिष्ठा, दया धर्म और दाक्षिण्य आदि का अनुपम वर्णन मिलता है। धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य और कर्म-अकर्म

आदि का विवेचन मनुष्य जीवन की गति निश्चित करने का मूल-मंत्र और आप-धर्म एवं उसके संबंध के बहुत ही सुन्दर और कला-पूर्ण और ज्ञान-पूर्ण छहसों दृष्टान्तों से पुराण समलंकृत हैं। पुराणों की संख्या आकार, विषय परम्परा धर्म तत्त्व कवित्व और वैज्ञान-शैली आदि पर विचार करने से चकित होना पड़ता है। ज्ञान के भण्डार पुराणों के समान उपयोगी और बृहद्कार्य ग्रंथ संसार के किसी देश की किसी भी भाषा में नहीं लिखे गये हैं।

अठारह पुराणों की नामावली देखिये 'महापुराण' शब्द में।

प्रद्युमन [प्रद्युम्न] ८४

प्रद्युम्न रुक्मिणी के गर्भ से उत्पन्न श्रीकृष्ण के पुत्र और कामदेव के अवतार थे। इनके जन्म के सातवें दिन शम्बरासुर सौरी में से इन्हें चुरा कर ले गया। शम्बर के कोई पुत्र नहीं था। इसलिये प्रद्युम्न को उसकी स्त्री मायावती के हाथ सौंप दिया। प्रद्युम्न जब जवान होगये तब मायावती इनसे पत्नी के समान भाव प्रकट करने लगी। यह देख प्रद्युम्न ने मायावती से कहा तुम मेरे में पुत्र भावना का त्याग कर इस प्रकार विपरीत भाव धारण क्यों कर रही हो? प्रद्युम्न को एकान्त में ले जा कर मायावती कहने लगी— नाथ! आप मेरे पुत्र नहीं हो शम्बर आपका पिता नहीं है। आपका जन्म वृष्णिवंश में हुआ है। भगवान् श्री कृष्ण आपके पिता और भगवती रुक्मिणीजी आपकी माता हैं। आपके जन्म के सातवें दिन सौरी-घर से शम्बर आपको चुरा कर ले आया था। आप तो कामदेव हैं और मैं हूं मायावती के रूप में आपकी पत्नी रति। प्रद्युम्न को भी अपने पूर्व जन्म की स्मृति हो आई। उन्होंने वैष्णवास्त्र से शम्बर को मारडाला और मायावती को लेकर द्वारका चले गये।

प्रसनीग्रभ, प्रसन्निय-ग्रम्भ [पृश्निगर्भ] १२,८३

१- माता पृश्नि के गर्भ से उत्पन्न भगवान विष्णु का एक अवतार पृश्निगर्भ कहलाया।

२- सुतपा प्रजापति की पत्नी पृश्नि जिसने देवकी के रूप मे जन्म लेकर भगवान कृष्ण को जन्म दिया।

प्रहळाद [प्रह्लाद] २८,५६,८८,९५,१४८.

यह कयाधु के गर्भ से उत्पन्न दैत्यराज हिरण्यकशिपु का सबसे बडा पुत्र है। प्रह्लाद जब गर्भस्थ था तब नारदजी ने उसकी माता कयाधु को ज्ञानोपदेश किया था जिसके कारण गर्भ मे ही प्रह्लाद को भगवद्भक्ति के सस्कार जम गये और जन्म लिया तब ही से व्यापक परमात्मा-विष्णु की उपासना मे अनुरक्त रहने लगा। ज्यो-ज्यो बडा होता गया परब्रह्म की उपासना मे अधिक तल्लीनता उत्पन्न होने लगी। इससे हिरण्यकशिपु बहुत रुष्ट होगया और इसे अनेक प्रकार के कष्ट दिये। कष्टो मे उसे भगवान् की महान् शक्ति और सर्व व्यापकता का विश्वास अधिक तीव्रतर होने लग गया। अनेक प्रकार से समझाने, भय दिखाने और मरवाने के प्रयत्नों मे जब हिरण्यकशिपु असफल होगया, तब वह स्वय ज्योही अपने हाथों से खड्ग उठाकर मारने के लिये तैयार हुआ त्योही भगवान् ने एक खभ से नृसिह रूप से प्रगट होकर हिरण्यकशिपु को अपने नखो से चीर दिया। बालक प्रहलाद भगवान के इस भयकर रूप को देखकर भयातुर होगया। तब भगवान ने उसे ढाढस देते हुए वरदान मांगने को कहा। प्रहलाद ने प्रार्थना की कि हे प्रभु! एक तो आपका भयकर स्वरूप और

उसकी बहार जो समस्त संसार को ग्रस्त कर रही है उसे शान्त करके आपके इस नयन प्यारक भुवन-मोहिनी रूप का दर्शन दीजिये और दूसरा समस्त संसार के प्राणियों का दुख मुझे देने की कृपा करें। भगवान ने प्रह्लाद को अभय कर दिया और ऐसा वरदान मांगने पर साधु! साधु! कह कर प्रशंसा की।

भक्त-वाणी

नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि॥

(विष्णु पुराण)

नाथ! सहस्रों योनियों में से जिस जिस योनि में मैं जन्म लूं उसी-उसी योनि में हे अच्युत! आप में मेरी सदा अचल भक्ति बनी रहे।

प्राग [प्रयाग] १९१ ३४९

प्रयाग-गंगा यमुना और सरस्वती के संगम स्थान पर बसा हुआ है। प्रयाग में ही अक्षयवट है जो प्रलय में भी नहीं डूबता। यहां कुंभ-पर्व पर संगम-स्नान का बड़ा माहात्म्य है जो प्रति बारहवें वर्ष जब सूर्य मकर राशि में और बृहस्पति वृष राशि में होते हैं तब यह कुंभ-पर्व होता है। कुंभ से छठे वर्ष अर्ध-कुंभी मेला लगता है। इसी प्रकार हरिद्वार, नासिक और उज्जैन में भी कुंभ के मेले भरते हैं। कुंभ के मेले संसार के सब मेलों से बड़े होते हैं।

प्रित्थू [पृथु] ६१

महान् बलाढ्य और भूगर्भवेत्ता पृथु राजा ने पृथ्वी की विषमता और सत्वहीनता को मिटाकर उसे सम और सत्व वाली एवम् फलद्रुप बनाया था। प्रजा को धन-धान्य से पूर्ण करने के इनके इस महान् कार्य मे पृथ्वी को दुहने की कल्पना की गई और इन्ही के नाम पर भूमि की पृथ्वी सज्ञा दी गई।

बद्रीनारायण [बदरीनारायण] १४

महर्षि धर्म के पुत्र भगवान् नर-नारायण भगवान् विष्णु के अशावतार थे। इनकी माता का नाम मूर्ति था। इन्होंने बदरिकाश्रम में घोर तप किया, जिससे ये बदरीनारायण कहलाये।

हिमालय पर्वत की १०२६४ फीट ऊचे शिखर पर बदरिकाश्रम मे अलकनदा के तट पर भगवान् बदरीनारायण का विशाल मदिर बना हुआ है। वर्ष के छः महीने मदिर के पट खुले रहते हैं, तब समस्त भारत के सहस्रों यात्री दर्शन करने को आते हैं। शेष छः महीने बर्फ जमी रहने के कारण यात्रा बद रहती है।

मदिर के पुजारी दक्षिण के नम्बूद्रीपाद ब्राह्मण होते हैं जो रावल कहलाते हैं।

शकर-दिग्विजय के समय जब बौद्ध भारतवर्ष छोड़कर अन्य देशों को भागने लगे, तो तिब्बत को भागने वाले बौद्धों ने श्री बदरीनारायण की मूर्त्ति को अलकनदा में फेंक दिया। भगवान् शकराचार्य ने निकलवाकर उसे पुनः मदिर में प्रतिष्ठित करवाया।

बौद्धों ने जब अपने मूल भूत धार्मिक सिद्धान्तों का परित्याग कर दिया और धर्म की ओट में पाखंड और अत्याचार पराकाष्ठा पर पहुँच गये वैदिक हिन्दूधर्म निर्मूल होने लगा तब भगवान् शंकराचार्य ने बौद्धों और नास्तिकों पर दिग्विजय प्राप्त कर उन्हें भारतवर्ष से बाहर खदेड़ दिया। वैदिक-धर्म की रक्षार्थ एवं विधर्मियों की पुन-पैठ फिर भारत में नहीं हो सके इसलिये शंकर ने भारत की चारों दिशाओं में चार पीठ (धर्म प्रचारक केन्द्र) नियुक्त कर दिये और धुरंधर धर्माचार्यों को संगठित करके वहां के प्रसिद्ध मंदिरों और तीर्थ-केन्द्रों में उनकी स्थापना करदी। ये चारों तीर्थ-केन्द्र धाम नाम से विख्यात हैं।

बभीखण [विभीषण] ४१

ये रावण के छोटे भाई थे। राक्षस-कुल में जन्म होने पर भी ये हरि भक्त थे। सीता को लौटा देने के लिए जब इन्होंने रावण को समझाया तब रावण ने लात मार कर इन्हें निकाल दिया। तब ये भगवान् राम की शरण में आए। इन्होंने ही रावण की मृत्यु का रहस्य श्रीराम को बतलाया था। रावण-वध के पश्चात् राम ने इन्हें लंका का राज्य दे दिया।

बळि [बलि] १४

यह भक्त-श्रेष्ठ प्रह्लाद के पौत्र तथा विरोचन के पुत्र थे। कठोर तपस्या से इकट्ठी हुई शक्ति के आधार पर इन्होंने इन्द्र को भी पराजित किया था तथा तीनों लोकों में अपना प्रभुत्व स्थापित कर दिया था। इन्द्र की प्रार्थना पर भगवान् विष्णु वामन रूप में बलि के पास गये और तीन-पग भूमि की याचना की। शेष प्रसंग 'वामन' में देखिये।

बळीभद्र [बलभद्र] १८१

बलराम, वसुदेव और रोहिणी के पुत्र और श्रीकृष्ण के बड़े भाई थे। ये शेषनाग के अंशावतार माने जाते हैं। इन्होंने भी अपने शस्त्र हल और गदा से कई अत्याचारी राक्षसों का नाश किया था।

बांणासुर [बाणासुर] ४७

बाणासुर कृतवीर्य का पुत्र था। इसकी राजधानी शोणितपुर थी।

इसकी पुत्री उषा ने श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध के साथ स्वप्न में विवाह कर लिया था इसलिए उसको उसकी सखी चित्रलेखा के द्वारा सोते हुए को अपने महल में मंगवाकर बाणासुर को प्रकट किए बिना गांधर्व विवाह कर लिया। कुछ समय बाद जब रहस्य खुला तो अनिरुद्ध को बाणासुर ने क़ैद कर लिया। तब यादवी सेना शोणितपुर चढ़ आई। भयंकर युद्ध हुआ जिसमें सहस्रार्जुन के केवल चार हाथ रह गये और उसकी अपार सेना समाप्त होगई। तब बाणासुर की माता कोटरा ने आकर श्रीकृष्ण से क्षमा चाहते हुए बाणासुर के प्राणों की भीख मांगी और अनिरुद्ध उषा को खूब सम्मान के साथ रथ में बिठा कर श्रीकृष्ण के साथ द्वारका को रवाना किया।

महर्षि जमदग्नि की कामधेनु चुराकर ले जाते हुए का परशुरामजी ने पीछा करके बाणासुर को मार डाला था। इसे कार्त्तवीर्य, कार्त्तवीर्यार्जुन, सहस्रबाहु, सहस्रार्जुन और हैहय भी कहते हैं। इसके हजार हाथ थे।

बिहुं-राह [दोनो राह] २४८

'बिहुं-राह' राजस्थानी साहित्य का एक विशिष्ट योग-रूढ शब्द है। साधारणतः इसका अर्थ 'हिन्दु और मुसलमान' होता है। पर

कहीं-कहीं सुर और असुर अर्थों में भी प्रयुक्त हुआ देखा जाता है। अतः इस युग्म शब्द से जाति धर्म सम्प्रदाय अथवा गुण आदि से सम्बन्धित परस्पर विरोधी या अनैक्य भावनाओं को साथ-साथ व्यक्त करने की समान रूप से आवश्यकता अथवा परम्परा रही हो ऐसी अर्थ-ध्वनि प्रकट होती है। हमने इसी आधार से इस युग्म-शब्द का योग-रूढ़ात्मक अर्थ 'निवृत्ति और प्रवृत्ति मार्ग' किया है जो प्रसंग को देखते अधिक संगत प्रतीत होता है।

बुद्ध बोध [बुद्ध] १३,६५

बौद्धधर्म के प्रवर्तक भगवान् विष्णु का एक अवतार। इनके पिता का नाम शुद्धोदन और माता का नाम महामाया था। नेपाल की तराई के लुम्बिनी नामक नगर में इनका जन्म हुआ था। वैदिक मंत्रों द्वारा यज्ञ करने वाले एक शूद्र राजा की बुद्धि में मोह उत्पन्न करने और पाखण्ड को प्रवर्त करने के लिए यह उत्पन्न हुए थे। बौद्धों में जब पाखंड अमर्यादित हो गया तब भगवान् आद्य शंकराचार्य ने दिग्विजय कर इन्हें चीन जापान आदि पड़ोसी देशों में खदेड़ दिया। पाखण्ड धर्म पुनः भारतवर्ष में प्रवेश न कर सके इसलिए चारों दिशाओं में चार बड़े-बड़े धर्म केन्द्र (बदरिकाश्रम जगन्नाथ रामेश्वर और द्वारिका में) स्थापित किये।

भगीरथ ३१

सूर्यवंशी राजा दिलीप के पुत्र। अपने साठ सहस्र पूर्वजों को तारने के विचार से अल्पायु में ही वे तपस्या करने को निकल गये।

अनेक वर्षों तक घोर तपस्या करने के बाद ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर वर मागने को कहा । इन्होंने दो वर मांगे— "(१) कपिल मुनि के शाप से भस्म हुए मेरे पूर्वजों का गगा की पावन धारा से उद्धार हो जाय और (२) मेरा वश चले ।" ब्रह्मा ने कहा कि गगा की तीव्र धारा को भगवान् शकर के अतिरिक्त कोई धारण नही कर सकेगा । भगीरथ ने फिर अपनी तपस्या से शकर भगवान् को प्रसन्न किया । भगवान शकर ने गंगा को अपनी जटा मे धारण कर लिया । भगीरथ की प्रार्थना पर उसे जटा से निकाला । भगीरथ दिव्य रथ मे सवार होकर पथ-प्रदर्शन का कार्य कर रहे थे, गगा उनके पीछे वहती जा रही थी । इसीलिये गगा का नाम 'भागीरथी' भी प्रसिद्ध हुआ ।

भरत, ७८

स्वार्थ-त्याग और स्नेह की प्रत्यक्ष मूर्ति भरत श्रीराम के छोटे भाई और रानी कैकेयी की कोख से उत्पन्न महाराज दशरथ के तीसरे पुत्र हैं ।

कैकेयी ने इनको राज्य दिलाने के लोभ से राम को वनवास दिलवाया, जिसके कारण पिता दशरथ का मरण हुआ । भरत को इन अप्रिय घटनाओं से असह्य वेदना हुई । वे राम को लौटा लाने के लिये उनके पीछे वन में गये । पर राम ने वनवास की अवधि के पूर्व लौटना स्वीकार नही किया । भरत के अति आग्रह और निवेदन पर श्रीराम ने अपनी चरण-पादुकाए इन्हें दे दीं । भरत ने इन चरण-पादुकाओं को श्रीराम के रूप में राज्य-सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दिया और उनके प्रतिनिधि रूप में शत्रुघ्न को राज्यव्यवस्था सौंप दी । स्वय वनवासी वेश मे नंदीग्राम में रहकर भगवान श्रीराम का भजन करने लगे ।

मच्छ [मत्स्य] १३

भगवान् विष्णु का पहला अवतार जिसने प्रलय काल मे हयग्रीव दैत्य से वेदों की रक्षा की और अपने सींग से पृथ्वी को बांधकर उसकी रक्षा की।

सृष्टि के आदि विकास को समझने के लिये मत्स्यावतार की कथा बहुत ही महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक तथ्यो पर प्रकाश डालने वाली है। आधुनिक जीव-विज्ञान के अनुसार भी सृष्टि का प्रथम जीव मत्स्य ही माना गया है।

मधु २०

मधु, कैटभ दैत्य का भाई है। यह भगवान श्री कृष्ण द्वारा मारा गया था। मधुपुरी इसीने बसाई थी जो अब मथुरा कहलाती है।

मरीच [मारीच] ३५

मायावी राक्षस मारीच ताडका राक्षसी का पुत्र और रावण का मामा था। ताडका और सुबाहु को मारने के समय भगवान् राम के बाण के पख के धक्के से उडकर यह समुद्र मे जा गिरा था और लका में जाकर रह गया।

सीता का हरण करने के लिये रावण के अत्याग्रह से यह स्वर्णमृग बना था और भगवान् राम के हाथ से मारा गया था।

महरांण-मथ्यौ [महार्णव-मंथन] २५, २६

समुद्र-मथन की कथा के लिये— 'विमोहिय रूप अगाध वणाय (मोहनी अवतार)' और 'धनतर' कथाएं देखिये।

मुगत, मुगत्त, मुगति [मुक्ति] २१०, २६०, २६१ ३६१

जिस प्रकार इस देह में रहा हुआ चैतन्य (जीव)— 'यह देह मैं हूं पुरुष मैं हूं ब्राह्मण मैं हूं शूद्र मैं हूं' ऐसा दृढ़ निश्चय कर लेता है; उसी प्रकार यह दृढ़ निश्चय हो जाय कि 'मैं (बोलने वाला) ब्राह्मण नहीं हूं शूद्र नहीं हूं पुरुष नहीं हूं किन्तु संग रहित सच्चिदानन्द-स्वरूप प्रकाश-रूप सर्वान्तर्यामी और चिदाकाश-रूप हूं।' ऐसा अपरोक्ष ज्ञानी पुरुष जीवन-मुक्त कहलाता है।

वहाँ ब्रह्मन् 'मैं ब्रह्म हूं' इस प्रकार के ज्ञान से ज्ञानी पुरुष सभी कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

मुचकंद [मुचुकुन्द] ४७

मुचुकुन्द अपने पिता महाराज मान्धाता के समान ही पराक्रमी होने के कारण देव-दैत्यों के युद्ध के समय देवता लोग इसे अपनी सहायता के लिये ले गये थे। युद्ध में शत्रु व वीरता से लड़कर इसने अनेक दानवों का संहार किया। देवताओं की विजय होने पर इसे वर मांगने को कहा गया। इसने कहा कि पृथ्वी पर मेरा राज्य और परिवार नष्ट हो जाने के कारण चित्त में बहुत खेद रहने से नींद नहीं आ रही है और इधर इस युद्ध से थकित हो जाने के कारण मुझे शयन-निद्रा की आवश्यकता है और सबसे मैं जो कोई मुझे जगा दे वह मेरी दृष्टि पड़ते ही भस्म हो जाय और दूसरा यह कि जगने के बाद तत्काल मुझे भगवान् के दर्शन हो जाय। देवताओं ने तथास्तु कहा। वह जाकर एक पर्वत की कंदरा में सो गया।

मथुरा विजय करके जब कालयवन श्री कृष्ण का पीछा करता हुआ उस कंदरा मे पहुचा और ज्यो ही उसने सोते हुए मुचुकुन्द को श्रीकृष्ण समझकर एक लात प्रहार कर दी, त्यो ही मुचुकुन्द की आख खुली और सामने खडे कालयवन को देखा और वह भस्म हो गया। उसी समय मुचुकुन्द की खाट के नीचे से निकल कर श्रीकृष्ण ने उसे दर्शन भी दे दिये।

म्रगकासब [मृगकशिपु] ५६

हिरण्यकशिपु कश्यप ऋषि तथा अदिति का पुत्र एक दैत्यराज था। कठोर तपस्या द्वारा ब्रह्मा से अभय प्राप्त कर इसने देवताओं को कष्ट देना आरम्भ किया और स्वर्ग पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया। भगवान् विष्णु के प्रति इसके हृदय में बडा द्वेष था। इसीकी प्रतिक्रिया स्वरूप इसके पुत्र प्रह्लाद मे उनके प्रति भक्ति की भावना का उदय हुआ था। प्रह्लाद की इस प्रवृत्ति को देखकर इसने कितनी ही बार उसका वध करवाने के प्रयत्न किये। अन्त मे भगवान् विष्णु ने नृसिंह रूप धारण करके हिरण्यकशिपु का वध किया और अपने भक्त प्रह्लाद की रक्षा की।

रघुराम [रघु+राम] १३

अयोध्या के इक्ष्वाकुवंशी महाराज दशरथ के पुत्र भगवान् विष्णु के अवतार मर्यादा-पुरुषोत्तम श्रीराम। इक्ष्वाकुवंश में महाराजा रघु बहुत प्रसिद्ध हो गये हैं अत यह रघुवंश भी कहलाता है। रघुराम से तात्पर्य है रघुवंश में उत्पन्न भगवान् श्रीराम।

रणछोड़ ७७

जरासंध की लड़ाई में रणक्षेत्र छोड़कर द्वारका भाग जाने से भगवान् श्रीकृष्ण का नाम 'रणछोड़' कहलाया। सौराष्ट्र प्रदेश में गोमती के किनारे पश्चिमी समुद्र तट पर द्वारिका नामक नगर में भगवान् रणछोड़राय का बहुत विशाल मन्दिर बना हुआ है जिसमें श्रीरणछोड़राय की श्यामवर्ण चतुर्भुज-मूर्ति प्रतिष्ठित है। मन्दिर के शिखर पर पूरे थान की ध्वजा लहराती है। विश्व की यह सबसे बड़ी ध्वजा है।

कहा जाता है कि भगवान् श्रीकृष्ण ने द्वारका जाते समय मार्ग में जिन स्थानों पर विश्राम किया था उनमें डेमा और खेड़ (क्षीरपुर) दो प्रमुख स्थान थे। अतः डेमा में श्री धरणीधर और खेड़ में श्रीरणछोड़राय के नाम से मन्दिर प्रतिष्ठित हुए[1]।

द्वारका चार धामों में से पश्चिम दिशा का धाम है और यहीं जगद्गुरु श्री शंकराचार्य का शारदा-पीठ सुस्थित है।

भक्तवर ईसरदासजी ने हरिरस का निर्माण कर सर्वप्रथम द्वारका जाकर श्रीरणछोड़राय को सुनाया था।

रिक्खम, रिखम, रिखम्भ [ऋषभ] १२, ६२, ८६
देखिये 'वृषभ'

---

१ खेड़ का श्रीरणछोड़राय का मन्दिर बालोतरा (मारवाड़) से २ मील पश्चिम में लूनी नदी के किनारे पर स्थित है। खेड़ किसी समय बहुत बड़ा नगर था। राठौड़ों की प्रथम राजधानी खेड़ पाटण ही था। डेमा के लिये देखो 'धरणीधर' कथा।

लाखाग्रह [लाक्षा-गृह] ४५

लाख का घर जिसे दुर्योधन ने पांडवों को उसमे आग लगाकर जीवित जला देने के लिए वारणावत में बनवाया था। परन्तु पाडवो को इस षडयन्त्र का पहिले ही पता लग गया था और वे गुप्त रीति से उसमें से सुरक्षित निकल गये थे। प्रयाग के पास लच्छागिर स्थान ही लाक्षागृह कहा जाता है। हडियाखास स्टेशन से लाक्षागृह ३ मील पर है।

वलमीक [वाल्मीकि] २४४

वाल्मीकि ऋषि को वचपन मे इनके माता-पिता ने तप करने को जाते समय जगल मे छोड दिया। एक भील ने अपने घर लाकर इनका पालन-पोषण किया और लूट-खसोट, चोरी और शिकार आदि के लिए धनुर्विद्या में निपुण बना दिया। लूट-मार करते समय एक दिन इन्हे एक ऋषि मिल गये। ऋषि ने कहा— वस्त्र और इस एक पात्र के अतिरिक्त मेरे पास कोई धन-माल नही है, फिर भी तू मुझे लूटना चाहता है तो मेरा इनकार नही, परन्तु पहले तू अपने घरवालों को पूछकर आजा कि इस अधर्म के भागी वे भी हैं कि नही ? तब तक मैं यहा खडा हूँ। घर जाकर सभी परिवार वालो को पूछने पर उन सब की ओर से यही उत्तर मिला कि— 'पाप तवैव तत्सर्वं वय तु फल भागिन।, 'तेरे किये हुए पापों का फल तुझे ही भोगना होगा। हम उसके भागीदार नही हैं।' घरवालो का यह उत्तर सुनकर उसको आश्चर्य हुआ और बहुत दुख हुआ। घर से लौटकर ऋषि के पास आये और उनके चरणों में गिरकर अपने

प्रकार की प्रार्थना की। ऋषि ने उसे सर्वव्यापी ब्रह्मरूप राम का नाम जपने का आदेश दिया। ऋषि के वचनों में अत्यन्त श्रद्धा और विश्वास करके एक ही स्थान पर बहुत समय तक अटल रूप से राम नाम का जप करते रहने से इनके ऊपर वल्मीक (दीमक और उसकी मिट्टी) का ढेर लग गया जिससे इनका नाम 'वाल्मीकि' पड़ गया। आगे चलकर यही वाल्मीकि बड़े तपस्वी और तत्ववेत्ता महर्षि सिद्ध हुए। एक शिकारी के द्वारा मिथुन रत क्रौंच पक्षी का वध कर लेने पर नारी-क्रौंच के करुणाजनक दुख को देखकर इनके कोमल हृदय में उत्पन्न अपार दया ने इन्हें आदि-महाकवि वाल्मीकि बना दिया। जिस परब्रह्म राम के नाम से वे पावन बने उस राम के नाम पर संस्कृत में 'शतकोटि काव्य' की महर्षि वाल्मीकि ने रचना की। संसार का प्रथम महाकाव्य होने के कारण यह महाकाव्य 'आदि महाकाव्य वाल्मीकि रामायण' और उसके रचयिता महर्षि वाल्मीकि 'आदि-महाकवि' कहलाये।

बांमन [वामन] १३

त्रेतायुग में कश्यप ऋषि से अदिति के गर्भ से उत्पन्न हुआ भगवान् विष्णु का एक अवतार। विरोचन दैत्य का पुत्र बलि इन्द्र पद प्राप्ति के लिए जब सौवां यज्ञ कर रहा था तब इन्द्र की रक्षा के लिए भगवान् ने वामन का रूप धारण करके उससे तीन पैड पृथ्वी मांगी। जब राजा बलि ने पृथ्वी के दान का संकल्प लिया तब भगवान् वामन ने विराट रूप धारण करके एक पैड से समस्त पृथ्वी दूसरे से आकाश को नाप लिया और तीसरा पैड बलि के शरीर पर रखकर उसको पाताल में दबा दिया।

वाराह १३, ८२

विष्णु के अवतारो मे से द्वितीय। हिरण्याक्ष दैत्य जब पृथ्वी को लेकर पाताल को भागा तभी पृथ्वी का उद्धार करने और इसका वध करने के लिए वाराह अवतार हुआ।

वालखिला [वालखिल्य] २४५

गो-क्षुर के खड्डे में रहने वाला एक महान् सूक्ष्म आकृतिवाला ऋषियो का समूह।

वाळि [वालि] ४०

वालि किष्किन्ध देश की पपा नगरी का महा पराक्रमी वानर राजा था। यह अगद का पिता और सुग्रीव का बडा भाई था। इसको वरदान था कि इसके सम्मुख युद्ध करने वाले का आधा बल इसमे प्रवेश कर जाता था। इसलिये वालि सुग्रीव की शत्रुता में भगवान राम ने ताल वृक्षो की ओट में खडे रहकर वालि को मारा था। वालि ने रावण को काख मे दबा दिया था। इसने दुदुभि और मायावि जैसे बलशाली राक्षसों को मारा था।

विमोहिय रूप अगाध वणाय (मोहिनी अवतार) २४

१- शिवजी ने एक समय भस्म में से एक असुर उत्पन्न किया और उसे वरदान दिया कि जिसके ऊपर वह हाथ फेरेगा, वह भस्म हो जायगा। एक दिन शिवजी को ही भस्म करके पार्वती को प्राप्त करने की दुर्बुद्धि से शिवजी के ऊपर इसने हाथ फेरने का विचार किया। शिवजी डर के मारे भागे। असुर ने इनका पीछा किया।

उस समय रास्ते में भगवान् विष्णु मोहिनी के रूप से प्रगट हुए और असुर से कहा कि 'मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ। मुझे नृत्य का बहुत शौक है तुम यहाँ नाचो, फिर मैं तुम्हारे साथ चल दूंगी।' असुर ने नाचते-नाचते अपने सिर पर हाथ फिराया और वहीं भस्म होगया। 'अटाचर काज वहँत वद्धम' (२४) इस प्रकार भगवान् विष्णु ने मोहिनी रूप धारण करके मुत भावन भोले शंकर के कष्ट को दूर किया।

२ सुम्भ तथा निसुम्भ नामक दो राक्षसों के वध के लिये भगवान् विष्णु ने मोहिनी अवतार धारण किया। दोनों राक्षस स्त्री को देखकर मोहित हो गये और उसको प्राप्त करने के लिये आपस में लड़ मरे।

३- समुद्र मंथन से जो अमृत निकला उसे प्राप्त करने के लिये सुरों और असुरों में भयंकर कलह उत्पन्न हुआ। दैत्यों ने अमृत छीन लिया। देवता भगवान् विष्णु की शरण में गये। भगवान् विष्णु ने मोहिनी का अनुपम स्त्री रूप धारण किया और दैत्यों को उसकी प्राप्ति के लिये परस्पर लड़वा कर उनका नाश किया और अमृत बट देवताओं को पिलवाया।

बिसामित, बिस्वामित [विश्वामित्र] ३४, २४५

ये पुरुवंशी महाराज गाधि के पुत्र थे। इन्होंने वैदिक ऋचाओं का निर्माण किया था। इनकी ऋचाएं ऋग्वेद के तृतीय मंडल में मिलती हैं। अपने यज्ञ की रक्षार्थ महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों को मांग लाये। यज्ञ विधान सफलता से संपूर्ण

हो जाने के बाद महर्षि इन्हें महाराज जनक के यहा धनुष-स्वयवर मे ले गये थे। भगवान् शकर के कठिन धनुष को उस स्वयवर मे कोई उठा भी नही सका था, तब विश्वामित्र की आज्ञा पाकर राम ने उसे सहज ही मे तोड डाला था। इनकी घोर तपस्या से इन्द्र भी विचलित हो गये थे और इस भय से कि कही विशेष शक्ति का सग्रह कर यह मुझसे इन्द्रत्व न छीन लें, मेनका को इनकी तपस्या भग करने के लिए भेजा। विश्वामित्र का ध्यान भग हुआ और मेनका के प्रति वे आकर्षित हुए। उसी के फल-स्वरूप शकुन्तला का जन्म हुआ। इनको अपने इस कृत्य से इतनी ग्लानि हुई कि ये हिमालय मे तपस्या करने को चले गये।

अन्त मे अपनी घोर तपस्या के फल-स्वरूप ये 'राजर्षि' से 'ब्रह्म ऋषि' बन गये थे।

आर्ष-वाणी

सत्येनार्क प्रतपति सत्ये तिष्ठति मेदिनी।
सत्य चोक्त परो धर्म स्वर्ग सत्ये प्रतिष्ठित ॥
(महर्षि विश्वामित्र)

वीठळ [विट्ठल] ८२

दक्षिण के एक प्रसिद्ध देवता जो विष्णु के अवतार माने जाते हैं। कहा जाता है कि पढरपुर के पुण्डरीक नामक ब्राह्मण मे विष्णु का बहुत कुछ अश आगया था, उनकी मूर्ति वहीं स्थापित है और विष्णु के प्रतीक के रूप मे पूजी जाती है।

वैकुंठ १८६

रवत मन्वन्तर में भगवान् विष्णु का एक अवतार वैकुंठ नाम का हुआ था। सत्य-लोक में जहाँ वैकुंठ भगवान् निवास करते हैं उसका नाम ही वैकुंठ या वैकुंठ लोक कहलाया।

व्यास १४

सत्यवती नामक धीवर की कन्या में पराशर ऋषि से उत्पन्न भगवान् श्री वेद व्यास। भागवत में ये विष्णु के अवतार माने गये हैं। द्वीप में जन्म होने के कारण इनका नाम कृष्ण-द्वैपायन भी है। ये महाभारत पुराण और वेदान्त-दर्शन के रचयिता हैं।

ऋषभ [वृषभ, ऋषभ] १२

शौच और ज्ञान के प्रवर्तक नाभिराजा के पुत्र भगवान् श्री ऋषभदेव। ये विष्णु के अंश एवं पूत अवतार थे। इन्होंने भारत वर्ष के पश्चिम भाग में जैनधर्म का प्रचार किया। इसलिये जैनों के प्रथम तीर्थंकर और आदीश्वर कहे जाते हैं।

व्रिंदावन [वृन्दावन] ७४, २२७

वृन्दावन मथुरा से ६ मील उत्तर में है। यह भगवान् श्रीकृष्ण की निकुञ्ज-लीलाओं की प्रधान रंग-स्थली है। महाराज केदार की पुत्री वृन्दा ने इसी स्थान पर श्रीकृष्ण को पति रूप में पाने के लिये तपस्या की थी। वृन्दा की तपोभूमि होने के कारण ही इसे वृन्दावन कहा जाता है। श्रीकृष्ण ने यहीं यमुना-तट पर कालिय ह्रद में

कालिय-नाग को नाथा था। यहा भगवान् श्रीकृष्ण की विविध लीलाओ के नामो पर अनेको मन्दिर बने हुए हैं। श्री गोविन्ददेवजी और श्री गोकुलनाथजी के विग्रह औरंगजेब के समय मे मन्दिरो पर यवनो का आक्रमण होने के कारण वृन्दावन मे जयपुर लाये गये थे, जहा राजमहलो के सम्मुख इनके भव्य मन्दिर बने हुए हैं।

लखनऊ के नगर-सेठ लाला कुन्दनलालजी फुन्दनलालजी ने अपनी अपार सम्पत्ति को त्याग कर वृन्दावन मे विरक्त की भाति रहकर शाह-विहारीजी की भक्ति की थी। 'ललित किशोरी' एव 'ललित माधुरी' के नाम से जिनके सुमधुर पद साहित्य-ससार और भक्तजनो मे प्रसिद्ध हैं।

श्रीरंग, सिरिरंग [श्रीरंग] ११२,२२८

दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध तीर्थ जो कावेरी के मध्य एक द्वीप के रूप मे स्थित है। कावेरी की दो धाराओं मे यह द्वीप १७ मील लम्बा और तीन मील चौडा है। त्रिचिनापल्ली नगर रेलवे स्टेशन है जहा मे श्री रगम् को बसो से जाना होता है। तीर्थ के निकट भी श्रीरगम् नाम का स्टेशन है। श्रीरगजी के मन्दिर का विस्तार २९६ बीघे का कहा जाता है। मन्दिर के चारो ओर सात प्राकार बने हुए हैं। चौथे घेरे में एक मडप एक सहस्र स्तम्भों का बना हुआ है। निज मदिर मे भगवान् विष्णु (श्रीरग) की शेष शय्या पर शयन किये हुए श्याम वर्ण की विशाल चतुर्भुज-मूर्ति दक्षिणाभिमुख स्थित है। इस मन्दिर के विशाल प्रांगण मे अनेकों बडे बडे मदिर बने हुए हैं। इतना विस्तार वाला मन्दिर भारत में दूसरा नही है। श्री लक्ष्मीजी के मन्दिर के

सामने तमिल के भक्त-महाकवि कम्ब के नाम से कम्ब-मण्डप बना हुआ है जहाँ उन्होंने अपनी कम्ब रामायण की रचना करके भक्तजनों को सुनाया था।

मथुरा वृन्दावन अयोध्या और पुष्कर आदि तीर्थों में भी श्रीरंगजी के बड़े-बड़े मन्दिर बने हुए हैं।

सतरुघण [शत्रुघ्न] ७८

सुमित्रा रानी से उत्पन्न महाराज दशरथ का चौथा पुत्र। राम के वनगमन के अनन्तर भरत नन्दी ग्राम में रहने लगे। अत श्रीराम के नाम पर इन्होंने ही चौदह वर्ष तक अयोध्या का राज्य किया। इनका विवाह कुशध्वज की पुत्री श्रुतकीर्ति से हुआ था। इनके सुबाहु और शत्रुघाती दो पुत्र थे।

रावण को मारकर भगवान् राम अयोध्या वापिस पधारे तब एक समय कई ऋषि राम के पास आये और उन्होंने लवणासुर दैत्य के अत्याचारों का वर्णन किया। भगवान् राम की आज्ञा लेकर इन्होंने लवणासुर का वध कर डाला और उस देश का नाम 'शूरसेन' रखा। मधुपुरी नाम की नगरी का नाम बदल कर 'मथुरा' कर दिया और उसे अपनी राजधानी बना ली।

पश्चात् जब इन्हें पता चला कि भगवान् राम स्वधाम पधारने वाले हैं तब यह भी अयोध्या चले आये और उन्हीं के साथ परमपद को प्राप्त हुए।

सत्रूपा [शतरूपा] १६२

स्वायभू मनु की स्त्री शतरूपा ब्रह्मा के वायें अग से उत्पन्न हुई थी। इसी का दूसरा नाम सरस्वती कहा जाता है। इनकी पुत्री देवहूति ने इनको आत्मतत्त्वोपदेश किया था।

सनक्क [सनक] १७

ब्रह्मा के चार मानस पुत्रो मे से एक सनक। ये परम ज्ञानी ब्रह्मनिष्ठ और भगवान् विष्णु के सभासद् हैं

सनातन १७

ब्रह्मा के एक मानस पुत्र। सनातन को सनत्सुजात भी कहते हैं। धृतराष्ट्र को इन्होंने ही धर्मोपदेश किया था। इनके तीन भाई सनक सनद और सनत्कुमार और हैं और ये चारो ही ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं और ब्रह्मनिष्ठ हैं एव सदैव बाल्यावस्था प्राप्त हैं।

सयभुव [स्वायंभुव] १६२

ब्रह्मा के दाहिने अग से उत्पन्न स्वायभू मनु चौदह मनुओं में पहिले मनु हैं जो मानव जाति के पिता हैं। ब्रह्मा के वायें अग से उत्पन्न शतरूपा इनकी स्त्री है।

सह इन्द्री, [सकल इन्द्रिय] ११२

पांच ज्ञानेन्द्रिय और पाच कर्मेन्द्रिय।

श्रोत्र त्वक् चक्षु रसना घ्राणम् इति पचज्ञानेन्द्रियाणि।

कान, नाक, आख, जीभ और त्वचा –ये पाच ज्ञानेन्द्रिय हैं।

१ सवण (१ १ ११२) श्रोत्रस्य विषयः शब्दग्रहणम् ।

कान का विषय सुनना ।

२ नासा रंध (१ २) घ्राणस्य विषयो गन्धग्रहणम् ।

नाक का विषय सूंघना ।

३ नयन लोयण (१ ३, १२८ ११२) चक्षुषो विषयो रूपग्रहणम् ।

आंख का विषय देखना ।

४ जीभ रसणा (१ ४ १२८, १२९ ११२) रसनाया विषयो रसग्रहणम् ।

जीभ का विषय स्वाद ।

५ तुचा (११) त्वचो विषयः स्पर्शग्रहणम् ।

चमड़ी का विषय स्पर्श ।

वाक् पाणि पादपायुपस्थानीति पंचकर्मेन्द्रियाणि ।

वाणी हाथ पांव गुदा और उपस्थ —ये पांच कर्मेन्द्रिय हैं ।

१ वाणी वयणा (१ ६ २१२) वाचो विषयो भाषणम् ।

वाणी का विषय बोलना ।

२ कर (१ ७) पाण्योर्विषयो वस्तुग्रहणम् ।

हाथ का विषय वस्तु को ग्रहण करना ।

३ चरण (१ ८) पादयोर्विषयो गमनम् ।

पांव का विषय चलना ।

४ गुदा । पायोर्विषयो मलत्यागः ।

गुदा का विषय मलत्याग ।

५. उपस्थ । उपस्थस्य विषय आनन्द इति ।

उपस्थ का विषय आनन्द और मूत्रत्याग ।

(हरिरस मे गुदा और उपस्थ का उल्लेख नहीं किया गया है ।)

सातूं-रिख [सप्त ऋषि] २४१

गौतम, भारद्वाज विश्वामित्र जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप और अत्रि– इन ऋषियो का मण्डल या समूह सप्तर्षि कहलाता है।

सामीप (सामीप्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सामीप्य-मुक्ति वह है जिसमे मुक्त जीव का भगवान् के समीप पहुँच जाना माना जाता है।

सायुज्य २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सायुज्य-मुक्ति वह है जिसमे जीवात्मा परमात्मा मे लीन हो जाता है।

सालोक (सालोक्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सालोक्य-मुक्ति वह है जिसमे मुक्त जीव भगवान् के साथ एक लोक मे निवास करता है।

सावेव [सावयव] २६०

सावयव-मुक्ति का दूसरा नाम है सारूप्य-मुक्ति। मुक्ति के चार प्रकारो में से यह एक प्रकार हैं। सारूप्य-मुक्ति वह है जिसमे भक्त अपने भगवान् का रूप प्राप्त कर लेता है।

सिदज्ज [स्वेदज] २६९

जीवो की उत्पत्ति के (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) चार भेदो मे से एक। पसीने से उत्पन्न होने वाले जू, खटमल आदि कीट स्वेदज कहलाते हैं। इन्हे ऊष्मज भी कहते हैं।

१ श्रवण (१ १ ११२) श्रोत्रस्य विषयः शब्दग्रहणम् ।

कान का विषय सुनना ।

२ नासा-रंध्र (१ ९) घ्राणस्य विषयो गन्धग्रहणम् ।

नाक का विषय सूंघना ।

३ नयन लोचन (१ ९ १२८ ११२) चक्षुषो विषयो रूपग्रहणम् ।

आंख का विषय देखना ।

४ जीभ रसना (१ ४ १२८, १२९ ११२)

रसनाया विषयो रसग्रहणम् ।

जीभ का विषय स्वाद ।

५ त्वचा (११) त्वचो विषयः स्पर्शग्रहणम् ।

चमड़ी का विषय स्पर्श ।

वाक् पाणि पादपायूपस्थानीति पंचकर्मेन्द्रियाणि ।

वाणी हाथ पांव गुदा और उपस्थ —ये पांच कर्मेन्द्रिय हैं ।

१ वाणी बचन (१ १ २१२) वाचो विषयो भाषणम् ।

वाणी का विषय बोलना ।

२ कर (१ ७) पाण्योर्विषयो वस्तुग्रहणम् ।

हाथ का विषय वस्तु को ग्रहण करना ।

३ चरण (१ ३) पादयोर्विषयो गमनम् ।

पांव का विषय चलना ।

४ गुदा । पायोर्विषयो मलत्यागः ।

गुदा का विषय मलत्याग ।

५. उपस्थ । उपस्थस्य विषय आनन्द इति ।

उपस्थ का विषय आनन्द और मूत्रत्याग ।

(हरिरस में गुदा और उपस्थ का उल्लेख नहीं किया गया है ।)

सातूं-रिख [सप्त ऋषि] २४१

गौतम, भारद्वाज विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ, कश्यप और अत्रि– इन ऋषियो का मण्डल या समूह सप्तर्षि कहलाता है।

सामीप (सामीप्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो में से एक। सामीप्य-मुक्ति वह है जिसमें मुक्त जीव का भगवान् के समीप पहुँच जाना माना जाता है।

सायुज्य २६०

मुक्ति के चार प्रकारो में से एक। सायुज्य-मुक्ति वह है जिसमें जीवात्मा परमात्मा मे लीन हो जाता है।

सालोक (सालोक्य) २६०

मुक्ति के चार प्रकारो मे से एक। सालोक्य-मुक्ति वह है जिसमे मुक्त जीव भगवान् के साथ एक लोक मे निवास करता है।

सावेव [सावयव] २६०

सावयव-मुक्ति का दूसरा नाम है सारूप्य-मुक्ति। मुक्ति के चार प्रकारो मे से यह एक प्रकार हैं। सारूप्य-मुक्ति वह है जिसमें भक्त अपने भगवान् का रूप प्राप्त कर लेता है।

सिदज्ज [स्वेदज] २६९

जीवो की उत्पत्ति के (अण्डज, स्वेदज, जरायुज और उद्भिज्ज) चार भेदो में से एक। पसीने से उत्पन्न होने वाले जू, खटमल आदि कीट स्वेदज कहलाते हैं। इन्हें ऊष्मज भी कहते हैं।

सिसपाळ [शिशुपाल] ८५

शिशुपाल चेदिराज दमघोष के पुत्र और श्रीकृष्ण के मौसेरे भाई थे। जन्म के समय इनके तीन नेत्र और चार हाथ थे। शिशुपाल की माता श्रुतश्रवा को जब यह मालूम होगया कि उसके पुत्र की मृत्यु श्रीकृष्ण के हाथ से होगी तो उसने शिशुपाल के १ अपराध क्षमा कर देने के लिए श्रीकृष्ण से प्रतिज्ञा करवा ली। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में जब शिशुपाल ने श्रीकृष्ण की सौ से अधिक बार निन्दा की और गालियां दीं तब कृष्ण ने उसे मार दिया।

सुकदेव [शुकदेव] ५२

महर्षि शुकदेव कृष्ण-द्वैपायन भगवान् व्यास के पुत्र हैं। भगवान् शंकर जब पार्वती को अमर होने के लिए विष्णु-सहस्र नाम का उपदेश दे रहे थे उस समय उस कथा को एक शुक भी सुन रहा था। शिव को जब पता चला तो उन्होंने उसका पीछा किया। उसी समय व्यास पत्नी अपने आंगन में खड़ी जंभाई ले रही थी। उनको देख शुक शरीर छोड़ उनके पेट में चले गये और १२ वर्ष तक वहीं रहे। भगवान् व्यास देव महाभारत तथा गीता आदि अपनी पत्नी को सुनाते थे। इस प्रकार गर्भ में ही शुक तत्वज्ञानी हुए। भगवान् ने इन्हें गर्भ में ही वचन दिया कि संसार की माया तुम्हें नहीं व्यापेगी। बाल्यावस्था में ही पूर्ण तत्वज्ञानी होने के कारण ऋषियों में ये अग्रणी गिने जाते हैं।

इन्होंने ही महाराज परीक्षित् को भागवत की कथा सुनाई थी।

सुग्रीव ४०

यह सूर्य के पुत्र, प्रसिद्ध वानर वीर बालि के अनुज, भगवान् राम के मित्र एव भक्त थे। सीताहरण के बाद श्रीराम ने सुग्रीव से मित्रता की। बालि का वध करके किष्किधा का राज इन्हे दिया। राम-रावण युद्ध मे इन्होंने भगवान् राम की बडी सहायता की थी।

सुदामा ३३६

सुदामा भगवान् श्री कृष्ण और बलराम के सहपाठी थे। दीन होने के कारण यह मैले-फटे वस्त्रों मे रहा करते थे इसलिये गुरु सादीपनि के यहा इनके सहपाठी इन्हे कुचैल कहा करते थे। दरिद्रता से बहुत दुखी होने पर इनकी स्त्री ने इन्हे दरिद्रता निवारणार्थ श्री कृष्ण के पास द्वारका को भेजा था। वहां जाने पर भगवान् ने इनका अपूर्व सम्मान किया, पर सकोचवश इन्होंने मागा कुछ नही। पर भगवान ने इनके अपने यहा आने के आशय को समझ कर इनको विदा करने के पूर्व ही अपार सम्पत्ति इनके यहां भेजकर अपने समान वैभवशाली बना दिया।

महात्मा गांधी की जन्मभूमि पोरबदर ही सुदामाजी का निवासस्थान था। इसे सुदामापुरी भी कहा जाता है।

सुपरणोखा [शूपरणखा] ३८

यह रावण की बहिन थी। इसके नख सूप की भांति बड़े बड़े होने के कारण इसका नाम शूर्पणखा रखा गया था। जिस समय भगवान् राम सीता तथा लक्ष्मण के साथ वनवास कर रहे थे यह राम के प्रति आकर्षित हो गई थी और इसने उनके सम्मुख एक सुन्दरी के रूप में उपस्थित होकर विवाह का प्रस्ताव रखा। राम के अस्वीकार करने पर वह लक्ष्मण के पास गई किन्तु उन्होंने फिर इसे राम के पास ही भेज दिया। अंत में भगवान् राम ने लक्ष्मण से इसके नाक कान कटवा दिये अपनी यह दुर्दशा करवाकर यह खर दूषण के पास गई। राम ने जब ये दोनों राक्षस लड़ने के लिए आये तो उन्होंने इनका वध कर डाला। शूर्पणखा तब अपने भाई रावण के पास रोती हुई गई और अपनी दुर्दशा भी सीता के सौन्दर्य का वर्णन उसके सम्मुख किया। इसीलिये रावण ने क्रोधित होकर सीता का हरण किया।

सुबाहु ३५

सीता हरण के समय स्वर्ण मृग का रूप धारण करने वाले मारीच का यह भाई और रावण का यह मामा था। महर्षि विश्वामित्र जब जब यज्ञ करने लगते तब यह अपने भाई मारीच और अपनी माता ताड़का के साथ आकर यज्ञ विध्वंस कर देते थे। विश्वामित्र ऋषि यज्ञ की रक्षार्थ महाराज दशरथ से राम और लक्ष्मण को मांग कर ला रहे थे तब मार्ग में ही ताड़का ने इन पर आक्रमण कर दिया। भगवान राम ने उसे वहीं मार दिया। बादमें यज्ञ में विघ्न करते समय सुबाहु भी राम के हाथ से मारा गया।

सुरसत्ती, सरसति [सरस्वती] १, १६०

वेदो मे सरस्वती का नदी और वाणी (ज्ञान-विज्ञान) की अधिष्ठात्री वाग्देवी दोनो रूपो मे उल्लेख है। ब्रह्मा की ज्ञानशक्ति होने के कारण ब्रह्मा की पुत्री और पत्नी, दोनो रूपों में ये मान्य हैं। अतः वाला, वीज-मन्त्र और ब्रह्माणी भी कही जाती हैं। सस्कृत भाषा और देवनागरी अक्षरों का निर्माण इन्होंने ही किया था। गायत्री और सावित्री इनके अन्य नाम हैं। नदी के रूप में गगा की भाति ही सरस्वती की पूजा होती हैं। इसकी एक शाखा गुजरात में होकर कच्छ के रण में मिलती है। गया में फल्गु के तट पर जिस प्रकार पितृश्राद्ध सम्पन्न किया जाता है उसी प्रकार सरस्वती के तट पर सिद्धपुर में मातृश्राद्ध का पिण्डदान किया जाता है, अत· इस क्षेत्र को मातृगया तीर्थ-क्षेत्र और सरस्वती को मातृगगा भी कहते हैं।

सूक्षम-देह [सूक्ष्म-देह] १७०

जो इकट्ठे नही हुए हुए पच महाभूतों और कर्मों द्वारा उत्पन्न है, और जो सुख दु खादि भोग भोगने का साधन है।

पाच ज्ञानेन्द्रिय पांच कर्मेन्द्रिय, पाच प्राण एक मन और एक बुद्धि– इन सत्रह तत्वों वाला सूक्ष्म-शरीर है।

> अपचीकृत पच महाभूतै· कृत सत् कर्मजन्यं,
> सुख दु खादि भोग साधनम् ।
> पचज्ञानेन्द्रियाणि पंचकर्मेन्द्रियाणि पचप्राणादय ,
> मनश्चैक बुद्धिश्चैका एव सप्तदशकलाभिः
> सह यत्तिष्ठति तत्सूक्ष्मशरीरम् ॥

(तत्व बोध)

सेतबंद रामेस [सेतुबन्ध रामेश] १४६

चार दिशाओं के चार प्रमुख धामों में सेतुबंध-रामेश्वर दक्षिण-भारत का एक प्रसिद्ध धाम है। यह एक द्वीप में स्थित है जो रामेश्वर-द्वीप कहलाता है। यह द्वीप लगभग ११ मील लंबा और ७ मील चौड़ा है। भगवान् श्री राम ने लंका पर चढ़ाई करते समय इस शिव-लिंग की स्थापना की और भारत और लंका के बीच की समुद्र-खाड़ी पर विशाल सेतु का निर्माण किया था। श्री रामेश्वर महादेव की गणना द्वादश ज्योतिर्लिंगों में है। भगवान् रामेश्वर का मंदिर बहुत विशाल और वास्तु-कला का अनुपम आदर्श है। मंदिर के विशाल परकोटे और आंगन में अनेकों देवताओं के बड़े-बड़े मंदिर २० कुंए और अनेकों कुंड बने हुए हैं। इन सभी कुंओं का पानी मीठा है, जबकि बाहर के कुओं का खारा है। रामेश्वर द्वीप में भी अनेकों तीर्थ हैं।

इस धाम से संबंधित शंकराचार्य-पीठ का नाम शृंगेरी-पीठ है जो तुंगा नदी के तटपर शृंगेरी स्थान में स्थित है।

हंस १२

एक बार सत्यलोक में सनकादिकों ने ब्रह्मा से अध्यात्म संबंधी कुछ प्रश्न किये थे। उस समय ब्रह्माजी किसी अन्य कार्य में व्यस्त थे इसलिये यथा-संतोष उत्तर नहीं दे पाये। सनकादिकों की तीव्र जिज्ञासा को देखकर भगवान् विष्णु और शंकर हंस का रूप धारण करके उनके पास पहुंचे और उनके संशय का निवारण किया। इसप्रकार भगवान् विष्णु का चौदहवां अवतार माना जाता है।

हनूमांन [हनुमान] ३६

अजना के गर्भ से उत्पन्न पवन के ये महावीर पुत्र थे। सीता का लका में रावण के यहां अशोक वाटिका मे वदिनी होने का पता इन्होंने ही लका मे पहुचकर लगाया था। लका में ये मेघनाद के द्वारा वंदी हुए, तब रावण की आज्ञा से जव इनकी पूछ मे रुई लपेट कर आग लगादी गई तो अपनी जलती हुई पूछ से इन्होने लका-दहन किया था। राम-रावण युद्ध में मेघनाद के शक्ति प्रहार से जव लक्ष्मण मूर्छित हो गये थे तव ये ही एक रात मे हिमालय के सजीवनी औषधि वाले द्रोणगिरि शिखर को उठा कर ले आये थे। ये भगवान् राम के अनन्य भक्त थे। रावण-वध तथा सीता की मुक्ति के वाद ये भी पुष्पक विमान मे वैठ कर अयोध्या आये थे। भगवान् राम ने जव अश्वमेध यज्ञ किया था तव ये भी अश्व के साथ देश-विदेशों मे गये थे, वहा लव-कुश के सम्मुख लक्ष्मण के साथ इन्हे भी युद्ध में पराजित होना पडा था। अपनी अनन्य सेवा से इन्होंने श्रीराम को अत्यन्त प्रसन्न किया। श्रीराम की भी इनके ऊपर इतनी अधिक ममता थी कि श्रीराम ने इनको ब्रह्म-विद्या की शिक्षा दी और इसमे इनको निपुण करके जिज्ञासुजनों को उपदेश करने का अधिकारी वनाया। हनुमानजी ने भगवान राम की प्रत्यक्ष लीलाओं को देख कर हनुमन्नाटक नामक रामचरित की रचना की है।

हयग्रीव, हयानन १२, ५५

(१) भगवान विष्णु के एक अवतार जो ब्रह्मा के यज्ञ में उत्पन्न हुए और जिन्होंने व्यास के द्वारा वेदों की वाणी उत्पन्न की।

(२) हयग्रीव नाम का एक दैत्य जिसने देवी को प्रसन्न करके वरदान प्राप्त किया था कि उसकी मृत्यु उसके जैसे और उसके नाम के मनुष्य के हाथ से ही हो। इसने जब बड़ा अत्याचार करना शुरू किया, तब भगवान विष्णु ने इसी नाम से अवतार लेकर के इसको मारा था। इस अवतार के लेने का यह दूसरा कारण है।

हिरण्यक्ष, हिरण्याक्ष [हिरण्याक्ष] २३, २७ ५४

हिरण्यकश्यपु का भाई। कश्यप की स्त्री दिति इसकी माता थी। पूर्व जन्म में दोनों भाई भगवान् विष्णु के द्वारपाल जय और विजय थे। सनत्कुमारों के शाप से राक्षस हुए। हिरण्याक्ष पृथ्वी को लेकर पाताल की ओर भागा जा रहा था तब भगवान् विष्णु ने वाराह अवतार लेकर इसका वध किया और पृथ्वी का उद्धार किया।

॥ ॐ शिव

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	द्रव	अशुद्ध	शुद्ध
६	२	६	परणीपर	धरणीधर
६	३		विछुटे	विछुटे
६	१४	११	कपित	कपिस
८	१०	१५	लाहि	नहि
१०	१६	२१	देत	दंत
१२	४	२५	महारांण	।
१६	५		होगये । मोर	होगये मोर
१६	अंतिम	३८	पचाल	पक्षाळ
१७	२	३८	तदो	तदी
१७	१५	४०	मद	जद
१७	२०	४१	पडयो	पड्यो
१९	१६	४४	गानव	मानव
२०	१६		निमित्ति बनाया	निमित्त बनाया ।
३३	अंतिम	८०	विघूमण	विघूसण
३४	१३	८२	नार	नाहं
३५	१५	८४	प्रघुम्न	प्रद्युम्न
३६	३	८६	प्रतरुय	प्रतक्ख

पृष्ठ	पंक्ति	छंद	अशुद्ध	शुद्ध
१०२	१०	२५५	अवेखिण	अघै खिण
१०२	१४		आकाश को	आकाश (स्वर्ग) को
१०२	१८	२५६	मूभ	मूभ
१०९	९-१०	२६२	आप कल्याण से रहित हैं	आप निश्कल (=अकल्नीय -अगम्य) हैं,
१११	१९	२६८	ओत-प्रोत हुए हैं।	ओत-प्रोत हुए हुए हैं।
१२२	११	२९१	जडयो	जड्यो
१२४	१८	२९६	तेज-प्रचण्ड	तेज-प्रपुञ्ज
१२९	१८	३०९	सामुहो	सामुहौ
१३५	१२	३२४	चोतार	चौतार
१३५	१६	३२५	अनरस	अन रस
१३६	८	३२७	धन्या	धरया
१३९	१	३३५	अपराधो	अपराधी
१४३	२	३४९	कहे	कहै
१४३	६	३५०	ऊ घे	ऊघै
१४४	५	३५१	रूपा	रूपी
१४६	८	३५७	पाप ाह	पाप सह
१४६	१०	३५७	भा	भी
१४८	७	प्रशस्ति	सं० १८०७	स० १७०७

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१	११	झमुको	मुझको
४	२	२२	छोटा	छोटा
५	१	२०	अपने आप	अपने से
५	२	९	अलम	आलम
६	१	अंतिम	उडुगण	उडुगण
६	२	२४	३०२	३०३
७	२	६	३१३	३१४
७	२	१९	करने से हो	करने से ही
८	१	४	२३०	२३१
८	१	१७	करण-सघार	करण-सघार
८	२	४	१०	१०२
८	२	१८	१८८	१८९
९	१	१२	२३७	२३८
९	२	२५	१८८	१८९
१०	१	१२	३२५	३२६
१०	२	९	३३८	३३९
११	१	६	२६०,३१५	२६१ ३१६
११	२	१४	१४	१५
१५	२	९	२६४	२६५
१६	१	१९	३४२	३४३

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४	१	११	भमुको	मुझको
४	२	२२	छोटा	छोटा
५	१	२७	अपने आप	अपने से
५	२	९	अलम	आलम
६	१	अंतिम	उड्डगण	उडुगण
६	२	१४	३०२	३०३
७	२	६	३१३	३१४
७	२	१९	करने से हो	करने से ही
८	१	४	२३०	२३१
८	१	१७	करण-सघार	करण-सघार
८	२	४	१०	१०२
८	२	१८	१८८	१८९
९	१	१२	२३७	२३८
९	२	२५	१८८	१८९
१०	१	१२	३२५	३२६
१०	२	९	३३८	३३९
११	१	६	२६०,३१५	२६१,३१६
११	२	१४	१४	१५
१५	२	९	२६४	२६५
१६	१	१६	३४२	३४३

पृष्ठ	कालम	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६	१	६	परवाळ	परवाळँ
२६	२	२०	रचना का	रचना की
२६	२	२१	३०५	३०६
३०	१	११	२६०, १६२	१६२, २६१
३०	२	४	३५८	३५९
३१	१	१०	३२४	३२७
३१	१	२२	भणे भण	भणो भण
३१	१	२४	२५८	२५९
३१	२	५	३०५	३०६
३२	२	२४	२५५	२५६
३२	२	२५	२६८	२६९
३३	१	५	२६८	२६९
३३	१	२४	प्रवत्त	प्रवर्त्तं
३३	२	१०	महम्माया	महम्माय
३४	१	८	मनुष्यों का	मनुष्यों को
३५	१	८	मा	मो
३५	२	१५	२५७	२५८
३६	२	१	३०३	३३०
४०	१	२५	१८७	१८८
४१	२	१३	१८७	१८८
४१	२	२५	पदापूरक	पादपूरक